राजस्थान में हिन्दी के हस्त लिखित ग्रन्थों की खोज

(चतुर्थ भाग)

लेखकः-

अगरचन्द नाहटा

साहित्य-संस्थान

राजस्थान विश्व विद्यापीठ

उदयपुर (राजस्थान)

प्रथम संस्करण] सन् १९५४ [मूल्य ५)

प्रकाशकीय निवेदन

राजस्थान में प्राचीन साहित्य, लोक साहित्य, इतिहास एवं कला विषयक प्रचुर सामग्री यत्र-तत्र बिखरी हुई है। आवश्यकता है, उसे खोज कर संग्रह और संपादित करने की। राजस्थान विश्व विद्यापीठ (तत्कालीन हिन्दी विद्यापीठ) उदयपुर ने इस आवश्यकता को अनिवार्य अनुभव कर विक्रम सं० १९९८ में "साहित्य-संस्थान" (उस समय प्राचीन साहित्य शोध संस्थान) की स्थापना की और एक योजना बनाकर राजस्थान की इस साहित्यिक, सांस्कृतिक और सामाजिक निधि को एकत्रित करने का काम हाथ में लिया। योजना के अनुसार "साहित्य-संस्थान" के अंतर्गत विभिन्न प्रवृत्तियाँ निम्न छः स्वतन्त्र विभागों में विकसित हो रही हैं:— (१) प्राचीन साहित्य विभाग, (२) लोक साहित्य विभाग, (३) पुरातत्व विभाग, (४) नव साहित्य-सृजन विभाग, (५) अध्ययन गृह और संग्रहालय विभाग एवं, (६) सामान्य विभाग।

१—'साहित्य-संस्थान' द्वारा सर्व प्रथम राजस्थान में यत्र तत्र बिखरे हुए हस्त-लिखित हिन्दी के ग्रंथों की खोज और संग्रह का काम प्रारंभ किया गया। प्रारंभ में विद्वानों को इस प्रकार के ग्रंथालयों को देखने में बड़ी कठिनाइयां उठानी पड़ी। राजकीय पुस्तकालय, जागीरदारों के ऐसे संग्रहालय एवं जहाँ भी ऐसी पुस्तकें थीं, देखने नहीं दी जाती थी, धीरे २ इसके लिये बातावरण बनाकर काम कराया जाने लगा। सबसे पहले साहित्य-संस्थान ने पं० मोतीलालजी मेनारिया द्वारा सम्पादित "राजस्थान में हिन्दी के हस्त लिखित ग्रन्थों की खोज प्रथम भाग, प्रकाशित कराया और उसके बाद बीकानेर के प्रसिद्ध विद्वान श्री अगरचंद नाहटा द्वारा सम्पादित उक्त ग्रन्थ का दूसरा भाग छपवाया, तथा श्री उदयसिंहजी भटनागर से तृतीय

भाग सम्पादित करा प्रकाशित कराया,एवं प्रस्तुत चतुर्थभाग श्री अगरचंदजी द्वारा संपादित किया गया और संस्थान द्वारा प्रकाशित करवाया है; जो आपके हाथ में है। इसी प्रकार पांचवा और छठा भाग भी क्रमशः श्री नाथूलालजी व्यास एवं श्री डॉ० भोलाशङ्करजी व्यास द्वारा सम्पादित किये जा चुके हैं। इनका प्रकाशन शीघ्र ही किया जाने वाला है।

प्राचीन साहित्य विभाग में हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज के अतिरिक्त १८००० राजस्थानी प्राचीन चारण गीत विभिन्न विषयों के एकत्रित किये जा चुके हैं।

२-लोक साहित्य विभाग द्वारा हजारों कहावतें, लोक गीत, मुहावरे, लोक-कहानियां, बात-ख्यात, पहेलियाँ, बैठकों के गीत आदि संग्रह किये जा चुके हैं। पं० लक्ष्मीलालजी जोशी द्वारा सम्पादित-मेवाड़ी कहावतें, श्रीरतनलालजी मेहता द्वारा सम्पादित मालवी कहावतें पुस्तक रूप में प्रकाशित की जा चुकी है। लोक साहित्य के अंतर्गत श्री जोधसिंहजी मेहता द्वारा सम्पादित "आदि निवासी भील" भी पुस्तक रूप में प्रकाशित हो चुकी है तथा "भीलों की कहावतें एवं भीलों के गीत भी इसी विभाग के अंतर्गत प्रकाशित किये जा चुके हैं। "भीलों के गीत" नामक दो पुस्तकें, लोक वार्ताओं के दो संग्रह प्रेस कॉपी के रूप में तैयार हैं। आर्थिक सुविधा होते ही इन्हें प्रकाशित करा दिया जायगा।

३-पुरातत्व विभाग के अन्तर्गत पट्टे, परवाने, ताम्रपत्र, और ऐतिहासिक महत्व के अन्य कागजे पत्रों का संग्रह किया जाता है। प्राचीन मूर्तियाँ, सिक्के, शिलालेख, चित्र तथा अन्य कलाकृतियाँ एकत्रित की जाती हैं। इनमें अच्छी सामग्री एकत्रित कर ली गई हैं।

४-नव साहित्य-सृजन विभाग से अब तक तीन पुस्तकों का प्रकाशन किया जा चुका है। पं० जनार्दनरायजी नागर द्वारा लिखित "आचार्य चाणक्य" नाटक, पंडित सन्हैयालाल ओझा द्वारा रचित "तुलसीदास" ब्रजभाषा काव्य, एवं श्री हुक्म-राज मेहता द्वारा लिखी गई "नया चीन" आदि पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। अन्य महत्व पूर्ण पुस्तकें अधिकारी विद्वानों द्वारा लिखवाई जा रही हैं।

५-अध्ययन गृह और संग्रहालय विभाग में अबतक १२०० हस्तलिखित महत्व-पूर्ण पुस्तकें एवं २२०० मुद्रित ग्रन्थ एकत्रित किये जा चुके हैं। यह धीरे २ एक विशाल संग्रहालय का रूप ले सकेगा ऐसी आशा है।

६-सामान्य विभाग के अंतर्गत राजस्थानी के प्रसिद्ध महाकवि श्री सूर्यमल की स्मृति में "सूर्यमल आसन" और राजस्थान के सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ तथा पुरातत्ववेत्ता स्व० डॉ० गौरीशङ्कर हीराचंद ओझा की पुण्य स्मृति में "ओझा आसन" स्थापित किये गये हैं। इन आसनों से प्रति वर्ष सम्बन्धित विषयों पर अधिकारी विद्वानों के तीन भाषण समायोजित किये जाते हैं और उन्हें पुस्तकाकार प्रकाशित किया जाता है। सूर्यमल आसन से अब तक डॉ० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, नरोत्तमदास स्वामी, अगरचंद नाहटा, तथा रा० ब० राम देवजी चोखानी के भाषण कराये जा चुके हैं, और डॉ० चाटुर्ज्या के भाषणों की "राजस्थानी भाषा" नामक पुस्तक 'संस्थान' से प्रकाशित हो चुकी है।

'ओझा आसन' से प्रसिद्ध इतिहास वेत्ता सीतामऊ के महाराज कुमार डॉ० रघुबीरसिंह जी के तीन भाषण 'पूर्व आधुनिक राजस्थान' विषय पर हो चुके हैं और यह पुस्तक प्रकाशित की जा चुकी है। दूसरे अभिभाषक डॉ० दशरथ शर्मा थे; जिनके भाषण शीघ्र ही प्रकाशित होने वाले हैं। श्री ओझाजी द्वारा लिखित निबन्ध भी "ओझा निबन्ध संग्रह" भाग १, २, ३, ४, प्रकाशित कर दिये हैं।

साहित्य-संस्थान से शोध सम्बन्धी एक त्रैमासिक "शोध-पत्रिक" श्री डॉ० रघुबीरसिंह जी, श्री अगरचंद नाहटा, श्री कन्हैयालाल सहल, एवं श्री गिरिधारीलाल शर्मा के सम्पादन में प्रकाशित होती है। हिन्दी के समस्त शोध-विद्वानों का सहयोग इस पत्रिका को प्राप्त है, इसलिये यह शोध जगत में अपना महत्व पूर्ण स्थान बना चुकी है।

इस प्रकार साहित्य-संस्थान अपनी बहुमुखी कार्य योजना द्वारा राजस्थान के बिखरे हुए साहित्य को एकत्रित कर प्रकाश में लाने का नम्र प्रयत्न कर रहा है लेकिन यह काम इतना व्यय और परिश्रम साध्य है कि कोई एक संस्था इसे पूरा करना चाहे तो असम्भव है। हमारे देश की प्राचीन साहित्यिक, सांस्कृतिक और सामाजिक परम्पराओं तथा चिन्तन स्रोतों को सदैव गतिशील एवं अमर बनाये रखना है तो इस काम को निरन्तर आगे बढ़ाना होगा। देश के धनिमानी सेठ-साहुकारों, राजा-महाराजाओं, जागीर दारों तथा जमीदारों को ऐसे शुभ सरस्वती के यज्ञ में सहायता एवं सहयोग देना ही चाहिये। राजस्थान. और भारत

के विद्वानों, विचारकों और साहित्यकारों का इस प्रकार के शोध-पूर्ण कार्यों की ओर अधिकाधिक प्रवृत्त होना आवश्यक है।

साहित्य-संस्थान, हिन्दी के आदि ग्रंथ "पृथ्वीराज रसौ" का प्रामाणिक संस्करण अर्थ और भूमिका सहित "प्रथम भाग" प्रकाशित कर चुका है तथा द्वितीय भाग प्रेस कॉपी के रूप में तैयार है। "रासौ" का सम्पादन-कार्य इस विषय के मर्मज्ञ विद्वान श्री कविराव मोहनसिंह, उदयपुर कर रहे हैं। इसके प्रकाशन से हिन्दी साहित्य की एक ऐतिहासिक कमी की पूर्ति होगी।

आशा है विद्वानों, कलाकारों, और धनी मानी सज्जनों द्वारा संस्थान को इस कार्य में पूरा सहयोग प्राप्त होगा। इसी आशा के साथ—

विक्रमी सं० २०१२
गुरु पूर्णिमा

गिरिधारीलाल शर्मा
अध्यक्ष
साहित्य-संस्थान

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य बहुत समृद्ध एवं विशाल है। गत ५०० वर्षों से तो निरन्तर बड़े वेग से उसकी अभि वृद्धि हो रही है। विशेषतः सम्राट अकबर के शासन समय से तो विविध विषयक हिन्दी साहित्य बहुत अधिक सृजित हुआ है। १८ वीं शताब्दी में सैकड़ों कवियों ने हिन्दी साहित्य की सेवा कर सर्वांगीण उन्नति की। हिन्दी भाषा मूलतः मध्य देश की भाषा होने पर भी उसका प्रभाव बहुत दूर २ चारों और फैला। हिन्दू व मुसलमान, संत एवं जनता सभी ने इसको अपनाया। फलतः हिन्दी का प्राचीन साहित्य बहुत विशाल हैं व अनेक प्रदेशों में बिखरा हुआ है। गत ५५ वर्षों से हिन्दी साहित्य की शोध का कार्य निरन्तर चलने पर भी वह बहुत सीमित प्रदेश व स्थानों में ही हो सका है। अतएव अभी हजारों ग्रन्थ और सैंकड़ों कवि अज्ञात अवस्था में पड़े हैं उनकी शोध की जाकर उन्हें प्रकाश में लाना और हस्तलिखित प्रतियों की सुरक्षा का प्रयत्न करना प्रत्येक हिन्दी प्रेमी का परमावश्यक कर्तव्य है।

हिन्दी-साहित्य का वृहद् इतिहास अब तैयार होने जा रहा है। उसमें अभी तक जो शोध कार्य हुआ है उसका तो उपयोग होना ही चाहिए, साथ ही शोध के अभाव में अभी जो उल्लेखनीय सामग्री अज्ञात अवस्था में पड़ी है उसकी खोज की जाकर उसका उल्लेख होना ही चाहिए अन्यथा वह इतिहास अपूर्ण ही रहेगा। अज्ञात सामग्री के प्रकाश में आने पर अनेकों नवीन तथ्य प्रकाश में आयेंगे बहुत सी भूल भ्राँतियां व धारणाएं दूर हो सकेंगी। अतएव हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों के शोध का कार्य बहुत तेजी से होना चाहिए, केवल सरकार के भरोसे बैठे न रह कर हर प्रदेश की संस्थाएं एवं हिन्दी प्रेमियों को इस ओर ध्यान देकर, जो अज्ञात कवि और ग्रन्थ उनकी जानकारी में आयें, उन्हें प्रकाश में लाने का प्रयत्न करना चाहिए।

के विद्वानों, विचारकों और साहित्यकारों का इस प्रकार के शोध-पूर्ण कार्यों की ओर अधिकाधिक प्रवृत्त होना आवश्यक है।

साहित्य-संस्थान, हिन्दी के आदि ग्रंथ "पृथ्वीराज रसौ" का प्रामाणिक संस्करण अर्थ और भूमिका सहित "प्रथम भाग" प्रकाशित कर चुका है तथा द्वितीय भाग प्रेस कॉपी के रूप में तैयार है। "रासौ" का सम्पादन-कार्य इस विषय के मर्मज्ञ विद्वान श्री कविराव मोहनसिंह, उदयपुर कर रहे हैं। इसके प्रकाशन से हिन्दी साहित्य की एक ऐतिहासिक कमी की पूर्ति होगी।

आशा है विद्वानों, कलाकारों, और धनी मानी सज्जनों द्वारा संस्थान को इस कार्य में पूरा सहयोग प्राप्त होगा। इसी आशा के साथ—

विक्रमी सं० २०१२
गुरु पूर्णिमा

गिरिधारीलाल शर्मा
अध्यक्ष
साहित्य-संस्थान

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य बहुत समृद्ध एवं विशाल है। गत ५०० वर्षों से तो निरन्तर बड़े वेग से उसकी अभि वृद्धि हो रही है। विशेषतः सम्राट अकबर के शासन समय से तो विविध विषयक हिन्दी साहित्य बहुत अधिक सृजित हुआ है। १८ वीं शताब्दी में सैकड़ों कवियों ने हिन्दी साहित्य की सेवा कर सर्वांगीण उन्नति की। हिन्दी भाषा मूलतः मध्य देश की भाषा होने पर भी उसका प्रभाव बहुत दूर २ चारों और फैला। हिन्दू व मुसलमान, संत एवं जनता सभी ने इसको अपनाया। फलतः हिन्दी का प्राचीन साहित्य बहुत विशाल हैं व अनेक प्रदेशों में बिखरा हुआ है। गत ५५ वर्षों से हिन्दी साहित्य की शोध का कार्य निरन्तर चलने पर भी वह बहुत सीमित प्रदेश व स्थानों में ही हो सका है। अतएव अभी हजारों ग्रन्थ और सैंकड़ों कवि अज्ञात अवस्था में पड़े हैं उनकी शोध की जाकर उन्हें प्रकाश में लाना और हस्तलिखित प्रतियों की सुरक्षा का प्रयत्न करना प्रत्येक हिन्दी प्रेमी का परमावश्यक कर्तव्य है।

हिन्दी-साहित्य का वृहद् इतिहास अब तैयार होने जा रहा है। उसमें अभी तक जो शोध कार्य हुआ है उसका तो उपयोग होना ही चाहिए, साथ ही शोध के अभाव में अभी जो उल्लेखनीय सामग्री अज्ञात अवस्था में पड़ी है उसकी खोज की जाकर उसका उल्लेख होना ही चाहिए अन्यथा वह इतिहास अपूर्ण ही रहेगा। अज्ञात सामग्री के प्रकाश में आने पर अनेकों नवीन तथ्य प्रकाश में आयेंगे बहुत सी भूल भ्राँतियां व धारणाएं दूर हो सकेंगी। अतएव हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों के शोध का कार्य बहुत तेजी से होना चाहिए, केवल सरकार के भरोसे बैठे न रह कर हर प्रदेश की संस्थाएं एवं हिन्दी प्रेमियों को इस ओर ध्यान देकर, जो अज्ञात कवि और ग्रन्थ उनकी जानकारी में आयें, उन्हें प्रकाश में लाने का प्रयत्न करना चाहिए।

राजस्थान ने अपने प्रान्त की मरु-राजस्थानी भाषा में विशाल साहित्य-सृजन करने के साथ हिन्दी-साहित्य की भी बहुत बड़ी सेवा की है। यहाँ के राजाओं, राज्याश्रित कवियों, संतों, जैन विद्वानों ने हजारों छोटी-मोटी रचनाएं हिन्दी में बनाकर हिन्दी साहित्य की समृद्धि में हाथ बंटाया है। उनकी उस सेवा का मूल्यांकन तभी हो सकेगा जब कि राजस्थान के हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों की भली भाँति शोध की जाकर उनका विवरण प्रकाश में लाया जायगा।

राजस्थान में हस्तलिखित प्रतियों की संख्या बहुत अधिक है। क्योंकि साहित्य संरक्षण की दृष्टि से राजस्थान अन्य सभी प्रान्तों से उल्लेखनीय रहा है। यहाँ के स्वातंत्र्य प्रेमी वीरों ने विधर्मियों से बड़ा लोहा लिया और अपने प्रदेश को सांस्कृतिक, धार्मिक और साहित्यिक हीनता से बचाया। पर गत १००-१५० वर्षों में मुसलमानी साम्राज्य के समय से भी अधिक यहाँ के हस्तलिखित साहित्य को धक्का पहुंचा। एक ओर तो अन्य प्रान्तों व विदेशों में यहां की हजारों हस्तलिखत प्रतियां कोड़ी के मोल चली गई दूसरी ओर मुद्रण युग के प्रभाव व प्रचार और शिक्षण की कमी के कारण उस साहित्य के संरक्षण की ओर उदासीनता ला दी। फलतः लोगों के घरों एवं उपाश्रयों आदि में जो हजारों हस्तलिखित प्रतियाँ थी वे सर्दी व उदेयी के कारण नष्ट हो गई। उससे भी अधिक प्रतियाँ रद्दी कागजों से भी कम मूल्य में बिक कर पूड़ियाँ आदि बांधने के काम में समाप्त हो गई। फिर भी राजस्थान में आज लाखों हस्तलिखित प्रतियाँ यत्र तत्र बिखरी पड़ी थी है, जिनका पता लगाना भी बड़ा दुरूह कार्य है। राजकीय संग्रहालय एवं जैन ज्ञान भंडार ही अधिक सुरक्षित रह सके हैं, व्यक्तिगत संग्रह बहुत अधिक नष्ट हो चुके हैं। जैन-ज्ञान-भंडारों में बहुत ही मूल्यवान जैन जैनेत्तर विविध विषयक विविध भाषाओं के ग्रन्थ सुरक्षित है। हिन्दी की जननी अपभ्रंश भाषा का साहित्य, सबसे अधिक जैनों का ही है और राजस्थान के जैन-ज्ञान-भण्डारों में वह बहुत अच्छे परिमाण में प्राप्त है। आमेर, जयपुर और नागौर के दिगम्बर भंडार इस दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। अभी २ इन भंडारों से पचासों अज्ञात अपभ्रंश रचनाएं जानने में आई। हिन्दी के जैन ग्रंथों के भी इन भंडारों से जो सूची पत्र बने उन से बहुत सी नवीन जानकारी मिली है। हर्ष की बात है कि महावीरजी तीर्थ क्षेत्र कमेटी की ओर से आमेर, और जयपुर के दिगम्बर सरस्वती भंडारों की सूची के दो भाग और प्रशस्ति संग्रह का एक

भाग प्रकाशित हो चुका है। सूची का तीसरा भाग भी तैयार होने की सूचना मिली है।

राजकीय संग्रहालयों में से अनूप संस्कृत लाइब्रेरी के हस्तलिखित संस्कृत प्रतियों की सूचियों के पांच भाग और छः भाग राजस्थानी ग्रंथों की सूची के प्रकाशित हो चुके हैं। यहाँ हिन्दी ग्रंथों की सूची भी छपी हुई वर्षों से प्रेस में पड़ी है पर खेद है वह अभी तक प्रकाशित न हो पाई। उदयपुर के सरस्वती भंडार का सूची पत्र छप ही चुका है और अलवर के संग्रह की विवरणात्मक सूची बहुत वर्षों पूर्व प्रकाशित हुई थी। अन्य किसी राजकीय संग्रहालय के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूचि प्रकाशित हुई जानने में नहीं आई। राजकीय संग्रहालयों में से जयपुर-पोथी खाना तो अपने विशाल संग्रहालय के कारण विख्यात है ही पर अभी तक उसकी सूची छपने की तो बात दूर, अभी उसकी बन भी नहीं पाई। हिन्दी के हस्तलिखित प्रतियों की दृष्टि से यह संग्रहालय बहुत ही मूल्यवान होना चाहिए। इस दृष्टि से दूसरा महत्वपूर्ण संग्रह कांकरोली के विद्याविभाग का है। उसकी सूची तो बन गई है पर अभी तक प्रकाशित नहीं हुई।

श्वेताम्बर जैन भंडारों की संख्या राजस्थान में सबसे अधिक हैं पर सूची केवल जैसलमेर के भंडार की ही प्रकाशित हुई थी। मुनि पुन्यविजयजी ने वहाँ के भंडार को अब बहुत ही सुव्यवस्थित करके नया विवरणात्मक सूची पत्र तैयार किया है जो शीघ्र ही प्रकाशित होगा। इसके अतिरिक्त ओसियां के जैन ग्रंथालय के हस्तलिखित ग्रंथों की एक लघु सूची बहुत वर्षों पूर्व छपी थी अन्य किसी भी राजस्थानी श्वेताम्बर भंडार की सूची प्रकाशित हुई जानने में नही आई। राजस्थान के जैन-ज्ञान-भण्डारों की नामावली में मरू भारती वर्ष १, अंक १ में प्रकाशित कर ही चुका हूँ।

राजस्थान में संत संप्रदाय के अनेकों मठ व गुरुद्वारे आदि हैं उनमें सांप्रदायिक साहित्य की ही अधिकता है। राजस्थान के संतों ने हिन्दी की बहुत बड़ी सेवा की है अतः इन संग्रहालयों के हस्तलिखित प्रतियों की शोध भी हमें बहुत नवीन जानकारी देगी। अभी तक केवल दादू-विद्यालय के कुछ हस्तलिखित प्रतियों की सूची संतवाणी पत्र के दो अंकों में निकली थी। इसके अतिरिक्त अन्य किसी संत संग्रहालय की सूची प्रकाश में नहीं आई।

राजस्थान विश्व विद्यापीठ उदयपुर ने राजस्थान के हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों के विवरण का प्रकाशन कार्य हाथ में लेकर बहुत ही आवश्यक उपयोगी कार्य किया है। अभी तक इस विवरण संग्रह के तीन भाग प्रकाशित हो चुके है और चौथा यह पाठकों के हाथ में है। प्रथम भाग का संकलन श्री मोतीलाल मेनारिया और तीसरे भाग का श्री उदयसिंह भटनागर ने किया है। प्रथम भाग के प्रकाशन के साथ ही मैंने यह विवरण संग्रह का कार्य हाथ में लिया था और केवल अज्ञात हिन्दी ग्रन्थों का विवरण ही छांटे गये तो उनकी संख्या ५०० के करीब जा पहुँची। अतः उन्हें दो भागों में विभाजित करना पड़ा, जिनमें से पहला भाग सं० २००४ में प्रकाशित हुआ जिसमें १ नाममाला, २ छन्द, ३ अलंकार, ४ वैद्यक ५ रत्न परीक्षा, ६ संगीत, ७ नाटक ८, कथा, ९ ऐतिहासिक काव्य, १० नगर वर्णन, ११ शकुन सामुद्रिक ज्योतिष स्वरोदय रमल, इन्द्रपाल १२ हिन्दी ग्रन्थों की टीकाएँ। इन १२ विषयों के १८६ ग्रंथों का विवरण प्रकाशित हुए थे। सात वर्ष बीत जाने पर इस ग्रन्थ का आगे का भाग प्रकाशित हो रहा है इसमें ११ विषयों के हिन्दी ग्रन्थों का विवरण है और तत्पश्चात् इस भाग की पूर्ति के साथ पूर्ववर्ती भाग की पूर्ति उन ३ विषयों के नवीन ज्ञात ग्रन्थों के विवरण देकर की गई है। इस भाग के विषयों की नामावली इस प्रकार है:—

१ पुराण, २ रामकथा, ३ कृष्ण काव्य, ४ संत साहित्य, ५ वेदान्त ६ नीति, ७ शतक, ८ बावनी, बारखड़ी बत्तीसी, ९ अष्टोत्तरी-छत्तीसी, पचीसी आदि १० जैन साहित्य, ११ बारहमासा। इन विषयों के विवरण लिये गये ग्रन्थों की संख्या क्रमशः १५, ६, १६-१, १५,११-२,१०-१,१०-२, २०-३, ४,२३-५४,२० हैं, इस प्रकार कुल २१३ ग्रंथों का विवरण है तत्पश्चात् पूर्व प्रकाशित द्वितीय भाग के ४८ ग्रन्थों का विवरण है। कुल २६१ ग्रंथों के विवरण इस ग्रंथ में दिये गये है। अनुक्रमणिका से यह स्पष्ट ही है। हिन्दी साहित्य में किस किस विषय के कितने प्राचीन ग्रंथ है इसकी जानकारी के लिये विवरण का विषय विभाजन कर दिया गया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में लिये गये विवरण बीकानेर, जयपुर, जैसलमेर, रतननगर, चूरू, भीनासर, मथानिया, चित्तौड़ आदि स्थानों के ३१ संग्रहालयों की प्रतियों के हैं। उनकी सूचि इस प्रकार है:—

१ बीकानेर—१ अनूप संस्कृत लाइब्रेरी, २ अभय जैन ग्रन्थालय, ३ मोतीचंदजी खजान्ची संग्रह, ४ जिन चारित्र सूरि संग्रह, ५ स्वामी नरोत्तमदाजी का संग्रह ६ बृहद् ज्ञान भंडार (यह भी वृहद ज्ञान भंडार का ही एक विभाग है।) गोविन्द पुस्तकालय, ६ स्व० कविराज सुखदानजी चारण संग्रह, १० जयचन्द्जी भंडार, ११ मानमलजी कोठारी संग्रह, १२ सेठिया जैन ग्रन्थालय, १३ यति मोहनलालजी १४ आचार्य शाखा भण्डार १५ राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट १६ महो० रामलाल जी संग्रह, १७ मानमलजी कोठारी संग्रह।

२ भीनासर—१ स्व० यति सुमेरमलजी का संग्रह,

३ जयपुर, १ राजस्थान पुरातत्त्व मंदिर लाइब्रेरी ४ रतननगर १ श्री काशीराम शर्मा का विद्याभवन संग्रह, ५ राजुलदेशर कंवला गच्छीय यतिजी की एक प्रति ५ चूरू सुप्रसिद्ध सुराणा लाइब्रेरी।

जैसलमेर—१ बड़ा ज्ञान भण्डार, २ लोकागच्छ उपासरा, ३ साह धनपतजी का संग्रह, ४ पति डुँगरसी भण्डार (का एक पत्र गुटका)।

८ चित्तौड़—यति बालचन्दजी का संग्रह।

६ मथानियां—श्री सीतारामजी लालस का संग्रह।

१० कोटा—उपाध्याय विनय सागरजी संग्रह जो पहिले हमारे यहाँ था अब कोटा में स्थापित किया है।

११ आमेर—यह दिगम्बर भट्टारकजी का संग्रह है। इसकी सूची प्रकाशित हो चुकी है।

१२—मुनि कांति सागरजी का संग्रह जो उनके पास देखा गया था।

इनमें से अनूप संस्कृत लाइब्रेरी, हमारे एवं खजान्ची संग्रहादि में और भी ही अज्ञात हिन्दी ग्रंथ हैं जिनका विवरण ग्रंथ विस्तार भय से नहीं दिया गया।

प्रस्तुत ग्रन्थ में दो सौ से भी अधिक कवियों की उल्लेखनीय[१] रचनाओं का विवरण प्रकाशित है। इनमें से बहुत से कवि अभी तक ज्ञात नहीं थे।

---

१ अभी तक ग्रंथों की शोध हुई उनकी की गई पूरी सूची प्रकाशित नहीं। अतः कुछ ग्रन्थ पूर्व प्राप्त भी आये हैं यद्यपि ऐसे ग्रन्थ हैं बहुत थोड़े ही।

दूसरे भाग की भाँति ग्रन्थ के अन्त में कवि परिचय देने का विचार था पर समयाभाव से नहीं दिया जा सका। कवियों के नामों की सूचि आगे दी ही जा रही है। साथ ही ग्रन्थों के नामों की अनुक्रमणिका भी दी जा रही है। कनक कुशल, कुशलादि कुछ कवियों के और भी कई अज्ञात व महत्वपूर्ण ग्रंथ पीछे से प्राप्त हुए हैं।

इस ग्रन्थ का प्रूफ स्वयं न देख सकने के कारण अशुद्धियाँ अधिक रह गई हैं, जिसका मुझे बड़ा खेद है।

प्रूफ संशोधन विद्यापीठ के विद्वानों द्वारा ही हुआ है इस श्रम के लिये वे धन्यवाद के पात्र है।

इस ग्रंथ के लिये विवरणों के वर्गी करण में स्वामी नरोत्तमदास जी का सहयोग उल्लेखनीय है। श्री बदरीप्रसाद जी साकरिया पुरुषोत्तम मेनारिया आदि अन्य जिन २ सज्जनों से इस ग्रंथ के तैयार करने में सहायता मिली है उन सभी का से आभारी हूँ।

प्रस्तुत ग्रंथ और इसके पूर्व वर्ती मेरे संपादित द्वितीय भाग से यह स्पष्ट है कि जैन विद्वानों ने भी विविध विषयक हिन्दी ग्रंथों के निर्माण में पर्याप्त योग दिया है। हिन्दी जैन साहित्य बहुत विशाल है पर अभी तक हिन्दी साहित्य के इतिहास में उसको उचित स्थान नहीं मिला। दिगम्बर विद्वानों ने तो हिन्दी साहित्य की काफी सेवा की है केवल राजस्थान के जयपुर में ही पचीसों विद्वान हिन्दी ग्रन्थकार हो गये हैं • जिनकी परिचायक लेखमाला जयपुर से प्रकाशित वीरवाणी नामक पत्र में लंबे अरसे तक निकली थी। जयपुर और अमेर के भंडारों के जो सूची प्रकाशित हुई हैं उनमें बहुत से हिन्दी ग्रंथ भी हैं। प्रकाशित संग्रह में अप-भ्रंश ग्रंथों के साथ हिन्दी (राजस्थानी गुजराती सह जैन ग्रन्थों के विवरण भी प्रकाशित हुआ है उनकी ओर विद्वानों का ध्यान आकृष्ट किया जाता है। प्रस्तुत प्रयत्न द्वारा अज्ञात ग्रंथों व कवियों को प्रवाह में लाने का जो प्रयत्न दिया गया है उनका हिन्दी साहित्य के इतिहास में यथोचित उल्लेख हुआ शोध कार्य की प्रेरणा मिली तो मैं उनका प्रयत्न सफल समझूंगा।

कवि नामानुक्रमणिका

विशेष:—

इनके अतिरिक्त संतवाणी संग्रह के गुटकों और पद-संग्रह की प्रतियों में अनेक संतों आदि की रचनाएँ हैं। जिनकी नामावली बहुत लम्बी है और उन रचनाओं का विवरण नहीं लिया गया केवल सूची मात्र देदी गई है। इसलिये इसके रचयिताओं के नाम उपर्युक्त कवि नामानुक्रमणिका में सम्मिलित नहीं कर यहाँ अलग से दिये जा रहे हैं।

———

संतवाणी संग्रह गुटकों में उल्लिखित कवि

———

ग्रन्थ नामानुक्रमणिका

विशेष:-

उपर्युक्त ग्रन्थ नामानुक्रमणिका में संतवाणी-संग्रह के दो गुटकों के ग्रंथों को सम्मिलित नहीं किया गया है। क्योंकि इन ग्रन्थों का विवरण नहीं लिया गया, केवल नामावली ही दी गई है। अतः जिज्ञासुओं को पृष्ठ ४० से ४८ में उन ग्रन्थों के नाम देख लेना चाहिये। उनमें सब्दी, शाखी, पद, वाणी, परचो ही प्रधान है। वैसे कुछ चरित्र आदि ग्रन्थ भी है, जिनमें से कुछ तो काफी प्रसिद्ध है और कुछ प्रकाशित भी हो चुके हैं।

विषयानुक्रमणिका

राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज

(चतुर्थ भाग)

(क) पुराण—इतिहास

(१) अध्यात्म रामायण— रचयिता-माधोदास

..............................जा उथि अत्रये दोउ दसरथ के पुत्र ।

जेष्ठ राम लखमण दी नी ज्व, श्रीदामोदर के सिखि मधुवातव ।

यौ प्राकृत बांधे विश्राम, गायो आपणों जस आपे राम ॥ ८६ ॥

ब्रह्मांड पुराण कौ खंड इह, उत्तर उत्तरकाण्ड रामायण कौ सूत्र ।

वकता सिव श्रोता पारवती, तिनकूं सीताराम प्यारे मति ॥ ९० ॥

बार हौ विश्राम सरब सुख बवै, चौपई तीनि आगली बवैं ।

एक एक अक्षर तणौ उचार, जीवन कूं करै मुकत निरमाय ॥ ९१ ॥

वालमीकि रामायण जपे सलोक सत्रहसै तिनके भये ।

माधवदास कहै जयराम, मेरौ दौड रामायण सन काम ॥ ९२ ॥

संवत् सोलह सै असी एक कार्तिक वदि दसमी सुविवेक ।

आव सुखवरता शशिवार जपो सीताराम जगतकूं आधार ॥ ९३ ॥

इति श्री अध्यात्म रामायणे उत्तरकांडे द्वादसो विश्राम समास;
इति संवत् १७८१ वर्षे पोषमासे कृष्णपखे नवम्यां तिथौ बुधवासरे श्रीश्रीश्री-रामायण लिखितम् ।

ब्राह्मण पारीक व्यास गोलवाल सुन्दरलाल ज्येष्ठात्मज—

शुभं भूयात्

प्रति-पत्र २७० व. १४ अ. ४० साईज १३ × ७

[स्थान- अनूपसंस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर]

(२) **अेकादशी कथा भाषा** । रचयिता- **आनंदराम** । रचना संवत् १७७२ शु०चि०कृ० १० ।

आदि-

गुरु गणेश गिरि कन्यका, गौरी गिरिश गुहेस ।
वासुदेव की याद करि, पद पंकज रजतेश ॥ १ ॥
अेकादशी प्रमुख कथा, कृत की विविध पुरान ।
तिनकी भाषा चौपई, रचयितु सुगम निदान ॥ २ ॥
विविध निदान सुधा उदधि, विक्रमपुर अभिधान ।
राजत तिहां अनूप सुत, नृपमनि नृपति सुजान ॥ ३ ॥
नृप अनूप मंत्री वरण, शेखर बुद्धि निधान ।
नाजर **आनंदराम** यह, विरचत भाषा ज्ञान ॥ ४ ॥
संस्कृत वानि अजान जन, विमल ज्ञान के हेत ।
आनंदराम प्रमान करि, रच्यौ अरथ संकेत ॥ ५ ॥

अन्त-

कथा युधिष्ठिर सौं कह्यौ, व्रत कामद परकार ।
जा सेवत नर कामना, फल पावै विस्तार ॥ १५ ॥
ताको भाषा चौपई, सुख समुझन के हेत ।
नाजर आनंदराम यह, रच्यौ अरथ संकेत ॥ १६ ॥

इति श्री भविष्योत्तर पुराणे, कृष्ण युधिष्ठिर संवादे, पुरुषोत्तम मास कृष्णा कामदा नामैकादशी व्रत कथा भाषा संपूर्ण ।

युग[२] मुनि[७] शैल[७] हिमांशु[१] मिली संवत्सर शुचि मास ।
कृष्णपक्ष दशमी दिनै, भयौ ग्रन्थ परकाश ॥ १ ॥

लेखन काल-संवत् १८७२ वि०

प्रति-गुटकाकार

(२) **कार्तिक माहात्म्य**- रचयिता-कवि द्विजतीर्थ-रचना सम्वत् १७२६ ।

आदि-

मंगल वदन प्रशंन्न सदा, सुख आनंदकारी ।
अेक रदन गज वदन, जाहि सेवत नरनारी ॥
पितु शंकर मा गोर, ताहि कइ लाडु लद (दा) यो ।
तीन लोक के काज, धारि वपु जग में आयौ ॥
गवरीनंद नाम तुम, वेद चारि जसु गाईयो ।
दिजनीरथ ताको भजे, चर्ण कंवल चितु लाइयौ ॥ १ ॥

चौपई

संवतु सतरह छिवीसा, तिथि एकम तह मंघर वीसा ।
सूरज मिश्चक रासहिं आयौ, तब कबीन आनंद बढायौ ॥
गुरु दिनमौ मोको मति आई, सुतो वेद भाषा प्रगटाई ।
आलमगीर राज तहँ कर ही, दुख दानिदु सभहन को हरही ॥
दिसु तीरथ फिरि जाति बखाने, भोज देऊ सभ कोई जाने ।
गुंजामाली गुरु है मेरा, कीवे दरसु परम पदुनेरा ॥
पिता निहालु मेरो कहिए, चार पदारथ निश्चै पईए ॥ ६ ॥

अन्त-

आलमगीर राज सुखदाई, मूलचक्र मो कथा बनाई ।
दिजतीरथ यह कथा बखानी, जइसी मति तैसी कछु नानी ॥
कवि करनी निंदक महा, मनुज न माखे कोई ।
गोविंद चरचा हम करी, चंडीवर दियौ मोहि ॥

इति पद्मपुराणे, कार्तिक महात्म्ये कृष्ण सत्यों संवादे इकोनत्रिंसउध्याय ॥ २९ ॥

लेखनकाल- १८३९ वैं०सु० २ रवि। खरतर कीर्ति विजैं लि०। प्रति-पत्र ४७, पंक्ति १४। अक्षर ३२

[स्थान-जिनचारित्यसूरिसंग्रह]

(४) गजउधर-रचयिता अजितसिंह (१८ वीं शताब्दी)

आदि-

अथ गज उधार ग्रन्थ श्रीजी क्रित लिख्यते।

गाथा

गवरी सुत गणपतं, मन सागर दीजै मो मत्तं ।
तुम्भ पसाय तुरतं, सारंगधर गाऊ सुंडाला ॥ १ ॥
गजमुख गणपत रायं, मागी मुम्भ करो मो भायं ।
गुण राधे वर गायं, पावु' बुद्धि रावलै पसायं ॥ २ ॥
लंबोदर गणपत सुंडाला, एक रदन बहो बुद्धि बिसाला ।
लाल बरण सोहे कर माला, मतवाला तुभ्यो नमः ॥ ३ ॥

दुहा–

अविरल वाणी आपिये, मुम्भ दे अक्खर सार ।
तुम्भ किपा तै मैं कहूँ, हरि गुण ग्रंथ अपार ॥
गणपती तु' ईसगण, गुण दातार गहीर ।
मो मत देहु महेस सुत, उमयासुत वर वीर ॥

अन्त– × × ×

गज उधार यह ग्रन्थ है, धारै चित कर लेत ।
ताकी प्रभु रिच्छा करै, च्यार पदारथ देत ॥
गुण अजीत इण विध कह्यौ, रामकृष्ण निजदास ।
नित प्रत प्रभु के संग रहै, यह मन धरके आस ॥

कलस कवित्र

राज गरीब निवाज जाय प्रहलाद उबारे ।
,, ,, ,, द्रौपदी चीर बधारे ॥
,, ,, ,, कुरंद सुदामा कप्ये ।
,, ,, ,, ध्रुव इव चल कर थप्पेये ॥
गज ग्राह बिन्हे ही तारीया, रीभ्फे खीजे लाछ वर ।
अजमाल चरण वंदन करे, धन तौ लीला चक्रधर ॥ ७६ ॥

इति श्री श्री थी जी क्रित गजउधार ग्रन्थ लिख्यते (समाप्त)

प्रति–गुटकाकार पत्र २६, पं० २२, अ० २२, प्रति कुछ जल से भी जी, भाषा में राजस्थानी का प्रभाव

[स्थान– कुँ० मोतीचन्द्रजी संग्रह]

(५) गजमोक्ष ।

आदि-

अथ गज मोख लिख्यते ।

सुनत सुनावत परम सुख, दूरि होत सब दोष ।
कृष्ण कथा मंगल करण, सुणो सु अब गज मोख ॥ १ ॥

अन्त-

शिव सनकादिक सेसही, पायौ गुणां न पार ।
तोई गुण हरि का गाइये, आपा मति अनुसार ॥
मैं वरण्यौ गजमोख यह आपा मति सुविचारि ।
जहाँ घटि वधि वर्णन कियौ, तहां कवि लेहु सुधारि ॥

लेखनकाल १८ वीं शताब्दी

प्रति-पत्र २, पंक्ति २१, अक्षर ६५ साईज ६ विशेष:-कर्त्ता का नाम एवं पद्य संख्या लिखी हुई नहीं है। पद्य भुजंगी प्रयात भी प्रयुक्त है ।

[स्थान-अभय जैन ग्रन्थालय]

(६) गीता महात्म्य भाषा टीका । रचयिता आनंदराम नाजर ।

(आनंद विलास) रचना सम्वत् १७६१ मि० व० १३ मो०

आदि-

अथ गीता माहात्म्य आनंदराम कृत लिख्यते-

मुकटि लटकि कटिकी लचकि, लसत हियै वनमाल ।
पीत वसन मुरलीधरन, विपति हरन गोपाल ॥
नमि करिकै गिरधरन कै, चरण कमल सुखधाम ।
गीता महातम करत, भाषा आनन्द राम ॥
मनमोहन मनमें वस्यौ, तब उपज्यौ चितचाई ।
गीता महातम करौं, भाषा सरस बनाई ॥
कमध (ज) वंस अवतंस मनि, सकल भूप कुलरूप ।
राज करत विक्रम नगर,, अवनी इन्द्र अनूप ॥
तिहां थाप्यौ परधान थिर, नाजर आनंदराम ।
गीता महातम करत, उर धर गिरधर नाम ॥ ५ ॥

(८) नासकेत पुराण । रचयिता- दयाल । सं० १७३४ फा० सु० ५

अथ नासकेत पुराण लिख्यते

आदि-

दूहा

श्रीगुरु श्रीहरि संत सब, रिष जन नांऊ सीस ।
गुरु गोविंद अरु संत सब, ए विद्या के ईस ॥ १ ॥
विद्वद् जनन सूं वीनती, कविसु बंदु पाय ।
सहस कृत भाषा करूं, हे प्रभु करो सहाय ॥ २ ॥

चौपई

राजा जनमेजय बड भागी, पुनि संग्रह पाप को त्यागी ।
गंगा तटि जज्ञ आरंभ कीयो । द्वादस ब्रष नेम व्रत लीयो ।

अन्त-

नासकेत आख्यान इह, सुत उदालिक विख्यात ।
सदा काल सुमिरण करै, जमके लीक न जात ॥ १२२ ॥
वैसंपायन वरनियौ, नासकेत अतिहास ।
जनमेजय राजा सुनै गंगा तीर निवास ॥ १२३ ॥
सहसकृत श्लोक तैं, सुगम सुभाषा कीन ।
जगनाथ आग्या दई, दयाल सीस धरि लीन ॥ १२४ ॥
घटि वधि अखिर मात्रा, अरहु सुध न होय ।
बाल बुद्धि सम जानि सब, क्षमा करो मुनि सोय ॥ १२५ ॥
सोला उपरि सात सैं, चौपई दोहा जान ।
पंच कवित्त पुनि औ रचिन, नासकेत आख्यान ॥ १२६ ॥
सलोक बत्तीसा गिन करै, संख्या येक हजार ।
पुनि पैंतीसक जानियै, नासकेत विचार ॥ १२७ ॥
संवत् सतरासै भयौ, पुनि ऊपरि चौतीस ।
फागुण सुदि तिथि पंचमी, आख्यौ विस्वा वीस ॥ १२८ ॥
जनदयाल गुरु ग्यान तैं, भाख्यौ गुन उपदेश ।
जो श्रवनन वृत्ति (नीकैं) करैं, ताकौ मिटे संदेश ॥ १२९ ॥

वक्ता मन दिढ़ि राखि कै, कहे ग्रन्थ के वैन ।
सुरता सुनि निश्चै करै, तब ही तिनकूं चैन ॥ १३० ॥

इति श्रीनासिकेतपुराणे ज्ञानभक्ति वैराग्य व्याख्याने पंथसंज्ञावरननाम सप्तदशोध्याय ॥ १७ ॥ ७र्व चौपई स१६, कुल (ग्रन्थ) १०३५ इति श्रीनासकेत ग्रन्थ सम्पूर्ण ।

लेखक-

संवत् अठारह सै सही, वरस तीयासीयो जान ।
वैसाख सुदी २ अखी, दिन वार भोम पुन्न ।
ता दिन पोथी लिखीतु सांडवा मध्ये ।
क्रमण हरदेवजी कवेट पीहाजल ।
वाचे सुणे जा (न्वा) ने राम राम ।

प्रति- पत्र ४४ । पंक्ति १६ । अक्षर २३ । आकार १० × ६॥

[स्थान- विद्याभवन, रतन-नगर]

(६) नासकेतोपाख्यान । (गद्य)

आदि-

अथ श्रीनासकेत कथा लिख्यते-

एक समै श्रीगंगाजी के उपकंठ राजा जनमेजय बैठे हुते। सो मनमें यह उपंजी । होइ आवै तौ यज्ञ कौ आरंभ कीजै । बारह वर्ष की दीक्षा ले बैठो यह उपजी । हे महर्षिश्वर, वैशंपायन महापुरुष ! सर्वशास्त्र के जान दया करिके श्रीभगवानजू की कथा सुनावौ । ज्यों मेरे पाप मोचित होई। मो पर दया करो । तुह्मों श्रीकृष्ण द्वीपायन के शिष्य हो। वैशम्पायन कहतु है। हे राजा जनमेजय, तुम सावधान होई सुणो । तोहि दिव्य कथा पुराण की सुनाऊं जा सुने ते तेरे पाप मोचित होहिं ।

अन्त-

भावे एति बात करै । भावे नासकेत सुने बार बार (बिरावर) ।
फल यह नासकेतु अरू उदालिक मुनि की कथा ।
प्रात उठि एक अध्याय तथा एक श्लोक जू पढ़ै ।
सुनावे ताको जमको डर नांही । अरू किंकरन को डर नांही ।

इति श्रीनासकेतोपाख्याने नासकेत ऋषि संवादे जमपुरी धर्म अधर्म विचारण शुभाशुभ भक्ति जन्य वर्णनम्-नाम अष्टादशोध्यायः । ग्रन्थ श्लोक-६५१

प्रति- १ पत्र ८१ से १४१ । पंक्ति १३ । अक्षर १७ । आकार ५॥ × ५। सं०१७६३ ई०

प्रति- २ पत्र ५ से ५६ । आकार ६॥ × ५

संवत् १७६४ पोष वदी ६ पुस्तक छांगाणी मुरलीधरेण । मूंधड़ा नथमल पुत्र वखतमल वाचनार्थं ।

[स्थान- स्वामी नरोत्तमदासजी का संग्रह]

(१०) पाण्डव विजय—मलूकदास सं० १६१३ चै०शु० १० हुसे जोधपुर

अथ पाण्डव विजय सरोज कृष्ण प्रभाकर लिख्यते ।

आदि-

ब्रह्म निर्वाण, अगम अनादि अनूपं ।
निराकार निरलेप सदा, आनंद सरुपं ।
जहि विभु सत्य प्रकास, चंद रवि सबहि प्रकासत ।
सकल श्रष्टि आधार विस्वति न तै आभासत ।
सुख सिंधु सदा ईस्वर सुखद, विघन हरन मंगल करन ।
अनमंत सदा प्रेरक सकल, करहु कृपा असरन सरन ।

दोहा

गननायक कै नाम तैं विघन होत सब नास ।
करहु अनुग्रह मोहिप (ह) सब मंगल की रास ।

अन्त-

वैण सगाई मात्र रस, कछु न ताहि मध जांन ।
खिमा करहु कविजन सकल, मुहि तुछि बुद्धि पिछान ।
अस्टमास के आसरै, वनतां भयै विनीत ।
ये ते माहि ग्रन्थ यह, पूरण भयौ प्रतीत ।
खैंडापो निज धाम है रामां संत सुधीर ।
सिख थाल (दयाल) ताके सधर, महासुख्य की सीर ।
छस्ल शिष्य पूरन भयो, तहि सिख उरजनदास ।
जाहि समै यह ग्रन्थ भौ, पांडव विजय प्रकास ।

छप्पय

खंडापो निजधाम, संत रामां विसालवर ।
वखतराम तहि सिष्य, भक्ति जहि पर मंत्र उर ।
ता सिष्य तुरसीदास, विसद सुइ गुन के आगर ।
जन डूलै सिख जाहि ताहि को कहियत अनुचर ।
तहि चरन कज रजदास लखि, सुद्दढ़ अंत्र शिव ध्यान धर ।
वर ग्रन्थ येह पांडव विजय, दास मलूक बखांण कर ॥

दोहा

संवत् उगणीसो सरस तेरौ वरष निहार ।
चैत्रमास तिथ दस्मि सुद वर मृगांक है वार ।
मरु देस के बीच में, नगर जौधपुर जान ।
भयौ संपूरन ग्रन्थ यह पंडव विजय प्रमान ॥

सोरठा

अष्टवीस हज्जार भारथ की टीकाकरी अनुपश्लोक उचार ।
संख्या पांडव विजय की मनहर आदस भाव !
औ विराट है उधोग वर भीष्म द्रोण कर्ण सल्य सोप्तिक
लखानिये ।
प्रव्व-सांतिक अनुसासन अस्वमेध आश्रमवास मुद्गल ता महाप्रस्त जांनिये ।
स्रगारोहण सार कह्या अष्टादशाह प्रव सुचत विसाल पंडु विजय प्रमानिये ।
अष्टवीस हज्जर है तास आसै जांनियत अनुष्टप श्लोक सरष संख्या बखांनिये ।

इति श्रीश्रीमत्पुरुोत्तमचरणारविंद कृपामकरन्द बिन्दु: प्रोन्मीलन विवेक नै भुम्न मलूकदास कृत महा भारथ महाधवल पंडवविजय सरोज कृष्ण प्रभाकरे अष्टादसमो श्रुगारोहण प्रव समासिरस्तु । १८ ।

अक्षर श्लोक ८ । उभय सत बोत्तर लखहु श्लोक अनुष्टु (प) विधान, श्रुगारोहण प्रव यह (२७२)

इति श्रीग्रन्थ पंडव विजय सरोज कृष्णप्रभाकरे मलूकदास हित भाषणं जम्बूद्वीपे भरथखंडे मुरधरदेशे नग्र जोधपुर मध्ये संवत् १६ वरष तेरा, मास चैत्र

तिथदसमी चंद्रावार सौ ग्रंथ संपूरण। ल० संवत् १६२८ काति फागण वदि ३० त्रार बुधवार श्रीरस्तु।

पत्र ३६२। पं० ३४। अत्तर ३१। साइज १६॥×१२॥

[स्थान- अनूपसंस्कृत पुस्तकालय]

(११) भगवद्गीता भाषा टीका पद्यानुवाद। र०— मलूकदास लाहौरी सं० १७५१- माघ व० २ रवि।

आदि-

नमो निरंजन त्रिगुण पर, गुणनिधि गोविंदराय।
नमो गुरूडधुज कमल नैन घनस्याम जदुराय।
नमो नमो गुरुदेवकौं पुनि पुनि बारंबार।
नमो नमो सब संत कौ, जिन घर वसत मुरार।
श्रीमुख जो गीता कही. अर्जुनसौं समूझाय।
ताकी भाखा जथामति कहो, कत्रबहरि गुनगाय।
तातपर्जा या ग्रन्थ को, जानत श्री भगवान।
श्लोक श्लोक को अछरार्थ, कहों सुनो जु(सु) सुजान।
गीता के श्लोक सब, सै सात अरु इक जान।
श्रीमुख भाषौ पांचसौ, अरु चौहत्तर आन।
अर्जुन असी दोइ कहे, संजएच चालिस तीन।
एक और कह्यो दो इकु, मिलई धृतराष्ट्र परवीन। ४
संवत् सत्रह मैं वरष, इकावन रविवार।
माधो दुतिया कृष्णपछ, भाषा मति अनुसार। ५
कही मलूक के दास, दास लाहौरी निजु नाम।
जादौ सुत छत्री वरन, रसना पावन काम। ६
अछर घरबढ होय जो, ले हे संत सुधार।
सब संतनके चरणपर, लाहोरी बलिहार। ७
इति श्रीभगवद्गीता भाषा टीका समाप्ता।

संवत् १७८६ वर्षे मिती काती सुदि ११ दिने सोमवारे पं० प्रवर हर्षवल्लभ

लिखी चकेर खार बारा मध्ये।

प्रति- गुटकाकार पत्र ३५ पं० १३ अ० ३४

(इसी गुटके में हिन्दी भाषा में भोतल पुराण भी गद्य में है)

[स्थान- मोतीचंद्रजी खजानची संग्रह]

(१२) भागवत भाषा। रचयिता-हरिवल्लभ। ले० सं० १८५३

आदि-

श्री भागवत भाषा हरिवल्लभ कृत लिख्यते-

आयसु दियौ किसोर जु, कारजु भाषा मैं रची।
(सु) हरिजसु गावन काजु, मोह मति है लची॥
प्रभु कौं करि प्रनांम, भगति तामैं खची।
भव छूटन के काज, जु वलभ-यौं रची॥ १॥
प्रथमहिं प्रथम स्कंद, जु मनमैं आनि कै।
श्लोक समान जू अर्थ, कीयौ मैं बानि कै॥
र हंसत (बह) बादी किसोर भलौ बहु मानिकैं।
हरिवलभ मो मींत, सुनायौ आनि कै॥ २॥
अमृत समान जु भक्ति रस, वल्लभ कीन्हौं बानि।
हरख सुनि जु किसोरजु, लीन्हो बहु सुख मानि॥ ३॥
सुख पायौ जु किसोर जु, भागवत जसु सुनि कोना।
हरिवल्लभ भाषा रची, आप बुधि उनमान॥ ४॥

अन्त-

तातै ह्वै करि एक मन, भगति नाथ भगवान।
नितही सुनिये पूजिये, कहिये, कहिये गुन धरि ध्यान॥१२॥
चौ० कर्मग्रन्थ बंधन निरबरै। को हरजस सौं प्रीति न करे।

इति श्रीभागवते महापुराणे एकादश स्कंधे भाषा टीका संपूर्णं समाप्तम्।

लेखनकाल संवत् १८५३का......मासे कृष्णपक्षे तिथौ षष्टम्यां॥६॥आदित्य-वारे। लिखयतं व्यास जै किसन पोकरण शुभं भवतु। विसनोई साध गंगाराम ताजेजी का शिष्य।

प्रति-पत्र ४८२। पंक्ति १५। अक्षर ४४ से ४५।

[स्थान-सुराणा लाइब्रेरी, चूरू (बीकानेर)]

विशेष-स्कंध ६ और १२ नहीं हैं।

भाण्डारकर ओरियन्टल रिचर्स इन्स्टिट्यूट पूना में इसकी पूर्ण प्रति है, उसके अन्त में निम्नोक्त पद्य है-

अन्त-

परम गूढ भागवत यह, मूरख मति अति हीन।
कहा कहूं निकराय हरि, हो प्रभु प्रेम प्रवीन ॥ २९ ॥
टंडन मथुरादास सुत, श्रीकिसोर बड़भाग।
हो दग जुगल किशोर को, वल्लभ सौं अनुराग ॥ ३० ॥
भाषा श्री भागवत की, तिनकै उपजी चाह।
हरिवल्लभ निज बुद्धि सम, कीनो ताहि निबाह ॥ ३१ ॥
चतुर चतुरभुज को तनय, कमल नैन थिर चित्त।
बंध्यो नेह गुण सो रहै, हरिवल्लभ संग नित्त ॥ ३२ ॥
गुरु की कृपा प्रताप तैं, कविन में सुप्रवीन।
भाषा भागवत की करत, कछु सहाय तिन कीन ॥ ३३ ॥
यह द्वादस भाषा रच्यौ, हरिवल्लभ सज्ञान।
त्रयोदसी अध्याय मैं, आश्रय सहित बखान ॥ ३४ ॥
कविजन सौ विनती करूं, मति मन मानो रीस।
भाषा कृत दूषन जिमें, छमियो मेरे सीस ॥ ३५ ॥
द्वादस स्कंध पूरण भये, हरि किरपा निरधार।
श्लोक गिन्नत या ग्रन्थ के, हैं सब तीस हजार ॥ ३६ ॥
छंद भंग, अक्षर करत, अर्थ विषइ जो होइ।
दूषन तै भूषन करै, कोविद कहिए सोई ॥ ३७ ॥

इति श्री भागवते महापुराणे द्वादश स्कंधे हरिवल्लभ-भाषाकृते त्रयोदसोध्यायः इदं पुस्तकं। ले० संवत् १८२६ असाढ़ सुदी १४ चंद्रवासरे लिखित।

राड़राम ओड पुरामध्ये। लिखईतं महारानी जी लाडकुँवरजी पत्र ७४६

(१३) भीस्म पर्व—रचयिता गंगादास। सं० १६७१

लिख्यते भीस्म पर्व गंगादास कृत।

आदि—

सेवौ आदि पुरुष मनुलाइ, ये हि संवत् उतमा गति पाइ।
पदन्ह घदन्ह मह सो हरि, रहरि मैंसे आगि काठ अह अहई॥
तिस मह तेतुयो अहै समान, यै सुवासु फूल मह जान।

× × ×

अव गनपति प्रनवौ कर जोरि, ये हिते बुधि होइ नहि थोरी।
सरस्वती के सेवा करहु, आदि कुमारी ग्यान मन हरहु।
सारद माता परसनि होइ, सुरनर मुनि सेवै सब कोई।

× × ×

संकर चरन मनावौ, सुमति हि कै मोहि आस।
विस्तर कथा होई जेहि दिन करि गंगादास।
संवत नाम कहा अब चहउ, सोलह से एक हत्तर कहउ।
भादव वदि दसमी बुधवार, हस्तु नखतु दउन विस्तार।
ता दिन मैं यह कथा विचारि, भीस्म पर्व सौ अहै• हरसारी।
वरनत कवि यो पदवा कहइ, राजा दुयोधन तह रहइ।

× × ×

अन्त—

कहु के खाड लगे धर टूटा, कहु के सगी हिए मो फुटा।
कहु के बान टूटिगे पाड, कहु के सीसा गुरीदा का वाडो।
कहु के कटि गाइ मुआ डंडा, कोऊ भारी कीन्ह सतखंडा।

अपूर्ण-गुटकाकार-प्रति ४४, पं० १३ से १६, अ० १० से १३ आकार-४॥″ × ५॥″

[स्थान—अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(१४) भोगलपुराण- लेखनकाल सं० १७६२

आदि-

ओं स्वामी भूमंडल कथं प्रवाण ।
उत्पत्ति षष्ट (ष्टि) का क्यूंकर हुवा वखाण ।
केनी धरती केना आकाश ।
केना मंदिर मेघ कैलास ।

मध्य-

सुमेर पर्वत के दक्षिणे भाग जम्बू असे नाम एक वृक्ष है ।
अरु एक लाख जोजन जम्बू वृक्ष का विस्तार है ।

अन्त-

महाराजा नांही राजा अधर्मी हों हिगे ।
प्रथमी प्रमाण इति कलजुग एते धणीरो निरणो ।

प्रति- पत्र ६ । ले० सं० १७६२

[स्थान- स्वामी नरोत्तमदासजी का संग्रह]

(१५) शिवरात्रि-

आदि-

अथ सीवरात्रिनी पोथी लिख्यते ।
इसवर वरत सांभल चित धरी, जामें पाय जनम ना हरि ।
सुणतां छूटे भवनां पाप, सुणतां सयल टले संताप ।
गणपती प्रणमुं सिद्ध बुध धणी मांगु सुबध दीजो सुख घणी ।
पुजूं अगर कपूर घनसार, वीध सुं अरचुं पूजा अपार ।२।

× × ×

ब्रह्मा पुत्री सारदमाय सुख सेवा करे सुमाय ।
हंसवाहणी मृगलोचणी मात, कासमीर केलास विख्यात ।

× × ×

पुहवी मांडव नगर सुभंग, सोमनाथ तिहां तीरथ गंग ।
वसे नगर ते अति विस्तार, वरण वरण न लाभे पार ।१८।

जेह नगर थी पूरब दिसे सामंतसी एक पारधी बसे ।
तेहना माय बाप डीकरा नाना बालक छोरु छकिरा ।
सतवंती वामे लसनार माणस आठ तणो परिवार ।२९।
नीत उठी आहेडो करे इणि परे पेट घणो दुख भरे ।
केता एकदिवस इणी परे गया, दूसर दिवस परत आलीया ।३०।
तेरस दिवस फागण सोमवार, बीस दिवस फागण सोमवार ।
बीस दिवस चोदस अंधार.................................
इस संजोग लहे नरनार, तेह ना गुण तो अंत न पार ।३१।

प्रति-गुटका-पत्र ३०, पद्य ४४५ के बाद अपूर्ण पं० १२, अ० २५,

[स्थान-मोतीचंद खजानची संग्रह]

(ख) राम-काव्य

(१) अंगद पर्व—रचयिता—लालदास।

अंगद प्रब लिख्यते—

आदि—

पतित उधारण रामु है, रघुनाथ बली।
प्रथम वंदि गुरुचरण, पिता उधो सिर नाऊँ।
साधु कृपा जो होई, राम आणंद गुण गाऊँ।
रावण रामु पावन कथा, सुनोहु चितु समुभाइ ॥ १ ॥

अंगद वचन

रामजी के चरित है सुणि आणंद उर न समाहि।
जामुवंत सुग्रीव हनू, अंगद अधिकारी।
पत्त अठारह जुरे तहां, कपि दल भयो भारी ॥ २ ॥

× × ×

अन्त—

करहु बडाई रामकी, मेरे आगे आयि।

× × ×

द्रिग विसाल धनु धरै, करहि पीतांबर बांधै।
तू प्रचंड के डंड तहां जु असुर सुर साधै ॥६१॥
जो निसपति अति राजई, सूरिज ज्योति प्रगास।
श्री रामचन्द्र उदार राय पर बलि बलि लालादास।

श्री श्री रामचन्द्र चरितु अंगद प्रव समाप्त।

प्रति–गुटकाकार। प्र० ८४॥, पत्र ७५ से ८०, पं० ६, अ० १६, लेखनकाल १८ वीं शताब्दी–

विशेष–इसमें बाल लीला पद्य ४४ कल्याण, जन्म लीला पद्य ६०, सूर श्याम लीला पद्य ५३ कल्याण, सुदामा चरित पद्य ५६, कवलानंद गुरुचरित्र गा० ३७, कल्याण पद्य ६१, अन्त में नरहरि नाम आदि है।

[स्थान–अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर]

(२) **रामचरित्र**–रचयिता रामाधीन–

आदि–

अथ श्री रामचरित्र लिख्यते–

रघुकुल प्रगटे रघुवीरा।

देस देस तै टीकौ आयौ, रतन कनक मणि हीरा।
घर घर मंगल होत बधाये, अति पुरवासिनु भीरा।
आनंद मगन भये सब डोलत. कछुवन सुधी सरीरा।
हाटक बहु लछ लुटायेगो, गयंद हये चीरा।
देत असीस सुर चिर जीवहु, रामचंद रणधीरा।

पद्य ५० के बाद अपूर्ण– पत्र २७, पं० १४, अ० १५, साइज ५॥ × ८॥।

[स्थान-अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(३) **राम विलास**– रचयिता-मु॑० साहिब सिंध। रचना-संवत् १८०८ वै० सु० ३। मरोठ

आदि–

वाग वर्णेहि अत ही अधिक, अवधपुरी के अेन।
कमलनैंन क्रीडा करै, सीता को सुख देन॥

अन्त–

अठारै सै अठोतरै, सुदि तृतीया वैसाख।
रामविलास मरोठ मधि, भलौ रच्यौ सुध भाख॥

इति राम विलास मुहता **साहिब सिंध** कृत संपूर्ण।

प्रति–पत्र २, पद्य ३३,

[स्थान–बृहद्ज्ञान भाण्डार]

(४) **रामायण** । रचयिता–चंद । पद्य-दोहा ५६, छप्पय १, झूलना १, सवैया १०१ । लेखन काल १८ वीं शताब्दी ।

आदि–

गुरु गणेस अरु सारदा, समरे हीत आनंद ।
कछु हकीकत राम की, अरज करत है चंद ॥ १ ॥
आदि अनादि जुगादि है, जाहि जपे सम कोइ ।
रामचरित्र अद्भुत कथा, सुनौ पुन्य फल होइ ॥ २ ॥

अन्त–

पारस न चाहुं पर जीते कोन न धाउ अनदेव कोन धावत कहत हौं सुभाव की ।
चाहु न कुमेर को सुमेर सोनों दान देइ कामना न करो कामधेनु के उपावन की ।
चाहु ना रसाइन जोता मैं तो सोनां होई, राखत न तमा नेक अन्य कै सहाब की ।
जाचबै के काज हाथ ओभता सकल दिसि चंद जीय चाहता हो क्रिपा रघुनाथ की ॥ १५६ ॥

इति श्रीरामायण चन्द्र क्रित संपूर्ण ।

प्रति– पत्र २४ । पंक्ति १० । अक्षर ३३ । आकार ८:×४।

[स्थान– जिनचरित्रसूरि संग्रह]

(५) **रावण मंदोदरी संवाद** । रचयिता– राज (जिनराजसूरि)। रचनाकाल– १७ वीं शताब्दी ।

आदि–

राग–जइतसिरी

आज पीड़ सोचत रमणि गई ।
नायक निपुणइ इधमइं कांजि काहे आणि ठई ॥ १ ॥आ
मेरइ कहिइ विलगि जिन मानउ, हइविल वेलिवई ।
विरारइ काम कह उगे मोकुं, किंनहुं न खबरि दई ॥ २ ॥
सुणीयत हइ गढ़ लंक लयंण कुं, होवत राम तई ।
न कहत डरत राजिसु कोऊ, कनक न बात भई ॥ ३ ॥आ

इति मंदोदरी वाक्य । राग–सामेरी ।

आज पीड सुपनइ खरी डराई ।

जलधि उलंघि कटक लंका गढ, धैर्यउ पडी लड़ाई ॥ १ ॥आ
लूट त्रिकूट हरम सब लूटी, तूटी गढ की खाई ।
लपकि लंगूर कांगुरइ बइठे, फेरी राम दुहाई ॥ २ ॥
जऊ दस सीस वीस भुज चाहइ, तउ तजि नारि पराई ।
राज वदत दुखिहार न टरिहइं,कोटि करऊ चतुराई ॥ ३ ॥

अन्त–

केवल प्रथम पत्र अप्राप्त है। ग्रंथ पदों में होने से सुन्दर संगीतमय है। पर अपूर्ण उपलब्ध है।

प्रति– पत्र १, पंक्ति १५, अक्षर ४० से ४५, साइज ६।।। × ४ एक पत्र और भी मिला है, व एक गुटके में भी कई पद मिले हैं।

[स्थान– अभय जैन ग्रन्थालय]

(६) हनु (मान) दूत । पद्य १०४, रचयिता–पुरुषोत्तम, सं०१७०१ माह व० ६ ।

आदि–

श्रीराम जाके ताके बुधि बढै, जोके ताकै आइ ।
पुरुषोत्तम गहि प्रथम ही, गवरिपूत के पाई ॥ १ ॥
पुरुषोत्तम कवि कपिला, वासी मानिक नंदु ।
कृपा करै परवत–पती, बाज वहादुर चंदु ॥ २ ॥
वांमन वरन हौं सनै दिया कहावतु हौ ।
गोकरन गोतु सब तै अगाऊ को ॥
रामु परदादो दादो गदाधर जानियतु ।
केपिला मैं ठाऊ नाऊ मानिकु पिताऊ को ॥
नंद नीलचंद के करी है कृपा वाजचंद ।
वाही हैं अधिक हितु, हितू औ वटाऊ कौ ।
जे सुने कवितु सोइ चितु दे कै बुझतु है ।
कौतु पुरुषोत्तमु जु, कवि है कुमाऊ क्यौ ॥ ३ ॥

× × ×

पराक्रम पुरो पौंन पूत को सुनि कै मन,
इच्छा भइ वरनौं जिसतै राजी रामु है !
संवतु हो दस-सात सत उरु एक जहां,

माघ वदि छटि जो महीना पुनि भामु है।
सुभ बुधवासह सुपलु सुभ घरी पुनि,
महा सुभ नखतु निपट सुभ नामु है।
करो तहा ख्यालु पुरुषोत्तम बनाइ करि।
धरो याको नीको हनुमानदूतु नामु है।

अन्त-

सीता की ताकी अधिक, सीता की सुधि पाई।
वाज बहादुर चंद कौ, मो दयाल रघुराई ॥ १००
रामायनु कीनौ हुतौ, वालमीकि बुधि लाइ।
पुरुषोत्तम सुनि कह कथा, कीनी भाषा भाइ ॥ १०१
सहसकृत सौं कहत है, सुरवानी सब कोई।
तातें भाषा में कथा, की प्रसिद्ध जग होइ ॥ १०२
हनुदूत कौ जो सुनै, केधौं पढ़े बनाइ।
तासौं कविता सौं सदा, राजी रहे रघुराई ॥ १०३
कवि पुरुषोत्तम है कियो, रामायन को ततु।
इति श्री सिगरौ है भयौ, हनुमान दुत्ततु ॥ १०४

इति-संपूर्ण। प्रति-पत्र १३, पं० ११, अक्षर ३५, साइज १०×४

[स्थान- अनूपसंस्कृत पुस्तकालय]

———

(ग) कृष्ण-काव्य

(१) उछब का कवित्त ५७, लेखनकाल १६ वीं शताब्दी

अथ उछव का कवित्त लिख्यते ।

आदि-

प्रथम हिंडोरा के कवित्त ।

जमुना कैं तीर भीर भई हैं हिंडोरना पै, दूर ही तैं गहगड गति दरसतु है ।
गांन धुनि मंद मंद गावत काननि मैं बीच बीच बंशी प्रान पैठि परसतु है ।
देखि कारे द्रुम कील तान मादि दामिनी सौ, पट फहरात पीत सोभा सरसतु है ।
हा हा मखि नागर पै हियो तरसत है ली, आज वा कदंब तरै रंग वरसतु है ।

कवित्त ७ के बाद फाग विहार के १२ तक, प्रीतम प्रति व्रज बलम बीन वचन के नं० १७ तक, सांझी के नं० २० तक, रास के नं० २४ तक, कृष्ण जन्म उत्सव नं० ३२ तक, लाडिली राधे जन्मोत्सव के नं० ४२ तक, पवित्रा के १, राखी उत्सव का १, दिवारी उत्सव के नं० ४७ तक। श्रीकृष्ण गिरधार्यो जी समै के नं० ५२ तक, पारायन भागवत समै का नं० ५७ तक है।

अन्त-

उदर उभार सुनि पावन जगत होत, किरनि विविध लीला नंदलाल लहिये ।
परम पुनीत मनको कदन प्रफुलित, विमुषक मोद सभा देखत ही दहिये ।
यह श्रुतिसार मथि नागर सुखद रूप, नवधा प्रकास रस पीवत उमहिये ।
तिमर अज्ञान कलि काल के मिटायबैं को, प्रगट प्रभाकर श्रीभागवत कहिये ॥ ५७ ॥

इति श्रीभागवत परायण समै के कवित्त संपूर्णम् ।

प्रति-गुटकाकार। पत्र-१०, पंक्ति-२०, अक्षर-२०, साइज ७×१०,

[स्थान-मोतीचंदजी खजांची का संग्रह]

(२) कृष्ण लीला–

आदि- प्रथम पत्र नहीं है।

अन्त–

अष्टोत्तर शतपद नेमनीया निस दिन मुख थाके रोजी।
राधा गोपी गिरधर संगे, क्रीडा अनुदिन हे रोजी।
दासी सुन्दर जब न बिगरी, प्रेम हरखि सुख गाएजी।
ध्यान पियारो सुन्दर बनोगी जोडी।

प्रति–पत्र २ से १२, पं० १५, अ० १२, साइज ७ × ५

(३) कृष्ण विलास । पद्य ३६ । रचयिता–मु० साहिब सिंघ।
रचनाकाल संवत्-१८०८, मगसर सुदी ३ रवि० (मरोठा)

आदि–

कृष्ण पधारौ कृपा कर, आणंद भये अपार।
काम पग मांडकर, निरख रूक्मणी नार ॥ १ ॥

अन्त–

मोटो कोट मरोट को, जूनौ तीरथ जान।
साहिब सिंघ सुखसौं वसै, भजन करे भगवान् ॥ ३५ ॥
आठार सै अठौतरै, मगसर सुद रविवार।
तिथ तृतीया सुभ दिवस कूँ, कृष्ण बिलास बतार ॥ ३६ ॥

इति कृष्ण विलास मु० साहिब सिंध कृत संपूर्णम्।

लेखन काल-संवत् १८४८ वैसाख सुद ४ सनि । नोखा मध्ये।
प्रति–पत्र ४। राम विलास के साथ लिखिता।

[स्थान–बृहद् ज्ञान भाण्डार]

(४) गोपीकृष्ण चरित्र (बारहखडी)। पद्य ३७,
रचयिता–संतदास। लेखनकाल-संवत् १६१७

आदि–

कका कमल नैन जबतें गये, तब तैं चित नहिं चैन।
व्याकुल जलविन्दु मीन ज्यों, पल नहीं लागत नैन ॥ १ ॥

अन्त-

जो गावै सीखै सुनै, गोपी कृष्ण सनेह ।
प्रीति परस्पर अति बढ़ै, उपजै हरि पद नेह ॥ २७ ॥

स्वामी नारायणदास लिखितम् ।

प्रति-गुटकाकार । पत्र ५ । पंक्ति १० । अक्षर १२ । आकार ६×५॥

[स्थान-अभय जैन ग्रन्थालय]

(५) जन्म लीला—रचयिता-कल्यानजी ।

आदि-

साधु सभ की सुनो परीछित सकल देव मुनि साखी हो ।
कालिंदी के निकट अत इक मधुपुरी नगर रसाला ।
कालनेमु उग्रसेन वंस कुल उपज्यो कंस भुवाला ।

× × ×

अन्त

नाचत महर मऊण मनु कीनै भौ पार बजावै तारी ।
दास कल्यान श्याम गोकुल में प्रगट्यो गर्व पहारी ॥

इति श्री जन्मलीला संपूर्ण ।

प्रति-पत्र ८१ से ८५,

[स्थान-अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(६) जुगल विलास-पद्य-७६ । रचयिता पीथल (पृथ्वीसिंघ) र० सं० १८०

अथ जुगल-विलास लिख्यते ।

आदि-

सुचि रूचि मन वच कर्म सों, जयतु यदुपति जीव ।
प्रभु को नाम पीयूस रस, पीथल नित प्रति पीव ॥ १ ॥
श्रीसरसुति गनपति सदा, दीजे बुद्धि बहु ज्ञान ।
कर जोरै वीनति करौं, सिरं नाऊं धरि ध्यान ॥ २ ॥
नंदलाल वृषभानुजा, ब्रज कीने रस रास ।
बुद्धि माफक बरनौं वही, जाहर जुगल विलास ॥ ३ ॥

× × ×

अन्त–

दूलह लाल गोपाल लखि, दुलहिन बाल रसाल ।
पीथल पल पल नाम लहि, जुगल हरे जंजाल ॥
राधा नंदकुमार कौं, सुमिरन करे दिन रैंन ।
ताते सब संकट टरै, चित उपजै अति चैन ॥

प्रति–गुटकाकार–पत्र ५६, पंक्ति १३, अक्षर १४, साइज ५" × ६"

विशेष–पद्यों की संख्या का अंक २३ के बाद लगा हुआ नहीं है। समाप्ति वाक्य भी नहीं है। अतः अपूर्ण मालूम पड़ता है। नायक नायिकाओं का वर्णन भी है।

[स्थान–अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर]

इस ग्रन्थ की एक प्रति खटरतर आचार्य शाखा के भंडार से प्राप्त हुई है जो पूरी है। मिलाने पर विदित हुआ कि उसमें उपर्युक्त आदि एवं अंत का पहला पद्य नहीं है, कहीं २ पाठ भेद भी है। अन्त के दोहे से पूर्व एक छप्पय है और पीछे एक दोहा और है जिनसे ग्रन्थकार व रचनाकाल पर प्रकाश पड़ता है अतः उन्हें यहाँ दिये जारहे हैं:—

छप्पय

व्रज भुव करत विलास रास रस रसिक विहारिय ।
सीस मुकट छबि देत श्रवन कुंडल दुति भारिय ।
गलि मोतिन की माल, पीत पट निपट जुगल छबि ।
नीकी छाजै ॥
यह रूप धारि हिय मैं सदा, जातै सब कारज सरै ।
सुभ जुगल चरण नृप मांन सुत, प्रथीसिंघ-
प्रणपति करै ॥ ७४ ॥

७५ वां उपर के अंत वाला है।

अन्त–

सुर तरु नभ वसु ससि वरस, भादौ सुदि तिथ गार ।
पूरन युगल–विलास किय, भाय युत सुर गुरुवार ॥ ७६ ॥

इति श्री युगल विलास ग्रन्थ महाराजाधिराज प्रथीसिंघजी कृत संपूर्ण।

ले०संवत् १८४६ मिति महाशुक्ल एकादश्यां तिथौ लिखितं। पं०अमरविलासेन। श्री कुशलगढ़ मध्ये रा० श्री जिनकुशलजी प्रसादात्।

[प्रतिलिपि–अभयजैनग्रन्थालय]

(७) बारहखडी–रचयिता–मस्तरामजी।

अथ–मस्तराम की बारहखडी लिख्यते।

आदि–

दोहा

कका करना करत व्रजकामनी, भरत कंत की त्रास।
मन तन चात्रिग ज्यौ रटै, श्री क्रस्ण मिलन की आस।

कवित्त रेखता चाल–

कका कवर कान के हाथ में बांसुरी रे खडा जमुना तट बजावता था।
पडी गेंद जो दहम करि पड्या काली नाग कुं नाथ करि ल्यावता था।
संत महंत जोगेश्वर ध्यान धरै, वाका अंत कोई नहीं पावता था।
मसतराम जालिम भया कंस कारे खडा कुंज गेली बिचि गावता था।

अन्त–

हा हा हरि नांव की बात अगाध है रे संत बिना बुधि नाहीं आवै।
गोपाल ज्यौ नंद के लालजी सूं, बारू बार गुलाम की भेरे आवै।
मैं तो अखिरा को बल नांहि जानुं, और बुधि नहीं कृष्ण नांव जावै।
मसतराम गुलामै ज्यो आप ही को बुधि दीजिये तो चरनो चितरल्या रहौ। ३४।

इति बारहखडी संपूर्ण।

प्रति–गुटकाकार–पत्र ७, पं–१८, साइज ८। × ६

[स्थान–अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(८) बिहार मंजरी (पद) रचयिता–सूरज

आदि-

राग

विघन हरन गनपति हिय नाऊं गवरिनंद जगवंद चंद
जुत सिंधुर वदन निरखि सुख पाऊं ।
सजि सुगंध उपचार अमित गति निरमल सलिल
उवरि अन्हवाऊं ।
श्री सिरदार शिरोमणि सूरज पद पंकज चित हित
नित लाऊं ।

अन्त-

संत पुराण निगम आगम सब नेति नेति कहि गावैं ।
शिव ब्रह्मादि सकल के कर्ता भर्ता अपनावैं ।
करहु कृपा गुण गण नित पाऊं सूरज उगणि सवायौ ।

इति श्री सूरज सिरदार बिहार मंजरी नाम्ने ग्रन्थे भक्त पक्षवर्णनं नाम सप्तम स्तबकः समाप्तः ।

दोहा

संवत् राखि शशि निधि·······माघ मास तम पक्ष ।
पंचमि गुरुवास विमल··············पद सुदक्ष ॥ १ ॥

प्रति-गुटकाकार-पत्र ६१, पं० १५, अ० १२, साइज ६×६॥

[स्थान-अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(६) राधाकृष्ण विलास (दान लीला)। पद्य ६४

रचयिता-माधोराम। रचनाकाल संवत् १७८४ आश्विन।

अथ राधाकृष्ण विलास दानलीला लिख्यते ।

आदि-

दोहा

प्रकृति पुरुष शिव सकत है, भेद रटत निरधार ।
वहै प्रकृति वृषभान ज्यूँ, पुरुष सुनंद कुमार ॥ १ ॥

राधा माधव एक हैं, जैसे सुमन सुगंध
भाव भेद जे बूझ है, महा मूढ मति अंध ॥

अन्त-

भगत जुगति संपत लहै, पढ़ै सुनै जो कान ।
लीला जुगल किशोर की, सबकौ करै कल्यान ॥ ६३ ॥
सतरहसै चौरासियै, आश्विन पूरणमास ।
माधोराम कह्यौ इन्हें, राधाकृष्ण विलास ॥ ६४ ॥

इति श्रीदानलीला संपूर्णम् ।

लेखन काल-प्रति १-१६ वीं शताब्दी पंचभद्रा मध्ये काती वदी ७

प्रति-२-संवत् १७६६, मि० सु०१५ । प्रति-१, पत्र ४, पंक्ति २०, अक्षर ४०, आकार ६×५॥, प्रति-२, गुटकाकार, पत्र ७, पंक्ति १८,

(१०) **रुक्मणी मंगल**-रचयिता-विष्णुदास-रचनाकाल सं०१८३४

आदि-

एक पत्र नहीं ।

.... रुक्मण करो सगाई ।
अगले शहर के लोक बुलावो, सबही के मन भाइ ।

अन्त-

रुक्मण व्याह सुनत रस वरसत, तनमन चित्त लगाय ।
या सुख कूं जाने सो जाने, विष्णुदास गुन गावे ।

इति श्रीरुक्मणी मंगल संपूरन ।

प्रति- गुटकाकार

पत्र २ से २५, पं० १५, अ० ८ से १४, साइज ५॥×७

[स्थान- अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

रासलीला-दानलीला-रचयिता- सूरत मिश्र

अथ रासलीला लिख्यते-

आदि-

दोहा

वृजरानी वृजराज के चरण कमल सिरनाइ ।
वृजलीला कुछु कहत हैं, लखी दगनि जिहि भाइ ॥ १ ॥
भाद्रव सुदि छठ के दिनां, सांत न कुंड ज न्हाइ ।
संतन संग सब जातरी, बसत करबलां जाइ ॥ २ ॥
तहां पाछली निसि लख्यौ, इक मंडल पर रास ।
दंपति छबि संपति निरीखि, को कहि सके विलास ॥ ३ ॥
× × ×

अन्त-

खरी होहु ग्वारिनि कहा जू हम खोटी देखी, सुनो नैंक बैन सो तौ और ठाँव जाइयै ।
दीजो हमें दान सो तौ और जु न परब कछु, गोरस दै सो रस हमारे कहां पाइयै ।
महा यह दीजै सो तौ महीपति दे है कोऊ, दह्यौ जो पै दहै हौ तो सीरौ कछु खाइयौ ।
सूरत सुकवि एसें, सुनि हँसि रीझे लाल ।
दीनी उरमाल सोना कहां लगि जाइये ॥ ४९ ॥

दोहा

तब हंसि हंसि ग्वारिनि दियौ, ग्वारिनि दधि बहु भाइ ।
लीला जुगल किसोर की, कहत सुनत सुखदाइ ॥५०॥

इति दानलीला मिश्र सूरतजी कृत संपूर्णम् । सं० १८३४ फा० सु० १३ बुधवार, प्रति-पत्र ७, पं० १६, अक्षर १६ से १६

[स्थान-अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर]

(११) वनयात्रा (परिक्रमा व्रज चौरासी कोस की) रचयिता-गोकुलनाथ (१) लेखनकाल-२० वीं शताब्दी

आदि-

ताके आगे मधुवन है । तहाँ श्रीठाकुरजी ने गऊ धारण लीला करी है ।
तहां मधुकुण्ड है । तहां मधु-दैत्य को मार्यौ है ।

अन्त–

वन जात्रा परिक्रमा श्रीगुसांईजी करी। सो श्री गोकुलनाथजी अपने सेवकन सों कहत हैं। जो वैष्णव होन ब्रज की परिक्रमा करै तब ब्रज को सरूप जान्यौ परै।

प्रति–गुटकाकार। पत्र २२। पंक्ति १७। अक्षर १८। आकार ८×६।

विशेष– आदि अन्त नहीं है।

[स्थान–अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर]

(१२) श्याम लीला–

आदि–

राग मलार (टेक)

गोकलनाथा गोपिननाथा खेलत ब्रजु की खोली।

जब गोकुल गोपाल जन्म भयो कंस काल में बीत्यो।

बहु विध करत उपाय हरनकूं छल बल जानु न जीत्यो।

अन्त–

जो या कथा सुनै अरू गावै, है पुनीत बडभागी।

दासु कल्यान रयन दिन गावै, गुन गोपाल तियागी।

इति श्यामलीला समाप्ता। पत्र ७२ से ८६।

[स्थान–अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर]

(१३) सुदामा चरित्र–

आदि–

अथ सुदामा चरित्र सवईया ईकतीसा लिख्यते।

माधू जू के गुन गाई गाह गाइ सुखपाइ।

और न सुनाइ सेष नाग हू से हारे हैं।

महिमा न जानौ सुक नारद औ बालमीक।

ताकै कहिबै को कहा मानस विचारे है।

जैसी मति मेरी कथा सुनी है पुरान मति

जिहि भांति सुदामा जू द्वारिका सिधारे हैं।

तंदुल ले चलै कैसे हरि जूं सू मिलैं पुनि कैसें

फेर आए निज हारद विचारे हैं।

अन्त–

जाकै दरबारि कवि ब्रह्म व्यास बालमीक
हा हा हुं हुं गाइन कैसे कै रिझाइवौं ।
रुद्रसेन महासिगारी नारद वैनधारी
रंभासी निरतकारी सुक सौं पढाइवौं ।
वैंकुण्ठ निवासी अब भयौ वृजवासी ध्यातु
हिरदै में प्रकासी स्याम निसि दिन गाइवौ ।
सुदामा चरित्र चिंतामनि सामी सावधान
कंठ तै खलीता राखि साधन सुनाइबौ ।

इति श्री सुदामा चरित्र सवईया पद्य संपूर्ण समाप्त ।
प्रति– पत्र ६ । पं० ६ । अक्षर ४४ ।

[स्थान–मोतीचन्दजी खजानची संग्रह]

(१४) सुदामा चरित्र–

अथ सुदामा चरित्र वीरबलकृत लिख्यते ।

आदि–

कवित्त

माधौजी के गुन गाय गाय सुख पाय पाय और नि सुनाय
हंस नाग हू से हारे हैं ।
महिमा न जानै सुक नारद औ बालमीक ताके
कहिबै के कौन मानस विचारे हैं ।
जैसी मति मेरी कथा सुनी है पुरान करि
ज्यौंकर सुदामा तब द्वारिका सिधारे हैं ।
तंदुल ले चले कै हैं हरि जू सो मिले
पुनि कैसे फिरि आए निजु दारिद विडारे हैं ।

अन्त–

जाके दरबार कवि ब्रह्म व्यास बालमीकि
कहाँ हा हा हू हू गायत सु कैसे कै रिझायवें ।

रुद्र से महासिंगारी नारद से वीनधारी
रंभासी निरतकारी सुक से पढायवें ।
वैकुंठ निवासी आप भयो व्रजवासी
स्याम राधिका रमन कवि वरन सोइ गाइवौ ।
सुदामा चरित्र चिंतामणि सब सावधान
कंठ के पियार राखि साधनि सुनायवौ ॥

इति श्री वीरबल कृत सुदामा चरित्र संपूर्ण ।

प्रति-गुटकाकार । पत्र २३ । पं० १३ । अक्षर ११ साइज ४॥ × ६ ।

[स्थान- अनूपसंस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर]

(१५) सुदामाचरित

कहत त्रीया समुझाई दीनको मधुहरी ॥ टेक
द्वारामतिलों जात कहा पीय तुह्यरो लागै ।
जाके हरि से बंध कहा धरि धरकन मागै । २ ।

अन्त-

दीनबन्धु बिरदावली प्रगट इह कलिवाल ।
कवलानन्द मुदित चित गावै, कीरति मदनगोपाल । ५८ ।

इति सुदामा चरित समाप्त

पत्र ६५ से १०० ।

[स्थान- अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर]

(१६) सुदामाजी की ककाबत्तीसी ।

आदि- पद्य २१ से

अंत-

चचा छूटा जो दिप आदि नहीं थे तो चरन सरन सद्गुरु की रहियो ।
नांव मधुरी रस पिया सुजान जसु गुर वास नहीं होय पबाना ।

इति श्रीसुदामाजी की ककाबत्तीसी ।

आदि-

कका कहि जुग नाम उधारा, प्रभु हमरो भव उतारो पारा ।
साधु संगति करि हरि रस पीजै, जीवन जन्म, सफल करि लीजै ।

[स्थान- अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर]

(घ) सन्त-साहित्य

(१) कबीर गोरख के पदों पर टीका ।

लेखन-काल १६ वीं शताब्दी ।

अर्थ

सहजै मानसी भजन द्वंद्व रहित फल पाप पुन्न फूल कामनान्तर प्राण तत्वरूप ह्वै रह्या । गुण उदै नहीं । पल्लव पर कीरति नहीं । आहें अंकुर नहीं । बीज वासना नहीं । परगट परस्या ब्रह्म गुर गमतें गुरु पारसादि ब्रह्म अग्नि पर जारी । पुजारी । प्रकीरति । सासे सूर मनोपवन । तानी सोलि दूर कहिये । इनते आगे जोग कहिये । जुगतारी आत्मा परमात्मा जुगल सोई जोग तारी ।। १ ।।

प्रति- पत्र ४७ । पंक्ति १५ से १६ । अक्षर ३६ । आकार ।। ११ + ६ ।।

[स्थान- स्वामी नरोत्तमदास जी का संग्रह,]

(२) कबीर जी का ज्ञानतिलक । रचयिता-रामानन्द ।

आदि-

ॐकार अवगत पुरुसोत्तम निजसार, रामनाम भजि उतरो पार ।
ॐगुरु रामानंदजी नीमानंदजी विष्णुश्यामजी माधवाचार्यजी ।
चार दिसा चारों गुरुभाई, चारों न्यें चार संप्रदाय चलाई ।
ॐकोन डारते मूल बनाया, कोन सब्द अस्थूल बनाया ।
ॐ डार ते मूल बनाया, सोहं सब्द ते अस्थूल बनाया ।

अन्त-

भक्ति दिलावर उपजी ल्याये गुरु रामानंद ।
दास कबीर ने प्रगट किया सप्तदीप नवखंड ।।

इति रामानंदजी का कबीरजी का ज्ञानतिलक संपूर्ण ।

लेखनकाल– लिखितं गंगादास । जैसा देख्या तैसा लिख्या छै । मम दोषो न दीयते ।

प्रति– पत्र ६ । पंक्ति ११ । अक्षर २६ । आकार ६×५ ।

विशेष– गुरु चेला के प्रश्नोत्तर संवाद के रूप में है ।

आदि अन्त का १-१ पत्र रिक्त ।

[स्थान– अभय जैन पुस्तकालय]

(३) **जैमल ग्रन्थ संग्रह** । रचयिता–जैमल । लेखनकाल-१८ वीं शताब्दी ।

आदि–

आदि के पत्र नहीं मिले हैं ।

मध्य–

वैरागी को रूप धरि, वैरागिणी चालै लार ।
जैमल उनकूं गुरु करे, अन्ध सबै संसार ॥ २५ ॥
जोग जहां जोरु नहीं, भगति जहां भग नांहि ।
अविगति आपै आप है, जैमल हिरदा माहिं ॥ २६ ॥
× × ×
क्यूं करि भया निरंजनि, हमकूं कहि समझाहि ।
गांडा चूखे रस पीवे, भूखा ह्वै तब खाहि ॥ ८१ ॥
क्यूं करि भया निरंजनि, कोण समरथि सार ।
पेट भरण के कारण, रोकि रह्या पर द्वार ॥ ८२ ॥

अन्त–

अन्त के पत्र भी प्राप्त नहीं हुए ।

प्रति–पत्र १२६ । पंक्ति १७ । अक्षर ३२ । आकार ७।×५॥,

विशेष–कुछ अंगों के नाम इस प्रकार हैं—

सुमिरन अंग, चौपदै, निवाण पदै, भगति वृंदावली, विधान पदै, सूरात को छंद, सीतमहातम को अंग आदि ।

[स्थान–अभय जैन ग्रन्थालय]

(४) नरसिंह ग्रन्थावली । रचयिता-नरसिंह ।

आदि-

सरीर सरबंग नाटक ।

गुरु दादू वंदो प्रथमि, नमस्कार निरकार ।
रचना आदि अनादि की, विधिसों कहौं विचार ॥ १ ॥
दादू गुरु प्रसाद सब, जो कुछ कहिये ज्ञान ।
बीज भ्रम विस्तार जग, सो अब करों बखान ॥ २ ॥
बुधि समानसों कहतु हों, या तनके जो अंग ।
दादू गुरु प्रसाद ते, रची सरीर सर्वंग ।

अन्त-

जन्म मरण ऐसे मिटैं, पावैं पूरण अंग ।
नरसिंह मन वच कर्म करि, सुने सरीर सर्वंग ॥१३॥१५७॥

इति श्रीनरसिंहदासेन कृतं सरीर सर्वंग नाटक संपूर्णम् ।

केवल ब्राह्मण लिखितम्

प्रति- पुस्तकाकार । पत्र २५ । पंक्ति १२ । अक्षर १० । आकार ४ × ६ ।
विशेष- इस प्रति में नरसिंहदास के बनाए हुए अन्य निम्नोक्त ग्रंथ हैं-

(१) चतुर्समाधि — पत्र २६ से ३२ तक
(३) (ना) मन्निर्णय — ३७ तक
(४) सप्तवार — ३८ तक
(५) विरहिणी विलाप — ४१ तक
(६) बारहमासाजी, ब्रह्म विलास — ४५ तक
(७) त्रिकाल संध्या — ४६ तक
(८) साखी स्फुट ग्रन्थ — ७२ तक
(९) अतीय अवस्था अंग — १०७ तक
(१०) झांझ, त्रोटक, कुंडलिया, कवित्त — २२७ तक

हन्दव छन्द, अज्ञानता को अंग, विश्नपद, विविधरागिनियों के पद ।

[स्थान- अभय जैन ग्रन्थालय]

सुखमनी समाप्तम् । लेखनकाल १८ वीं शताब्दी ।

प्रति–गुटकाकार–पत्र ३५ । पंक्ति १५, १६ । अक्षर २५ साइज ५॥ × ४

[स्थान–अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर]

(६) **पद–संग्रह** । इसमें कबीर, मीरां, सेवादास, नामदेव, जनहरिदास, तुलसी, सूर, साधूराम, नंददास, माधोदास, आदि अनेक कवियों के पदों का विशाल संग्रह है । पत्र १८६ तक विविध कवियों के तथा उसके बाद केवल रामचरणजी के दो पद हैं । उनका एक पद नीचे दिया जाता है—

आदि–

भज रे मन राम निरंजण कूं,
जन्म मरण दुख भेजण कुं ।
अर्धनाम मिल सादर पायो
रामचन्द्र दल त्यारन कों ॥ १ ॥
जल डूबत गज के फंद काटे,
अजामेल अघ जारन कुं ।
राम कहत गिनका निस्तारी,
जुग जुग अधम उधारन कुं ॥
ऊंच नीच को भांति न राखे ।
शरणा की प्रतिपालन कुं ।
रामचरण हरि ऐसे दीरघ,
औगुण घणां निवारण कुं ॥

लेखनकाल–२० वीं शताब्दी ।

प्रति–पत्र २३६ अपूर्ण । पंक्ति १२ । अक्षर ४० । साइज १० × ४॥

[स्थान–स्वामी नरोत्तमदासजी का संग्रह]

(७) **मोहनदासजी की बाणी** । रचयिता– मोहनदास ।

लेखनकाल– संवत १८८२, माघ सुदि, ४ शुक्र ।

आदि–

नमो निरंजनराय, नमो देवन (के) देवा ।
निराकार निर्लेप, नमो अलख अभेवा ॥

नमो सर्वव्यापीक, थूल सूछिम सब मांही ।
नमो जगत आधार, नमो जगदीश गुसांई ॥
सचराचर भरपूर हो, घाट बांधि नहिं कोय ।
मोहनदास वन्दन करै, सदा आणंद घन तोय ॥ १ ॥

अन्त-

झूठी छांडी खेंचा ताणी, मोहन करों हरी सौं नेह ॥ ४२ ॥

लिखितं रामजीनाथ पठनार्थं ।

प्रति- गुटकाकार । पत्र १५१ । पंक्ति ६ । अक्षर १६ । साईज ६×४ ।
विशेष- अंग, शब्द, सवैया, रेखता, आदि सबका जोड २००० लिखा है ।
[स्थान- स्वामी नरोत्तमदासजी का संग्रह ।]

(८) मोह विवेक युद्ध । रचयिता- लालदास । रचनाकाल-संवत १७६७ से पूर्व । फागुनसुदी ६ ।

आदि-

आदि अन्त अमृत ए स्वामी, एई अविगत है अंतरजामी ।
सकल सहज सम सदा प्रमान, सुख सागर सोई साध समान ।
सकता साध गुंरां के पग परौं, रामचरत हिरदै पर धरौं ।
गुरु परमानंद को सिर नाऊं, निर्मल बुद्धि दै हरि गुन गाऊं ॥ ६ ॥
मन क्रम वचन प्रथम गुरु, वंदौं कल्पदत्त अरु संत ।
सुक नारद के पग परौं, प्रगटै बुद्धि अनन्त ॥ ७ ॥
तुम हौ दीन दयानिधि रामु, होहु प्रसन्न प्रेम सुखधाम ।
होहु प्रसन्न देहु मत सार, जानों मोह विवेक विचार ॥ ८ ॥

× × ×

अन्त-

लालदास परकास रस, सफल भये सब काज ।
विष्णु भक्ति आनंद बढ्यौ, अति विवेक कै राजि ।
तब लगु जोगी जगत गुरु, जब लगै रहै उदास ।
सब जोगी आसा लग्यौ, जगगुरु जोगीदास ॥

इति मोह विवेक का जुद्ध संपूर्ण ।

प्रति-पत्र-६। । पंक्ति-११ । अक्षर-३४ से ४० । साईज १०॥ × ५

[स्थान-अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर]

(६) **योग चूड़ामणि** । पद्य १८५ । रचयिता-गोरखनाथ ।

अथ गोरखनाथजी कृत योग चूड़ामणि लिख्यते—

आदि-

सुनजो माई सुनजो बाप, सूत निरंजन आपो आप ।
सून्य के भये अस्थीर, निहचल जोगिन्द्र गहर गंभीर ॥ १ ॥
अकूं चंकू चिया विगसिया, पुहासिधरि लागि
उठि लागि गधूवा ।
कहै गोरखनाथ धुवा ऐसा घडिका, परचा जाणें प्राण ॥ २ ॥

अन्त-

पंथ चालै तूटै, तन छीजै तन जाइ ।
काया थी कछु आगम बतावै, तिसकी मूंडौ माइ ॥ ८५ ॥

इति गोरखनाथ की साखी समाप्ता ।

प्रति-पत्र- ११ । पंक्ति १३ । अक्षर ३० करीब । साइज १०॥ × ५

विशेष-कई पद्यों का भाव बड़ा ही सुंदर है। यथा—

गोरख कहै सुणो रे अवधू, जगमें इसि विधि रहणां ।
आंख्यां देखबा कानां सुणिबां, मुखि करि कछु न कहणां ॥४९॥
× × ×
दंडी सोई जु आपा डंडै, आवत जाती मनसा खंडै ।
पांच इंद्री का मरदै मान, सो दंडी कहियो तंत्व समान ॥५०॥
× × ×
उनमन रहिवा भेद न कहिवा, बोलिवा अमृत बांणी ।
आगिला आग होइगा तो, आप होइबा पाणी ॥४७॥

[स्थान-अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर,]

(१०) अथ ग्रन्थ श्रवंगसार लिख्यते—

कुंडलिया—

सतगुर मुझि परि महरि करि, बगसो बुधि विचार ।
श्रवंगसार एह ग्रन्थ जो, ताको करूं उचार ।
ताको करूं उचार सतसिव साखि ल्याऊ ।
उकति जुकति परमाण और अति पास सुनाऊं ।
नवलराम सरणै सदा, वृम पद हिरदै धारि ।
सतगुर मुझि पर महरि कर, बगसो बुधि विचार ।।

खंड—

संत विचार ब्रह्म गुरु संत निरूपण, पद्य ७८
गुरु मिलाप महिमा शब्द १५८
गुरु लखण निरूपण शब्द २६२
१३ वाँ उसमें भक्ति निरूपण शब्द १०९८ २ रचने दुशश्र
प्रति–पत्र ३८ अपूर्ण । पंक्ति १७ । अक्षर ४८ से ५४

[स्थान–अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(११) सन्तबाणी संग्रह—

सूची—

(१) गोरखनाथजी की शब्दी २२४ ।

(२) दयालजी हरि पुरसजी की साखी– ३१८ अंग, ३५ श्लोक, ४ कुंडलिया, १११ अंग, २५ चंद्रायणा, ६४ अंग, १४ कवित्त, १६ पद, २०६ राग, २२ रेखता पद, ८ राग, १ कडरखा, १३१ राग, २ पद रेखता कडरखा, सर्व ३१७, राग २४, ग्रंथ ४७ ।

(३) श्री स्वामीजी हरिरामदासजी की बाणी–दूहा–कुण्डलिया, छंद, चौपई, रेखता पद, अरिल्ल सर्व ८४६ । महमा का मनहर छंद १ ।।

(४) श्री स्वामीजी श्रीआतमाराम जी की कुंडलिया, ३३ - चंद्रायणा, ७ रेखता, ४ शब्दी, २ पद, १४ मनहर, १ ईंदव, २ साखी, १३ चौपई, सर्व ७७१ ग्रंथ, श्रवंगसार का शब्द । ३८६३ । बिध्यंन ४१ ।

(५) कबीर साहिबजी की वाणी- ५१ अंग, ७० ग्रंथ, रैमणी १५, ६ फूलना, ६०२ पद, २४ राग ।

(६) नामदेवजी की साखी १०, पद १६१, १६ राग ।

(७) रैदासजी की साखी ७०, ८४ पद, १३ राग ।

(८) पींपाजी की साखी ११, पद २१, राग ७ ।

(९) गुसांई जी श्री तुलसीदास जी को कृत साखी, चौपई, सोरठा, ४२१४ परिकमें २०० ग्रंथ ४, पद ४६०, ३० राग, ३० श्लोक, १० शब्दी ।

(१०) जोगेश्वरा की शब्दी ३२७, २ ग्रंथ, ९ पद, योगेश्वरों के नाम १ मछिंद्रनाथजी, २ गोरखनाथजी, ३ दत्तजी, ४चर्पटजी, ५भरथरी, ६ गोपीचंद, ७ जलंध्रीपावजी, ८ पृथ्वीनाथजी, ९ चोरंगनाथजी, १० कणेरीपावजी, ११ हाली पावजी, १२ मींडकीपावजी, १३ जती हणवंतजी, १४ नाग अरजनजी, १५ सिध हरतालीजी, १६ सिध गरीबजी, १७ धूंधलीमलजी, १८ बालनाथजी, १९ बालगुसाईंजी, २० चुणकनाथजी, २१ चंद्रनाथजी, २२ चतुरनाथजी, २३ सोमनाथजी २४ देवलनाथजी, २५ सिध हंडियाईजी, २६ कुंभारीपावजी, २७ मुकुंदभारजी, २८ अजैपालजी, २९ महादेवजी, ३० पारवतीजी, ३१ सिधमालीपावजी, ३२ सुकलहंसजी, ३३ घोडाचौलीजी, ३४ ठीकरनाथजी, ३५ इति । ४५ ।

सिध का नांव-प्रेमदासजी कौ ग्रंथ-सिध वंदना । ४६ दत्तस्तोत्र, श्लोक १० । ४७ सुखा समाधि, ४८ महरदानजी, कल्याणदासजी का पद १०, राग ४, जगजीवणजी का ग्रन्थ २, चंद्रायणा १५, पद ५९, राग ९ । ५० । ध्यानदासजी का ग्रन्थ २ (५१), दादूजी का पद ३७, राग १६ (५२), वाजींदजी कौ ग्रन्थ १, साखी १७, जखडी ५ ।

पद संग्रह-रामानं(द) जी का पद २ । आसानंदजी को पद १, सुखानंदजी का पद २, कृष्णानंदजी का पद ३, ब्रजानंदजी को पद १, नेणादास को पद १, कमालजी का पद २, रेखतो १, चत्रदासजी को पद १, अग्रदासजी का पद २, नंददासजी को पद १,

प्रेमानंदजी को पद १, माधोदासजी का पद १, बालश्रीकजी का पद २, पृथ्वीनाथजी का पद २, पूरणदासजी का पद २, वनवैकुंठजी को पद १, जनकचराजी को पद १, मुकुंदभारथीजी का पद २, व्यासजी को पद १, रंगीजी को पद १, अंगदजी का पद २, भवनाजी का पद ३, धनाजी का पद ३, कीताजी को पद १, सधनाजी का पद २, नरसीजी का पद २, सनजी का पद २, ग्रंथ १, प्रसजोकी साखी ५, किवत ४, पद ५, तिलोचनजी को पद १, ज्ञान तिलोदकजी का पद १, बुधानंदजी का पद १, राणाजी का पद २, सीहाजी को पद १, पीथलजी को पद १, छीनाजी का पद २, नापाजी का पद ११, विद्यादासजी को पद १, सांवलियाजी को पद १, देयजी को पद १, मतिसुन्दरजी को पद १, सोमनाथजी को पद १, कान्हजी का पद १०, हरदासजी का पद ५, वखतांजी का पद २, सुंदरदासजी का पद ३, दासजीदास का पद ४, जैमलजी को पद १, केवलदासजी का पद २, जनगोपालजी का पद १३, गरीबदासजी का पद १, नेतजी का पद ३, परमानंदजी का पद ६, सूरदासजी का पद १६, श्रीरंगजी का पद २, जनमनोहरदास का पद १, बिहारीदासजी को पद १, सोझाजी का पद ७, शेख फरीदजी का पद २, ईसनजी को पद १, साह हुसैनजी को पद १, बहलजी का पद ४, शेख बहावदीजी का पद ४, काजी महम्मदजी का पद १६, मनसूरजी का पद १, भूलणौ १, सेवादासजी का सवैय्या ४, कुंडलिया २, पद ४५, प्रल्हादजी का पद ५, फुटकर पद २६, सर्व पद २६२, संत १२०, लघुतानाम ग्रंथ, टीकमजी का सवैया १०, अनाथ कृत विचारमाला का शब्द २०६, ग्रन्थ ६ (सं०१७२६ माधव)। हरिरामकृत दयालजी हरिप्ररसजी की परची का शब्द ३६, गोपालकृत ग्रंथ प्रल्हाद चरित्र २४४, दोहा ३७, चौपाई २०१, छंद ६। जनगोपाल कृत ग्रन्थ जडभरथ चरित्र शब्द ६२, रामचरण कृत ग्रन्थ चिंतामणी शब्द १२७, दोहा २५, चौपई १००, सोरठा २, सतपुरसां का नाम १२७।

लेखनकाल-संवत् १८५६, वैसाखवदी शनिवार लिखी परवतसर मध्ये स्वामीजी श्री बालकदासजी तच्छिष्य हरिराम शिष्य

आत्मारामजी शिष्य खानांप्राद ८ रामसुखदास।

प्रति- गुटकाकार-पत्र ६०६। पंक्ति १७ से २०। अक्षर २६ से ४२ तक।
साइज ५॥ × ५

[स्थान- स्वामी नरोत्तमदासजी का संग्रह]

(१२) संतवाणी संग्रह-

आदि-

पहला पत्र नहीं है, २ से ५४ तक है, [illegible] ६२८ से ६८४ तक के पन्ने हैं, अंत के ६७७, ६८०, ६८१, ६८३, ६८५ के नहीं हैं, अंत में [illegible] पहला पत्र नहीं। पीछे २ पत्र हैं. अर्थात् गुटके के बीच का हिस्सा कहीं अलग रह गया ह। प्राप्त प्रति से इन रचनाओं के नामादि का पता चलता है। उनकी सूची इस प्रकार है-

१ गुरुदेव को अंग पद्य १७० पत्रांक ४ अ

अंत-

जन सेवदास सतगुरु इहा, गरवा गुण अछेह।
सुतृति करैं गुर पलक मैं अमै उमर पद देह ॥ १७० ॥

२ गुर (सिख) पारिख को अंग पद्य ६० जनसेवादास- पत्रांक ५ ब

३	सुमिरण के अंग पद्य ५०५	,, १५ ब
४	बिरह के अंग पद्य ५०	,, १६ ब
५	ज्ञानबिरह अंग पद्य १०	,, १७ अ
६	परचा के अंग पद्य ७७	,, १८ ब
७	सजीवन के अंग पद्य ३०	,, १८ अ
८	वीनति को अंग ,, ६६	,, ६ अ
९	जरया को अंग ,, ८	,, २० ब
१०	साध को ,, ,, ३३०	,, २७ ब
११	साध महिमा को अंग पद्य १९	,, २७ ब
१२	साधु संगति ,, ,, ४६	,, २८ ब
१३	साध परिख ,, ,, ,, २५	,, २९ अ

१४ धीरज को अंग पद्य २८		,, ३० अ
१५ जीवित मृतक को अंग पद्य २५		,, ३० ब
१६ दया के अंग पद्य ३४		,, ३१ अ
१७ सम किस्टी अंग पद्य ८		
१८ भरौह ,, ,, ५		
१९ चाइनिक ,, ,, १३१		,, ३४ अ
२० चिंतावणि ,, ,, ३४०		,, ४१ ब
२१ मनको ,, १२६		,, ४४ अ
२२ माया का अंग पद्य ७०		,, ४३ बी
२३ सूखिम माया अंग पद्य २६		,, ४४ अ
२४ कामीनर को ,, ,, १००		,, ४६ अ
२५ लोभी ,, ,, ४३		,, ५० अ
२६ किरपाण नर ,, ,, १८		,, ५० ब
२७ कासकौ ,, ,, ४२		,, ५२ ब
२८ सुरातन ,, ,,	कुल पद्यांक २४६४ पद्य १२१ के बाद त्रुटित	

इसके पश्चात् पत्रांक २८६ तक कौन २ से ग्रन्थ थे, पता नहीं चलता, पर सूची से पत्रांक २८७ से ६८५ तक में जो ग्रन्थ थे, उनकी नामावली नीचे दे दी जारही है। सूची के २ पत्रों के नीचे का कुछ अंश टूट जाने से कई ग्रन्थों के नाम प्राप्त नहीं हो सके।

ग्रन्थनाम	पत्रांक	पद्यसंख्या
१ बारजोग ग्रन्थ	२८७	८
२ हंसपरमोध	२८७	४९
३ बडी तिथि जोग	२८९	१६
४ लहुडी तिथि	२९०	१६
५ चालीस पदी जोग	२९०	४१
६ चवदा पदी ,,	२९१	१४
७ तीस पदी ,,	२९२	३०
८ बारा पदी ,,	२९३	१२

६	बावनी ,,	२६३	१२
१०	सूर समाधि ,,	२६५	६
११	,, ,, ,, की अर्थ	२६६	२०
१२	नृवर्त्ति प्रवृति जोग	२६६	४२
१३	माधो छन्द जोग ग्रन्थ	२६७	१
१४	जोगमूल सुख ,, ,,	२६७	४०
१५	ज्ञान अज्ञान परिख .,	२६८	४०

पद भिन्न भिन्न रागों के पत्र २६६ से ३२० में है इसके पश्चात् पत्रांक ३२१ से कवित्त १६, कुंडलिया १११, चंद्राइण ६४, साखी ३१४, श्लोक स्तुति ४, फुटकर शब्द २-२

ध्यानदासजी का ग्रन्थ ३४३-२

स्वामी हरिदासजी की प्रति ३४५-३४८

(पत्र ३५३ तक)

इसके पश्चात् पत्रांक ३५४ से गोरखवाणी स्वामी गोरखनाथजी की वाणी-

१	गोरखबोध	३५४	१२७
२	दत्त गुटि	३५८	५२
३	गणेश गुटि	३६०	१
४	ज्ञानतिलक	३६१	४५
५	अभै मात्रा	३६२	१
६	बत्तीस लछन	३६२	१
७	सिद्धि पुराण	३६२	१
८	चौबीस सिद्धि	३६३	१
९	आत्मबोध	३६३	१
१०	षडछिरी	३६३	६
११	रहरासि	३६३	१
१२	दयाबोध	३६३	१८
१३	गिनान माला	३६४	१
१४	रोमावली	३६४	१

पत्रके किनारे टूटने से कई नाम नष्ट—

(अनंत कृत)

इति बीजक सर्व बांण्या कौ संपूर्ण

प्रति परिचय पत्र ६८५ पं० ३५, अ०२४,

(कुल ग्रन्थ ३६०००)

[स्थान-मोतीचंदजी खजांनची संग्रह]

(१३) समनजी की परची

आदि-

साधू आये आगमतें पुहमी किया सोन ।
ठौर ठौर बूझत फिरत समन का घर कोन ॥ १ ॥

प्रति-पत्र २ अपूर्ण, पद्य ४७ तक

[स्थान-स्वामी नरोत्तमदासजी के संग्रह से]

(१४) साखी-

मध्य-

नाथ

ओर हमारी रक्षा कार सोभा भी पावेगा अर हमारी कीर्ति गायेगा जो ए हमारा वालिक है। अब उनका ए कैसे त्याग करेगा। जो इसमें किहो का कमान कै उनका त्याग कर दिया, फिर निंदा तो इसको नहीं वरणती, एक तो इस निंदा द्वारा सोभा न पाएगा, और लोक भी इसको भला न कहेंगे और पाव भी इसको भारी होवेगा।

× × × ×

ब्रह्म तो आप सर्व जाण प्रवीन हैं, ऐसे खेद में संसार को रचकै फिर प्रवेश क्यों किया, जिसे संसार किये जन्म मर्ण दुःख हैं और रोग, दोस शरीर की पीड़ा के दुख है और अनेक प्रकार के हुए हैं ।

× × ×

पत्र ३५ से ७३ त्रुटित, मध्यपत्र पंक्ति १२ अक्षर ३०

[विद्याभवन, रतन नगर]

(१५) ज्ञानबत्तीसी-रचयिता-कबीरजी

आदि-

अथ ज्ञान बत्तीसी लिख्यते ।

अवधू मेरा राम कबीरा उदभुत अजर पीयाला पीया ।

अहे निरा कथा गंभीरा । १ ।

अगन भोम सुं चालकर अोछा, मैं अवगति का ऐधी ।
अरामे तरक करू तलबाना बौहौरि नर राखौं बांधी ।

× ×

कहै कबीरा मसतफकीरा लीया सार फटकाई ।
निरभै झंडा जरि को भूषण संधै संध मिलाई ॥

प्रति-छोटीसी गुटका पत्र ६ से १६, पं० ६, अ० १६, साइज ४॥ × ३।

[स्थान-अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(ङ) वेदान्त

(१) अवधू कीरति ।

आदि-

अथ अवधू कीरति लिख्यते-

दोहा

ध्रूव वसु निश्चल सदा, अंधू भाव दर जाव ।
स्कंध रूप जो देखियइ, पुदगल तबउ द्विभाव ॥ १ ॥

छंद

जीव सुलक्षण हो मो प्रति भासियो आज परिगह परंतणा हो,
तासों को नहीं काज कोई काज नांही परहु सेती सदा अइसौ जानियइ ।
चैतन्य रूप अनूप निज धन तास सौ सुख मानियइ ॥
पिय पुत्र बंधव सयल परियण पथिक संगी पेखणा ।
सम स्यउं चरित दैरहइ जीव सुलक्षणा ॥ २ ॥
असण वस्तु जु परिणवन सरण सहाइ न कोय ।
अपनी अपनी सकति के, सवै विलासी जोय ॥ ३ ॥

लेखनकाल-१८ वीं शताब्दी

प्रति-पत्र १ । पंक्ति १८ । अक्षर ४८ से ५८। साइज १० × ४। ।

विशेष-केवल प्रथम पत्र प्राप्त है अतः ग्रंथ अधूरा रह गया व कर्त्ता का नाम भी अज्ञात है ।

[स्थान-अभय जैन ग्रंथालय]

(२) आत्म विचार–माणक बोध

आदि–

अथ माणक बोध लिख्यते

मंगला एने करुणायतन सर्व कल्याणगु धाम ।
मन मानस सरहंस वतरग ! म ! णकरहु सियाराम ॥

ध्यान पूर्वक इष्ट देवता की प्रार्थना करे है—

सवैया

स्याम शरीर पीताम्बर सोहत दामनी जनौधन मांहि सुहाई ।
सीस मुकट अति सोहत है घन उपर ज्यों रवि देत दिखाई ।
कंठि माहि मणि मलवनी मानु नीलगिरि मांहि गंगजु आई ।
माणक मन मोहि बसो ऐसो नंद के नंदन फल कनाई ॥

टीका

श्याम शरीर के धन की उपमा, फुरकता पीताम्बर कूं दामनी की उपमा–सीस कूं धनकी उपमा, मणि जटत मुकुट कूं रवि को उपमा, कंठ रूप सिखर सूं लेकरि वक्षः स्थल ऊपर प्रपति भई जो मोतियन की माला तांकूं गंगाकी उपमा, वक्षः स्थल कूं नीलगिरी की उपमा।

अथ गद्य–

ज्ञानवांन के बाहुल करिकें बहोत हो तो अहं तदि भ्रमको उदे नहिं होत है, क्योंकि उनके सदा ही स्वरूपानुसंधान को दृष्ट उपाय है अरु बाह्य प्रवृत्ति के उपराम है। अतः भ्रम है, ताते भ्रम को घणों सो अवकाश नाहि ।

अन्त–

यमुना तट केलि करे विहरे संग बाल गोपाल बने बल भईयां ।
गावत हैंक कवि वंसी बजावत धावत हैं कबहु संग गईया ॥
कोकिल मोर कीन नाइवे बोलत कूदत है कपि मृग की नईया ।
माणक के मन अहिन सो एसो नंद के नंद यशोदा के छईया ॥

इति आत्मविचार ग्रन्थ मोक्षहेतु संपूरण समाप्तम् ।

वैसाख वदी ५ सुक्रवार लखतं गांव भादासरमध्ये वैष्णु श्री चत्रभुजदासजी, लिखावतं श्रीखुदाइजी श्रीपरमजी स्ववाचनार्थम् सं० १६०२ श्रीरस्तु कल्याणमस्तु-शुभं भूयात्

प्रति-पत्र ७५। पं० १२। अ० ३०। साइज ६॥×५॥

[स्थान- अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(३) द्वादस महावाक्य। रचयिता-प्रज्ञानानंद। पद्य १२१।

आदि-

मीमांसा प्रतिपादक कर्म विन करनी सर्व वातें मर्म ।
देह बीच सौ करै सु पावै, मीमांसा अैसे ठहरावे ।
विन बोये कैसे फलपावै, विन खाये कोऊ न अघावै ॥१॥

× × ×

मध्य-

वेद वेद प्रति हैं पद तीन, तिनको अरथ सुनौ प्रवीन ।
द्वादश महावाक्य सिंघात, सुनित ही जाय बीजकी भांति ॥२१॥
अेह लैयो रघुवेद सुनायौ, प्रज्ञानानंद ब्रह्म कहि गावै ।
तीन पद रघुवेद वखान्यौ, प्रज्ञानानंद ब्रह्म सत्य करि मानौ ॥२६॥

अन्त-

सोहं रुपा सर्व प्रकासी, कवल अज सुक्रिय ।
अविनासी अेक साचो पायो, अर्थ विवेकी जाने सही ॥१२१॥

इति द्वादस महावाक्य समाप्ता॥ (उपरोक्त गुटके में पत्रांक ५१ से ५६५)

नोट-इस गुटके में अेक भगवांनदास निरंजनी रचित अमृतधारा, अनाथ-कृत विचारमाला, कबीर की साखी, जगजीवनदासजी की बाणी, चतुरदास कृत भागवत अेकादश स्कंध भाषा, तुलसीदास ग्रंथ संग्रह, लालदास-कृत इतिहास भाषा, मनोहरदास निरंजनी रचित ज्ञान मंजरी (पद्य ४०४), वेदान्त महावाक्य, ज्ञान चूर्ण वचनिका, शत प्रश्नोत्तरी, ग्रंथ चतुष्टय, सुंदरदास कृत ज्ञान समुद्र के अतिरिक्त निम्नोक्त संतों के पद हैं—

पीपाजी के पद १७, गुसांई रामानंदजी के पद ७, आसानंदजी का पद १, कृष्णानंदजी के पद ४, धनाजी २, सैनजी १, फरीदजी का पदित नामा, भरथरी पद

लेखन काल-गुटका-संवत् १८२२ से १८२५ में लिखित पोकरणा व्यास मोहन, निरंजनी स्वामी मयाराम शिष्य भगतराम के पठनार्थ ।

[स्थान-स्वामी नरोत्तमदासजीका संग्रह]

(४) ब्रह्म जिज्ञासा । रचयिता-शंकराचार्य (?)

आदि-

ओम् ब्रह्म अेक सुभ चेतन । माया चेतन । जड़माया ब्रह्म को संजोग जैसे वृच्छ की छाया । वृच्छ सर जीव माया सरजीव नांही । वृच्छ विना छाया होय नांहि । माया की ओट ब्रह्म नांहि सूझै । ब्रह्म की ओट माया नांहि सूझै । ब्रह्म माया को अैसो संजोग ।

अन्त-

अरट घट का न्यांइ । कुलाल चक्र न्यांइ ।। जम चक्र न्यांइ । कीटी भ्रंग न्यांइ । लोहा चंबक न्यांइ । गलफी ध्यान न्यांइ ।। इसि ब्रह्म माया को निर्णय । पिंड ब्रह्मण्ड को विचार । परमहंस गिनान ।

इति शंकराचार्य विरचित ब्रह्म जिज्ञासा संपूर्ण ।

प्रति-(१) पूर्ण । पत्र ४ । पंक्ति ८ से १२ । अक्षर २२ । साइज ८॥ × ४। ।

(२) अपूर्ण-गुटकाकार ।

स्थान-प्रति (१) अनूप संस्कृत लायब्रेरी ।

,, (२) अभय जैन ग्रंथालय ।

(५) ब्रह्म तरंग । रचयिता— लछीराम । पद्य ६१ ।

आदि—

मोख लहन को मग यहै; सब तजि सेवो संत ।

जिनके वर प्रसादतें, हूजत अलख अनंत ॥ १ ॥

अन्त-

लछीराम यह कहिये काही ।
नानारूप सु पवनही आही ॥
त्यों सब जगत अकेलो आपू ।
आयु कहे जग लागे पापू ॥ ६१ ॥

लेखनकाल- संवत् १७८४ ।
प्रति- गुटकाकार ।

[स्थान- कविराज सुखदानजी चारण का संग्रह]

(६) योग वाशिष्ठ भाषा । रचयिता-छजू ।

आदि-

आदि के पत्र नहीं हैं ।

अन्त-

सहज सुने मनु भावही, उपजे सहज विचार ।
भाषा जोग वाशिष्ठकी, सून दिखावै सार ॥ १ ॥
जन्म मरण ते छूटही,सब दुख कबहु न होइ ।
सहजि तत्व पिछानिये, हरि पद पावै सोइ ॥ २ ॥

इति श्री जोग वाशिष्ठ भाषा छजू क्रिति दसमोध्यायः ॥
प्रति- पत्र २ से २५ । पंक्ति ७ । अक्षर २५ । साइज ७। × ३॥

[स्थान- अभय जैन ग्रंथालय]

(७) वेदान्त निर्णय । रचयिता-चिदात्मराम । गद्य ।

आदि-

प्रनम्य परमात्मानं सदगुरु चरण नमामिहं ।
त्रिधा पद निर्णयं च बुद्धया अनुसार रंच प्रोक्तं ॥
प्रथम प्रम सुन्यं निरलंभ वट वाजस्वयं ब्रह्म
अद्वैत्यां तां ब्रह्माश्रिता माया गुणस्यां ।

माया तै अति शूक्ष्म है गुणस्यांम माया का है ते कहिये जाविषैतीनि गुण

समान है। ते गुण कौन कौन-सतगुण, रजगुण, तमगुण, ता माया विसैं समि है तीन गुण तातें स्यांम माया कहिये।

अन्त-

अमरं अकरं अचलं अकल्पं अचलं आरोग्यं अगाहं अकाटं मनो वाचा अगोचरं। इति असी पद निर्णय। स्यामवेद वचन प्रमाणं। श्री गुरु सिख सौं कह्यौ। इति श्री चिदात्मराम विरचितायां त्रिपद वेदांत निर्णय संपूर्ण।

लेखनकाल-संवत् १८२५ भादवा सुदि १४ रविवारे लिखितं।

प्रति-गुटकाकार। पत्र ३३ से ५०।

[स्थान-स्वामी नरोत्तमदासजी का संग्रह]

(८) षट शास्त्र।

आदि-

परमातम को करौ प्रणाम। जाकी महिमा है सब ठाम।
च्यार वेद षट शास्त्र भये। अपनी महिमामें निर्भये॥

अन्त-

योम नहीं नर कोम वत, परम हंस सब ठौर।
अन्दर बाहर अस परे, बली नहीं कोइ और॥

लेखनकाल-संवत १७८०

[स्थान-सुराणा लायब्रेरी चूरू (बीकानेर)]

(९) ज्ञान चौपई। पद्य-६७।

आदि-

गुरु गोविंद गौरीश कौं, गनपति गिरा मनाय।
करौं प्रनाम कर जोरि के, सबके लागौं पाय॥ १॥
चौपई कोविद नाम करि, रच्यौ खेल करि ज्ञान।
भ्रमै मूढ़ परि खेल मैं, खेलै चतुर सुजान॥ २॥
मन बुद्धि चित अहंकार, पासे डारि विचारि कै।
लखिस्युं पंथ पग धार, खेल जीति घरकौं चलौं॥ ३॥

अन्त-

रज तम टारि प्रयास करि, तन पासो दे डारि ।
चलो जीत घरकौं अबै, हरि सर्वत्र निहारि ॥ ६७ ॥
चोप उ (र १) घर द्वैयात की पापी, पूर्व पुन्य प्रकास समास ।

लेखनकाल-संवत् १८४१ कार्तिक कृष्णा ७ भौ' (म) वासरे शुभम् ।

प्रति-पत्र ६। पंक्ति ९, १०। अक्षर २५। साइज ७॥×४॥

विशेष-ग्रन्थ का नाम स्पष्ट नहीं है। पत्रों के हासिये पर 'ज्ञान' शब्द लिखा है और ग्रंथ के आरंभ में चौपई का उल्लेख है अतः इसका नाम ज्ञान चौपई उचित समझ के लिखा गया है।

[स्थान-अभय जैन ग्रंथालय]

(१०) ज्ञानसार । रचयिता-रामकवि । सं० १७३४

आदि-

हंसवाहिनी सारदा, गनपति मति के धाम ।
बुद्धि करन वकसन उकति, सरन तुम कवि राम ॥ १ ॥
गुर गोवरधन नाथ पुनि, तारन तरन दयाल ।
उनही के परताप करि, लही बुद्धि यह माल ॥ २ ॥
करम कुल वरनौं सुनौ, कुल्लि(बुद्धि) कुली सिरमौर ।
सूरज के परताप मैं, ज्यों दीपक कुल और ॥ ३ ॥
प्रथीराज भुवपाल कै, भीष भीव समि जानि ।
तिनके आहाकरन भया, धरम मूल गुन जानि ॥ ४ ॥
राजसिंघ तिनकैं भए,पृथ्वीपाल भुवपाल ।
परिहरन करनी करनत्र, विप्रन कौ वनमाल ॥ ५ ॥
गउ विप्र कौ दास पुनि, रामदास वलि वंड ।
फतेसिंघ तिनिके भए, लए ऊडंडी डंड ॥ ६ ॥
अमरसिंघ तिनिके भए, सुहर धीर सरदार ।
नउ खंड महि मै प्रगट, पूरौ सार पहार ॥ ७ ॥
जगतसिंघ जगमें प्रगट, जगतसिंग वसि वंड ।

डिल्लीपुर सौं रोपि पग, करी खड्ग की मंड ॥ ८ ॥
तिनके आनंदसिंघ भए, सूर दानि गुन जांनि ।
गउ विप्र के पास पुनि, गहे वेद की वानि ॥ ९ ॥
गोपाचल नल दुर्ग प्रति, सुतों राइके थान ।
कुलदेवत वुढवाइ पुनि, रघुवंसी जग जांन ॥ १० ॥
अब कविकुल वरनन सुनौ, ताको कहै विचार ।
जोधा जोसी प्रगट महि, वेद क्रम गहै सार ॥ ११ ॥
तिनके जोसीदास भय, धरम तनौ अवतार ।
चलै वेद विधि कौ गहै, आंक तिनि पुनिवार ॥ १२ ॥
तिनके सुत गोपाल भए, दांनि जानि जसवंत ।
रीति गहै सत जुगत नी, हरि चरनिनि में संत ॥ १३ ॥
हरिजी पातीराम भट्ट, तिनके सुत मतिधीर ।
क-रनी कर'वतनी करै ह-रे और के पीर ॥ १४ ॥
हरिजी के सुत प्रगट महि तास नाम कविराम ।
देहि देहि लागी रहै, ताकै आठौ जाम ॥ १५ ॥
ब्रह्मपुरी सम स्यौपुरी तिहां विप्रको धाम ।
रूपवंत जसवंत पुनि, नाम विप्र कविराम ॥ १६ ॥
तिनि अपनैं बुद्धि बल प्रगट, ग्यानसार किय'सार ।
क्यौं हूं करि वचियौभीया, चौरासी की धार ॥ १७ ॥
सावन की सुति सप्तमो, वार बृहस्पतिवार ।
सत्रहसै चौतीस भय, ग्यानसार तत्सार ॥ १८ ॥
पठत गुनत पुनि सुनत हूं, मारग मुक्ति विचार ।
राम मिलन को राम कियौ, ग्यानसा-र निजसार ॥ १९ ॥

× × ×

अन्त–

ग्यानसार निजसार है, कठिन खड्ग की धार ।
रामकहें पगधार धरि, धार कहे जै पार ॥ २२ ॥
सुर–नर–नाग सुजस्नवर, सुनौ वात इकसार ।
राम पार पहुचाइ है, सुनि यह उडुपति पार ॥ २३ ॥

इति श्रीग्यानसार संपूर्ण ।

प्रति-गुटकाकार-पत्र ३०, पं० १७, अ० ११, कई पत्र एक तरफ लिखित-साइज ६×६

[स्थान-अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

समैसार । रचयिता-रामकवि । संवत १७३५

आदि-

सारद गनपति मतिदियन, सिधि बुधि दियन सुपूर ।
कृपाकरछ कीनैं सुनो, ग्रन्थ निवांचे कूर ॥ १ ॥
काल वंचनी कालिका, कुलदेव्या वलि वंड ।
गुरु **गोरधननाथनें**, करो बुद्धि की मंड ॥ २ ॥
अमरपुरी सी **सिवपुरी** कूरम **अमर** नरेश ।
जगतसिंह हीरा भयौ, औरंग कसियौ जेसु ॥ ३ ॥
जिनके **आनंदसिंघ** भए, धरममूल जसवंत ।
राम कहे अरि दल दलन, स्वर्गदानमैं-संत ॥ ४ ॥
तिनि के विप्र **गुपाल** सुनि, ताकै द्वै सुत जानि ।
हरिजी पातीराम पुनि, गहै वेद की वानि ॥ ५ ॥
हरिजी के सुत प्रगट महि, विप्र**राम** मतिधाम ।
छहौं वरन पालन करन, चौसठि आठौ जाम ॥ ६ ॥
तिनि बुधि बल करिकै कह्यौ, **समैसार** निजसार ।
राम किसन अवतार के समऐ कहै अपार ॥ ७ ॥
अगहन की सुनि अष्टमी, कर वरननि रजनीस ।
सत्रहसे पैंतीस भय **समैसार** निजसार ॥ ८ ॥
कविकोविद परवीन' सब, देखे करि सुविचार ।
राम कहै समझो मीया, **समैसार** निजसार ॥ ९ ॥
रामकिसन अवतार के, समऐ कहै विचारि ।
राम नाम यातैं धर्यौं, समैसार निजसार ॥ १० ॥

अन्त–

> जांनि जांनि सब जांनि है, या कौ सुनौ विचार ।
> समै समै के अंग सुनि, समैसार निजसार ॥ ३ ॥
> राम दोष जिनि दीजियौ, सुणिन कह्यौ विचार ।
> समये सगरे जानि है, समैसार सुनिसार ॥ ८४ ॥

इति समैसार संपूरन ।

प्रति–गुटकाकार। पत्र ३१ से ५६, पं० १७/१८, अक्षर १०/११,

वि० राम कृष्ण, गंगाजी का वर्णन है। साइज ६×६ (पूर्व ३० पत्र में ज्ञानसार भी इसी कवि का है ।

(च) नीति

(१) चाणक्य नीति दोहे।

आदि-

प्रथम पत्र नहीं मिलने से दूसरे प्रस्ताव का ५ वां पद्य यह है:—

धर्म मूल राजान्दे, तप के करि ब्राह्मण कोई ।
विप्र जहां पूंजे तहां, धर्म सनातन होई ॥ ५ ॥
धर्मेष्टि राजा होवे, अथवा पापी होई ।
तीह पीछे सब लोक ही, राजा प्रजा सब दोई ॥ ६ ॥

अन्त-

पूंगी फल अरु पत्र आदि राजा हंस हयराज ।
पंडित गज अरु सिंह, ए थान भ्रष्ट शुचि राज ॥ ११ ॥

इति चाणक्य नीति संपूर्ण ।

लेखन काल-लि० पं० धर्मचन्द संवत् १६०७ रा मिगसर सुदी ७ विक्रम पुर मध्ये ।

प्रति-पत्र-२१५, पंक्ति-६, अक्षर-२४, साइज-६×४।

[स्थान-अभय जैन ग्रन्थालय]

(२) चाणक्य राजनीति भाषा। पद्य १२२, बारहट उमेदराम सं० १८७२

आदि-

श्रीगुरुदेव प्रताप तैं सुकवि सुमत अनुसार ।
रचत नीत चाणक रुची, सब ग्रन्थन को सार ॥

स्वर तैं नर भाषा कही, जो समझै सब कोय ।
ताके ज्ञान प्रताप तैं, जड़ हू पंडित होय ॥

× × ×

अन्त-

कवी उमेद सुखपाय कै, दिन निस या सुख देत ।
राजनीत भाषा रची, विनयसिंघ नृप हेत ॥ १२१ ॥
संवत् द्रग रिष वसु ससी, मास पोष मध्यान ।
सूरबार तिथ सप्तमी, पूरण ग्रन्थ प्रमाण ॥ १२२ ॥

इति श्री बारहट उमेदराम कृत भाषा चाणिक्य संपूर्णम् । पत्र ३॥, पं० १८, अ० ५३, ले० २० शताब्दी।

[स्थान-गोविंद पुस्तकालय]

(३) पंचाख्यान । काल-सं० (१८) ८०, मा० सु० ६ गुरु । मेड़ता

आदि-

प्रथम चार पत्र न होने से प्रारम्भ त्रूटित है।

अन्त-

परदेश में और सरब बात भली पै सब जाति देख सकें नहीं। जबलौं घर में पेट भरे, तब लौं बाहर निकरिये नहीं। परदेश को रहनो अति कठिन है। तेरी दुष्ट पत्नी तो गई और तू सकाम है। नयो व्याह करि जाते कह्यो है। कुवां को पानी। बड़ की छाया। तुरत बिलोवना हो घृत। खीर को भोजन। बाल स्त्री। ये प्राण के पोषक हैं। अवस्था परमाण कारज कीजे तामें दोष नाहीं। यह उपदेश सुनि मगर अपने घर चल्यो ग्रह मांड्यौ। मनोरथ भयो। इहां विसन शर्मा राज पुत्रिणि सूं कही। ऐसी विध नीति की है सो काहुको परपंच देखि ठगाइये नहीं। अरु तुम्हारो जै कल्याण होहु। निकंटक राज होहु। इति श्री हितोपदेश पंचाख्यान नाम्ने ग्रन्थे लब्ध प्रकासन नाम पंचमों तंत्र।

× × ×

समंत असीये माघ सुदि, तिथि नौमि गुरु होहि ।
मारुधर पुर मेड़ते, गच्छ खरतर हित जोहि ॥ ४ ॥
पंडित बहुत प्रवीण अति, लायक तपसी जानि ।

पाठक पद धारिक प्रसिध, श्री आनन्द निधानि ॥ ५ ॥
तसु पद अंबुज रज जिसो, विद्या कुशल विनीत ।
लोक कहत जयचन्द मुनि, लिख्यौ ग्रंथ धरि प्रीत ॥ ६ ॥
चतुर गंभीर उदार चित, सुन्दर तनु सुकुमार ।
नाम भगौतीदास यह, कह्यौ लिख्यौ सु विचार ॥ ७ ॥
वेद गोत को आभरन, ओस वंस सिरदार ।
परगट सचियादास को, सुत जानत संसार ॥ ८ ॥
रवि ससि गिरि दधि गिरा, राम नाम अधिकार ।
तो लौं पोथी रसिक मिलि, चिरंजीव रहु सार ॥ ६ ॥

इति श्री पंचाख्यान ग्रन्थस्य पीठिका ।

लेखन काल-वा । लिखितु । अमरदास गांव-धावड़ी मांहे संवत् १६३६ रा भादवा वदि १२ बुधवार, पुख नखत्रे पोथी मुहुंता टोडरमल वचनार्थं ।

प्रति-१, पत्र-६० । पंक्ति-१५ । अक्षर-२०, ६॥ × ५॥ ।

२ पत्र-४३ । पंक्ति-२६ । अक्षर-२८, साइज ६॥ × ६॥
अन्त-इति हितोपदेश ग्रन्थ ग्वालैरी भाषा लब्ध प्रकासन नाम पंचमों आख्यानं ।

[स्थान-अभय जैन ग्रन्थालय]

(४) पंचाख्यान भाषा (गद्य)

आदि-

अथ पंचाख्यानरी वार्ता रूप भाषा लिख्यते ।

श्री महादेव जिनके प्रसादतें साधु पुरुष हैं तिनकौं सकल कारिज की सिध होय, कैसे हैं श्री महादेव जिनकै माथै चंद्रमा की कला, गंगाजी कै फेन की सी रेखा लागी है । अरू यह हितोपदेश सुनै ते पुरष सैंसकिरत वचन मांहि प्रवीन होय । नीत विद्या जांनै ।

अन्त-

इहां विसनु-सरमा राजपुत्रन सूं आसीस दीवी अरू कही तुमारौ जय होय, मित्र को लाभ होय । ऐसौ सुनि गुरु कै पाय लागा । अपनै नीति मारग में सुख सूं राज कियौ ।

इति श्री लब्ध प्रकासन पंचम तंत्र संपूर्ण। पंचाख्यान वारता संपूरणं।

लेखन काल-संवत् १८५३ वर्ष मिति पोह वदि १२ दिने लिखतुं श्री विक्रमपुर मध्ये कौचर मुहता श्री लिछमणदासजी लिखायितं। श्रीस्तु।

प्रति-गुटकाकार। पत्र-६०। पंक्ति-२४। अक्षर-१५, साइज ७×१०

[स्थान-अभय जैन ग्रन्थालय]

(५) **पंचाख्यान वार्तिक**। रचयिता-यशोधीर।

आदि-

पंचाख्यानस्य शास्त्रस्य, भाषेयं क्रीयते शुभा। यशोधीरेय विदुषां, सर्व सर्व शास्त्र प्रकाशिका

यह हितोपदेश ग्रन्थ सुणे ते सर्व वातन में प्रवीण होई। सर्व बातन में विचित्र होई।

अन्त-

जो लौं श्री गोविन्दजी के वक्षस्थल में लिखमी रहे। जो लौं मेघ में विजुलता। जो लौं सुमेर दावानल सौं भूमंडल में विराजे। तो लौं श्री नारायण नामें करि कीर्ति कियो।

लेखनकाल-संवत् १७५०

[स्थान-बृहद् ज्ञान भण्डार]

(६) **राजनीति**। पद्य १३०। श्री जसूराम कवि। १८१४ आसोज सुदी ६, शुक्रवार।

अक्षर अगम अपार गति, किनहूँ पार न पाइ।
सो मोनूं दीजैं सकति, जै जै जै जगराय॥ १॥

छप्पय

बरनी उज्जल बरन सरन जग असरन सरनी।
करनी करुना करन तरन सब तारन तारनी॥
सिर पर धरनी छत्र भरन सुष संपत भरनी।
भरनी अमृत भरन हरन दुष दारिद्र हरनी॥

धरनी त्रिसूल खप्पर धरन, मौ मौ हरनी सकल भय ।
जगदंब आदि बरनी जसू, जै जग धरनी मात जय ॥ २ ॥

दोहा

जय जग धरनी मात जय, दीजै बुद्धि अपार ।
करि प्रनाम प्रारम्भ करों, राजनीति विस्तार ॥ ३ ॥
जिन वषतन में पातसा, राजत आलमगीर ।
तिन बखतन पैदा कियो, गुन गुनीयन गंभीर ॥ ४ ॥
सौलंकी जगमाल सुत, उदयासंघ अनेक ।
गुन दीनो तातें गुनी, बांध्यो ग्रंथ विसेक ॥ ५ ॥
जैसे बेद बिरंचिको, अपरम दीये उपाय ।
राजनीति राजान कूं, असें दई बनाय ॥ ६ ॥

छप्पय

प्रथम अंग भूपाल, राजरानी अंग दूजै ।
तीजै राजकुमार, मंत्रि चोथे गनि लीजै ॥
पंचम्रु साहिब अंग, अंग षट राउत मांनूं ।
सातूं रहित यत अंग, कवी अठ अंग बषानूं ॥
जग जीत रीत जानैं जगत विविध विवेक विचार कह ।
जे करत सदा समरन जसू आठ अंग बरनें सु यह ॥ ७ ॥

अन्त—

दोहा

पढ़िबै तें मालिम परत, आठूं नीति अनीति ।
जसूराम चारन कही, राजनीत की रीत ॥ २९ ॥
संवत नाम अठारसे, बरष चऊदन मांह ।
आसौ सुदि नवमी सु कर, गुन बरन्यौ चित चाहि ॥ ३० ॥

इति श्री जसूराम कवि विरचिता, राजनीति सम्पूर्णं

सम्वत् १८८१ ना वर्षे माधव मासे कृष्ण पक्षे त्रियोदशी तिथौ रविवासरे संपूर्णं । लिखितं सकल पंडित शिरोमणी पंडितोत्तम पं० श्री १०८ श्री पं० ज्ञानकुशलजी

गणी तत् शिष्य पं० ॥ श्री ॥ पं कीर्तिकुशलजी गणी तत् शिष्य मुनी गुलाल-कुशल स्व वांचनार्थं। श्री मांन कूआ ग्रामे श्री सुपार्श्वजिनः प्रशादात् ॥

प्रति परिचय-पत्र १६ साइज ६×४॥ प्रति पृष्ठ पं० १२ पंक्ति ३६

[राजस्थान पुरातत्व मंदिर, जयपुर]

(७) नसियत नामा। रचयिता-अकबर पातसाह।

आदि-

अथ नसीयत नामा अकबर पातसाहा की लीखते।

अकबर पातसाह आपकि बातसाई भीतर दस्कर लग अमल लिखके भिजवा दिया सो लिखी। अवल सहजादा के नाम, दूसरा वजीरां का नाम, तीसरा अमीरु का नाम, चौथा जगीरदारु का नाम, पाँचवां हाकम का नाम, छठा सायर का नाम, सातम कुटवालां के नाम, इस मुजब अवल सब कामसें सायब कुं याद रखणा। अपना पराया बराबर जानके नि (इत) साफ करणा।

मध्य

पूछ्या जीनब मैं वृथा कौन ? कह्या-भलाई कर सकै अरु ना करै ६। पूछ्या-बुरा मैं भला कौन ? कह्या-अंधे से काणा, चुगलखोर से बहरा भला, लंपटी से नपुंसक, चोरी करणैं से भीख मांग खाना भला १०।

× × ×

अन्त-

ऐसा काम कीजै उसमें खवारी न होय, लोक हंसै नहीं, पाँच आदमी कहै सो मानीजै, ईज्जत सब की राखीजै, सो अपनी रहै। किसका मान भंग करणा नहीं, भोजन आदर विना जिमना नहीं। आपणो द्रव्य बेटा कुं दिखावणौं नहीं। द्रव्व देखावै तौ बेटा मस्त हुय जावै, अपनो हुनर सीखै नहीं, द्रव्य देख नजर ऊँची रखै, कुसंगत सीख जावै जिस वा.....................

प्रति-पत्र-११। पंक्ति-११। अक्षर-१७। साइज-६॥ × ४॥

विशेष १-अन्त का पत्र प्राप्त न होने से ग्रन्थ असमाप्त रह गया है।
इसमें नीति एवं शिक्षा सम्बन्धी बड़े महत्व की बातें हैं।

२–प्रति २० वीं शताब्दि लिखित है। अतः अकबर रचित होने में संदेह है। प्राचीन प्रति मिलने से निर्णय हो सकता है।

३–इसी (या अैसे ही) ग्रन्थ की एक अन्य प्रति भी हमारे संग्रह में है। उसका प्रथम पत्र नहीं है फिर भी बीच का हिस्सा मिलाने पर कहीं अेकसा पाठ है कहीं भिन्न, पर यह प्रति करीब २०० वर्ष पुरानी है। सम्भव है ऊपर वाली प्रति में लेखक ने भाषा आदि का परिवर्तन कर दिया हो। दूसरी प्रति का अन्त का भाग इस प्रकार है—

"और जीमतां भली ही बात करिये। आपण दरब छिपाइयै, किसी ही कुं कहियै नहीं, बेटै ही सुं छिपाइये। छिपाइयै मैं दोइ बात, घटि होइ तौ अपनी हलकाई, और बहुत होइ तौ लोक लागू हुवै। और अे बात कही तिन माफक भलौ, दुनियां भला दीसै। इति संपूर्ण।

४–ग्रन्थ के मध्य में लुकमान हकीम का भी नाम आता है और उसको नसियत नाम का ग्रन्थ भी अन्यत्र उपलब्ध है। पता नहीं इससे वह कैसी भिन्नता रखता है या अभिन्न है। दोनों के मिलने पर ही निर्णय हो सकता है।

[स्थान–अभय जैन ग्रन्थालय]

(८) व्योहार निर्नय—रचयिता—जनार्दनभट्ट

आदि–

श्रीगनपति को ध्यान करि, पूज बहुत प्रकार।
कहित बालक बोध कूं, अब भाषा व्योहार॥
नृप देखे व्योहार सब, द्विज पंडित के संग।
धरमरीति गहि छोडि के, कोप लोभ पर संग॥

अंत–

सत्रहसे तीस वदि, कातिक अरु रविवार।
तिथ षष्ठी पूरन भयो, यह भाषा व्योहार॥

इति श्रीगोस्वामि श्रीनिवास पौत्र गोस्वामि जगन्निवास पुत्र गोस्वामि जनार्दनभट्ट विरचित भाषा व्योहार निर्णय संपूर्ण।

पद्य संख्या ६५०, पत्र ३३,

[अनूप संस्कृत लाइब्रेरी]

(६) शिक्षा सागर। रचयिता-जान। रचना काल-संवत् १६६५ दोहा-२४३।

आदि-

अथ सिख्या सागर लिख्यते।

प्रथम करता सुमरिये, दूजै नबी रसूल।
पीछै ग्रन्थ जु कीजियै, सो जगु होइ कबूल॥ १॥
ग्रन्थनि कै मति जान करि, देउ सबनि को सीख।
विष सम लगै अग्यान कौ, ग्यानी जैसी ईख॥ २॥

अन्त-

कोउ ना ठहराइ है, लगै काल की बाइ।
जग तैं केते चलि गये, राजे राणा राइ॥ २४२॥
सोलैसे पंचानुबै, ग्रन्थ करयौ यह जांन।
"सिख्या सागर" नाम धरि, बहु विधि कियौ वखांन॥ २४३॥

इति श्री कवि जांन कृत सिख्या सागर संपूर्ण।

लेखनकाल-संवत् १७८६ वर्षे फाल्गुन मासे कृष्ण पक्षे १२ कर्मवाट्यां लिखितं पं० भवानी दासेन श्री रिणिपुरे।

प्रति-पत्र ५ पंक्ति-१७। अक्षर-५० साइज १०। × ५

विशेष-प्रस्तुत ग्रंथ के कई दोहे बड़े शिक्षा प्रद हैं—

निरमल राखो मन मुकर, अचल ध्यान करतार।
पाप मैल ते मंजि है, दे लालच मुख छार॥ २२॥
दान पुन्य निस दिन करै, हित सों गहै पुरांन।
नहिं छुए पर नार को, यहु सेवा है पांन॥ २३॥

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(१०) सभा पर्वणी भाषा टीका । रचयिता-व्यास देवीदास । रचना **काल-संवत् १७२० । अनूपसिंह कारित ।**

आदि-

विघ्न राज पद विमल, नमो विनय धरि चित्त ।
करूँ नीत भाषा अरथ, नारद कहै कवित्त ॥

× × ×

महाराज करणेस सुत, अनघ अनूप साधार ।
हुकम कीयो टीका रची, भाषा व्यास विचार ॥ ५ ॥
संमत् सतरै सै समै, वीसै कर्यो विवेक ।
रसिकराज कारण रची, टीका अर्थ अनेक ॥ ६ ॥

प्रति-गुटकाकार-

विशेष-टीका गद्य में है ।

[स्थान-कविराज सुखदानजी चारण के संग्रह में]

(ख) शतक साहित्य—मूल व टीकाएँ

(१) अमरु शतक भाषा । पद्य १२२ । रचयिता—पुरुषोत्तम । रचनाकाल-संवत् १७२० पो० व० । कुमाऊं नरेश बाजचंद के लिए ।

आदि—

पूजै को सरवर गुननि, पूजै जाहि महेसु ।
जाके दान गनै सु को, असो देव गनेसु ॥ १ ॥
तारा बलु तौ चंद्र बलु, चंदु भलें भलौ भानु ।
जो सु भवानी होइ सुभ, तो सुभवानी मानु ॥ २ ॥
सकल पुहमि परसिद्ध है, नगर कंपिला नांउ ।
बड़े बड़े कविता (कविजन) तहां, कविताई को ठांउ ॥ ३ ॥
सहसकृतुं पढिकै कछु भाषा करै कवित्तु ।
पुरुषोत्तम कवि नाम है, सकल कविनि को मित्तु ॥ ४ ॥
पुरुषोत्तम कवि चाकरी, करी कुमाऊं आइ ।
बाज बाहदुरचन्द नृप, कीनी कृपा बनाइ ॥ ५ ॥
चंदवंस अवतंस जे, कीरति अंस वि-साल ।
कूरम परबत सोभए, बड़े बड़े भुवपाल ॥ ६ ॥
ताही कुल में है लयो, बाजचन्द अवतारु ।
तेग त्याग अरु भाग को, भाषतु हौ व्यवहारु ॥ ७ ॥

पाउत ही राजु पाउ तहाँ रोपि अंग दलो, उमराव दखिनी उठाइ दयो आहियो ।
बहुरि कीवार है पहार जीतेपूरव के, मिलो हो पहारसाहि सूरो जो सिपाहियो ।
मिग्रनी कौ आरिके उजारि ज्यौं नीपांदो थान, लुह बाढ़ मारि तेजु कहां लौं सराहियौ ।

नंद नीलचंद के कमाऊं पति बाजचंद, सवरे बसंत की सपथकियौ चाहिये ।

× × ×

बरनतु करि सब बरन कौ, अरथु सकल समुझाइ ।
अमरु शत सम रूप कै, भाषा ग्रन्थु बनाइ ॥ १५ ॥
आइसु जब ऐसो भयो, आइसु बैठौ चित्त ।
तब अमरु शत के करे, भाषा प्रगट कवित्त ॥ १६ ॥
संवत् सत्रहसै बरस, बीती है जहं बीस ।
द्वैज पोष वदि बारु रवि, पुष्य नक्षत्र को ईस ॥ २१ ॥

अन्त–

पुरुषोत्तम भाषा करयौ, लखि सुरवानी पंथु ।
इति श्री सिंगरयौ है भयौ, अमरु शतक यह ग्रन्थु ॥ १२२ ॥

लेखन काल–संवत् १७२६, वर्षे फागुण वदि १०, दिने शनिवारे, महाराजाधिराज महाराज श्री अनूपसिंहजी विजय राज्ये, मथेन राखेचा लिखतं ।

प्रति–पत्र १८ पं० — अ० — साइज–

[स्थान– संस्कृत लाइब्रेरी]

(२) (प्रेम) शतक । दो । १०४ ।

आदि–

ॐ नमो त्रैलोक्यमै, प्रानाकर करतार ।
प्रेमरूप उद्धरन जग, दयासिंधु अवतार ॥ १ ॥
इक्क लहे पति लोक विस, सचेव वहि निसि जग्गि ।
आडंबर रुचि प्रेम को, रच्यौ महम्मद लग्गि ॥ २ ॥

अन्त–

उर समुद्द मथि ज्ञान वर, काटे सात रतन्न ।
पेम हेम कुंदन करत, जुरे जतन्न जतन्न ॥ ४ ॥
इति शुभम् ॥

लेखनकाल–१७ वीं शताब्दी ।

प्रति-प्रति परिचय विरह शतक के विवरण में दिया गया है।

[स्थान-अभय जैन ग्रन्थालय]

(३) भर्तृहरि शतक त्रय भाषा (आनंदप्रबोध) रचयिता-नैनचंद-सं० १७८६ विजयदशमी—

आदि-

अगनित सुख सम्पति सदन, सेवित नर सुर वृंद।
वंदूं नित कर जोर करि, सरस्वति पद अरविंद ॥
कहत करन आपद हरन, गनपति अरु गुरुदेव।
करि प्रणाम रचना रचै, भाषामय बहुभेव ॥
कमधवंश आदित सम, लायनि पुन्न सुखकंद।
श्री अनूप भूपेस सुत, युं ओपतिं ज्युं इंद ॥
करि आदर कविसुं कह्यो, यों श्री आणंद भूप।
भाषा भर्तृहरि शतक की, करौ सवैया रुप ॥
रचना अब या ग्रन्थ की, सुनीयो चतुर सुजांन।
प्रगट होत या भनतही, अमित चातुरी ग्यांन ॥

वार्ता

उज्जैणी नगरी के विषै राजा भर्तृहरिजी राज करतु है, ताहि एक समै एक महापुरुष योगीश्वरै एक महा गुणवंत फल-भेंट कीनी।—

फल की महिमा कही जो यह खाय। सो अजर अमर होई। तब राजा यें स्वकीय राणी पिंगला कुं भेज्यो। तब राणी अत्यंत कामातुर अन्य पर पुरुष तें रक्त है, ताहि पुरुष को, फल दे भेजो अरु महिमा कही वह जन वेश्या तें आसक्त है, तिन वाको फल दीनो, तिहि समै वैश्यातें फल लेके अद्भुत गुन सुनि के विचार्यो जो यह फल खाये हुं बहुत जीवी तो कहा, तातै प्रजापालक, दुष्ट ग्राहक, शिष्ट सत्कार कारक, षट दर्शन रक्षक, ऐसो राज भर्तृहरजी राज बहुत करै अजर अमर ह्वै तो भलै। यौ विचारि राजा सुं फल की भेंट करिनी। राजायैं पूर्व दृष्ट फल देखित पाउस करिकै राजा संसार तें विरक्त भयौ, तब यह श्लोक पढ़ि कै जोग अंगीकार कीनौ।

आदि-

सुख सुं है रिझावत नांहि असाधि सु, अज्ञ सबै गुन भेद गहे हैं।
अति ही सुखसे ज्ञ रिझावन जोग, विशेष गुनज्ञ सुभेद लहे है।

पुनि औ कछु पंडित ज्ञान के लेसिते, पंडित है अभिमान बहै है ।
नर नांहि रिझे तऊ सो विधि जू विधि, सो जू हजार विचार कहै है ।

× × ×

अंत-

पर के घर बहु धन निरखि, पर त्रिय सुंदर जोई ।
यातैं सुकृत सो रहित मन, चित आकुल होई ॥ १०९ ॥
संत सहज अरु नीति मग, दाता ज्ञाता ज्ञान ।
मूरख निरदय सदय के, बरने गुन इह वानि ॥ ११० ॥

प्रशस्ति-

विक्रमनगर अ विराजहि, अलकापुर अनुहार ।
सुथिर वास सुंदर सरस, रिद्धि सिद्धि भंडार ॥
कमधवंश राठौरपति, श्री अनूप महाराज ।
यों जीते अरिदल सकल, ज्यों हरि असुर समाज ॥
ता को नंदन सुखसदन, राजति ज्यों करनेस ।
प्रबल तेज साहस प्रबल, आनंदसिंघ नरेस ॥
सकल सभा जाकी चतुर, सकल सूर सामंत ।
सकल लोक दातार पुनि, साहसीक मतिमंत ॥
याकी छति मति गति उकति, वरन सकै कवि कौन ।
खाग त्याग निकलंक नृप, सुजस भरे त्रिहुंभौन ॥
कवि कवि सुं अति ही अरघ, बहु आदर धरि हेत ।
ग्रन्थ रचायो तिन सुगम, सकल लोक सुख हेत ॥
नीतिसतक संस्कृतमय, चतुराई को ठांम ।
करि भाषा रचना धर्यो, आनंद भूषण नाम ॥

६ ८ ७ १
संवत् रस बसु रिषि रसा, उज्जल आसू मास ।
विजयदसमी वर वार रवि, कीनो ग्रन्थ परकास ॥
खरतर गछ पाठक महा, श्रीक्षमालाभ गुरु राज ।
तासु शिष्य वाचक विदुर, ज्ञानसागर सु समाज ॥

ताशु शिष्य पंडितप्रवर, पाठक श्रीजससील ।
ताकौ अंतेवासि है, नैनसिंह सुखलील ॥
नैनसिंह खरतर जती, सती सदा सुखदाय ।
ग्रन्थ बनायो सित सुगम, श्रीमहाराज सहाय ॥

इति आनंदसिंह महाराज विरचिते नीतिशतक संपूर्णम् । सं०१७६६ ज्ये० सु० १,

[अनूप संस्कृत लाइब्रेरी]

द्वि० शृंगारशतक–

गनपतिय बहु गजवदन, एक रदन गुन खानि ।
विघन विनासन सुखसदन, हरनंदन हित हांनि ॥
× × ×
तासु अनुग्रह पाईकै, करि कविसर ग्रन्थ ।
दुतीय शतक सिंगार मया, सुगम रसिक को पंथ ॥ ६ ॥

अंत–

सुबधि दूसरै सतक की, रचना अति सुखदाइ ।
नेनचंद खुरतर जती, भाषा लिखी बनाई ॥

तृतीय वैराग्य शतक–

चिदानंद आनंद मय, भासति है तिहु काल ।
अति विभूति अनुभूति मय, जय जय भव प्रतिपाल ।

अंत–

जगत प्रसिद्ध धरनीस वर, आनंदसिंध अपार ।
नयन जती यौं प्रीति कर, दई असीस सुधार ॥ ७ ॥

(४) भर्तृहरि वैराग्य शतक सटीक (चौथा प्रकाश)

रचयिता– जिनसमुद्रसूरि सं० १७४० ।

आदि–

प्रणम्यच श्रीजिनचन्द्रसूरीन् गुरुन् गिरः सर्व्व गणाधिनाथान् वदयेहमाश्रित्य श्रुतोद्भवंच मा प्रकाशोथ चतुर्थ संज्ञ १,

अब श्रीवैराग्य शतक कैं विषै **तृतीय प्रकाश** बखान्यौ तो अब अनंतरि **चौथा प्रकाश गुवालेरी** भाषा करि बखानता हूं। प्रथम शास्त्रीक षड्भाषा छोडि करि या **अपभ्रंश** भाखा बीचि ऐसा ग्रन्थ की टीका करणी परी सु कौन वासता ताका भेद बतावता है जु उर भाखा खट् है ताका नाम कहता है-संस्कृतं प्राकृतं चैव मागधं शौरिसैनकं, पैशाचिकं चापंभ्रंशं च षट सु भाषं प्रकीर्त्तितं १ यहु षट देश की षट भाषा है सु शास्त्र निबद्ध है सु तौ व्याकरणादि काव्य कोष पढे हौवें ताकौं प्रबोधज्ञान होवइ परं अल्प परिचर्या नूतन वेषधारी तिसकौं वे भाषा षट कठिन हौवै ताथैं भगति लोक रामजन मुंडित वैरागी तिन्हूं कैं प्रबोध कै वास्ते उन्हीं यह ग्रंथ बंधायौ ताथैं उन्हीं कै उपगार कै वास्तै यह श्री भर्तृहरि नामा शास्त्र दूजा शतक वैराग्यनामा तिसकी टीका **सर्वार्थ सिद्धि मणिमाला** तिसकौं चौथौ प्रकाश वखाणता हुं तत्रादिमं काव्यं ॥ छ: ॥ प्राणाघातेत्यादि अब कविजन कहता है श्रेयसामेवपंथा श्रेय कहावै मोक्ष कल्याण तिणकौ यौही पंथ है-यौही कौण सौई बतावता है-

अन्त-

वैराग्य शतकं नाम ग्रंथं विश्वेमहोत्तमं सटीकं सार्थकं पूर्णकृतं जैनाश्विना शुभं ५ इति श्री वैराग्य शतकं शास्त्रं ॥ महावैराग्य कारणं सुभाषं सुगमं चक्रे श्री समुद्राद्यंतसूरिणा ॥ ६ ॥ श्री मत्सर्वार्थसिध्याः मणि स्रजि मतिनारत्नकानिधृ-तानि। नाना शास्त्रागरेभ्यः श्रुत श्रुत विधिना। मथ्यतानि स्थितानि। प्रोद्यत्श्री वेगडाख्यगगन दिनमणिनां गणीनां सु शिष्यैः शिष्यानामर्थ सिध्यै। जिन दधि रविभिः। शोधनीयानिविद्भिः ॥ ७ ॥

शीघ्र गत्या यथा पत्री लिख्यते भाष्य सौमया लिखिता शतक टीकाच शौध्याविद्भिः सतां गुणैः ॥ ८ ॥

वैराग्य शतकाख्यस्य टीकायां श्रीसमुद्रभिः सर्वार्थ सिद्धे मालायां प्रकाश सूरीयो मतः ॥ ६ ॥

इति श्री श्वेतांबरसूरि शिरोमणिनां परमाध्यइच्छासन गगनां दिनमणिनां भट्टारक श्रीजिनेश्वरसूरि सूरीणां पट्टे युग प्रधान पूज्य परम पूज्य परमदेव श्री जिनचन्द्रसूरीश्वराणां शिष्येण भट्टारक श्री जिनसमुद्रसूरिणा विरचितायां

श्री भर्तृहरि नाम वैराग्य शतक टीकायां सर्वार्थ सिद्धि मणिमालायां चतुर्थ प्रकाशोयं समाप्तः । श्रेयसेस्तात् कल्याणं भूयात् सौ धर्म्म गच्छे गगनांगणेस्मिन् श्री वज्रसूरिभवच्चसूरिः युग प्रधानाचयके प्रभाकृदुद्योतनोद्योतकरोगणींद्रः १ श्री वर्द्धमानाभिध वर्द्धमानः सूरीश्वरो भूच्चरमा प्रधानः तत्पट्टधारी भुवनैकवीरो जिनेश्वरंसूरिगुणैः सधीरो २ जिनाद्यचंद्रोभयदेवसूरिः क्रमेण सूरिर्जिनवल्ल-भाख्यः तत्पट्टधारी कृत विघ्नभूरियुगप्रधानो जिनदत्तसूरिः ३ पत्तिर्जिनाद्यस्त-त्पट्टचंद्रः श्रीचंद्रपट्टे प्रवरो गणींद्रजिनेश्वरः श्रीकुशलादिसूरिः क्रमेणतु श्रीजिनचंद्र-सूरिः ४ श्रीवेगडेत्याख्य गणस्य कर्त्ता संपूर्ण वृद्धाख्य खरस्यधर्त्तातरांत्य शब्दाभिध गच्छ नेता जिनेश्वरसूरिरभूज्ज्ञानेता ५ श्री शेखराख्यो जिन धर्म्मसूरिः ततः परं श्री जिनचंद्रसूरिः श्री मेरूपट्टे सुगुणावतारो गुणप्रभः सूरि गुणैरूदारो ६ जिनेश्वरतस्य विनेय एव तत्पट्टधारी जिनचन्द्रदेवः युग प्रधानः सुगुणैः प्रधानः तत्पट्टधारी सुविराज्यमानः ७ सूरेः जिनचंद्रा...गुरोः शिष्येणचाग्रहात् टीका शत प्रबंधस्य कृता भाषा मयी शुभा ८ शिष्याणां सेवकाणांच सूर्य्यांतः श्रीजिना श्विना-न सर्व्वार्थसिध्याश्चाख्यायाः मणिमाला मनोहरा ॥ ६ ॥ युग्मं पूर्ण चन्द्राशिव पत्ताख्य २२१० प्रमिते वीर वत्सरे पूर्ण वेद समुद्रेंदु वत्सरे विक्रमाद्धये १७४० ११ कार्त्तिक्यां शुल्क पूर्णायां दिने जीवेसु योगकेडरंगा कस्य साहस्यवादे कर्णपुरे तथा १२ तत्राधीशेहय नूपेस्मिन् बलवंशेजयेंदुके तीर्थे श्री वीरनाथस्य पार्श्वेदेवगिरे स्तथा १३ आरब्धातुमयातत्र संपूर्णा पितृता तथा चतुषष्टि दिनैरेषा सर्व्व सिद्धार्थ दायिनी १४ नीति सिंगार वैराग्याधिकारैस्त्रि शतैः शुभैः त्रिवर्त्री चित त्रिस्कंधा रचितैषामय १५ धर्म्मार्थ काम संसिद्धा निबद्धावत्रंकैस्त्रिकैः धारयंतिहि कंठे तेषां सर्व्वार्थ साधिनी १६'१५ संस्कृता प्राकृता देशी क्वचिदुन्यापिकीर्त्तिता ग्वालेर देशजा जाता सर्व्वतोस्यां धृता स्रजि १६, पुनः पाठांतरं क्वचित्संस्कृता प्राकृता चान्यदेशी परं सर्व्वतो देश ग्वालेर जाता बुधै रेवज्ञात्वामयाग्रंथिताभिःगले धार्य्यतां सर्व भूषार्थ सिध्यै १७ यावद्धराभ्रचन्द्रार्क ध्रुव सागर पर्व्वताः ताव भद्रंतुग्रन्थोयं सर्व्वार्थ मणिमालिकं १८ । श्री सौधर्म्मेग णे पट्टधारी श्री वीरशासने युग प्रधान श्रेयान्तु सूरिः श्री जिनवल्लभः १६ । गच्छस्तु युग प्रधानानां श्री सौ धर्म्मिक संज्ञिकं पूर्ण सत्यतरांकंच वेगडामुख शोधनं २० । वेदाधिक द्विकसाहस्त्री संख्या तेषां प्रवर्त्तते युगे स्मिन् युग प्रधानानां श्री जिनागम संग्रहे २१ । शासने वीर

नाथस्य प्रमिते पंचमारके ख ख चंद्राश्वि वार्षिक्यां, भविष्यंति कलौयुगे ।। २२ ।। प्रसिद्धोयं समाख्यातः, समाचार्य्यत्रवर्तते । स्वयं सर्व्वेषु गच्छेषु, ज्ञातव्यो ज्ञान संग्रहात् । २३ । पट्टे श्री जिनचंद्रस्य, सूरेः श्री विजयीगुरुः । तत्प्रसादात् कृता पूर्णा, श्री जिनाऽध्यादि सूरिणा ॥२४॥ वाच्यमाना पठ्यमाना, श्रूयमाणारुचहन्निशंक्षेमारोग्यायु कल्याण, प्रदा भवतु सर्व्वदा ॥ २ ॥ श्री सर्व्वार्थ सिध्याख्या मणिमाला महोत्तमाया- वच्च शासनं जैनं, तावच्चनंदताच्चिरं ॥२६॥ सर्व्वागमेष्वोधिष्ठाता, श्रुतज्ञाश्रदेवता । न्यूनाधिकमिहा ख्यातं तृक्षमस्व महेश्वरि ॥ २७ ॥ सर्व्वमंगलमंगल्यं० ॥२८॥ मंगलं सर्व्व भूतानां, संघानां मंगलं सदा मिंगलं सर्व्व लोकानां, भूयात्सर्वत्र मंगलं । १ सर्व्व मं० २ मंगलं म० ३ शिवम ॥ ४ ॥ मंगलं लेखक स्यापि, पाठक स्यापि मंगलं मंगलं शुभंभवतुकल्याण, कल्याण लेखक मालिका । भव्य प्राणिनां पाठकानांच, श्री जिनेश प्रभावनः । ६ ।

(५) भर्तृहरि शतक त्रय पद्यानुवाद । रचयिता-विनयलाभ ।

१ नीति शतक पद्यानुवाद-पद्य १०३

आदि-

जाहि कुं राखत हौं मन में नित, सो तिय मोसौं रहे विरची ।
वा जिन को नित ध्यान धरै, तिन तौ पुनि और सो रास रची ।
हमसौं नित चाह धरै कोई और, सु तौ विरहानल मैं जु लची ।
धिग ताहि कुं, ताकुं, मदन्नकुं, मोकुं, इते पर वात कछु न वची ॥ १ ॥

अन्त-

प्रथम शतक यह नीति के, विनय लाभ सुभ वैन ।
भाषा करि गुन वरणियौ, सुर वानी तैं अैन ॥ २ ॥
नीति पंथ अरु सत्त मग, दानी ध्यानी और ।
परम दयाल कृपाल के, गुन वरणे इहि ठौर ॥ ३ ॥

२ श्रृंगार शतक भाषा । पद्य १०३ ।—

आदि-

संभु के शीश में चंद कला, कलिका किधौं दीपहु की द्युति निर्मल ।
लोल पतंग दह्यौ किधौं काम, लस सुदसा सुखकी जु महाबल ।

दूरि करै चितको अज्ञान, सोइ बन्यौ दीपक तम मंडल ।
तैसेही योगिन के मन मौन में, सोमित है हरदीप सिरनबल ॥

अन्त-

यह सिंगार की बरणना, सतक दूसरै मांहि ।
विनयलाभ शुभ वैन सौं, बरन्यौं विविध बनाहि ॥ १०२ ॥
सुभ मति कविना चित्त में, हरख धरे यहु देखि ।
कुमति दुरन्जन तिन्नको, हरष हरे यह पेखि ॥ १०३ ॥

३ वैराग्य शतक—

आदि-

ज्ञानी नर मत्सर भरे, प्रभु दुषित अहंकार ।
और अज्ञान भरे बहुत, कौन सुभाषित सार ॥ १ ॥
है कछु नांहि असार संसार मैं, जो हित हेत भलौ मन ही कौं ।
सुभ कर्म किये·······ल अद्भुत, ताके विपाक भये दुखही कौं ।
पुन्य के जोर थैं पावतु है सुभ, भोग संजोग विषय रस ही कौं ।
धो दिख यार सहैं विष तुल्य, त्रिचार करौं यह बात सही कौं ॥ २ ॥

अन्त-

पद्य ६१ के बाद का अन्तिम पत्र खो जाने से प्रति अपूर्ण रह गई है ।
लेखन काल-१८ वीं शताब्दी ।
प्रति-पत्र ६। पंक्ति २६ से ३० । अक्षर ८२ से १०० ।

[स्थान-अभय जैन ग्रंथालय

(६) **भर्तृहरि वैराग्य शतक वैराग्य वृन्द** । रचियता-भगवानदास निरंजनी ।

गणनायक गनेश कौ, बंदौं सीसु नमाइ ।
बुद्धि सुध प्रकाश होइ, विघन नाश सब जाइ ॥ १ ॥
पुनि प्रनाम गुरु कौ करौ, नासैं विघन अपार ।
गुरु ईश्वर सम तुल्य है, से पुनि आपु विचार ॥ २ ॥

सोरठा

ग्रन्थ नाम प्रमान, "वैराग्य वृन्द" सो जानिये ।

भाखौं बुद्धि उनमान, मूल भृत्यहरि भासतें ॥

इति भृत्यहरि भणित वैराग सत मूल तत भसित वैराग्य "वृन्द" नाम भाषकोम खंडनो भगवानदास निरंजनी कथ्यते प्रथमो परिकरन। पद्य हि० ६२६ सं०२४। ग्रन्थ में ५ प्रकाश है पत्र ३०, पं० ११ अ० ४४)

अन्त–

मूल भर्तृहरि शत यहै, ताको धरि मन आश।
ता परिभाषा नाम यह, "वैराग्य वृन्द" परकाश ॥

× × ×

मूल हानि कीन्हीं नहीं, करि सुधाक विकास।
बाल बुद्धि भाषा लहै, पंडित सुधी प्रकास ॥

[स्वामी नरोत्तमदासजी संग्रह, गुटका अनूप संस्कृत लाइब्रेरी]

(७) भाव शतक। रचयिता–सारंगधर दोहा १२६।

आदि–

नायक आतुर काम वस, वसन उघारत वाम।
मुग्धा मुख नम्रित कियौं, कहि सुजान किहि काम ॥ १ ॥

अर्थ–

सुरत समर कारण इहां, आयो आतुर कंत।
मनु मुगधा बूझत कुचनि, जुझह काज बलवन्त ॥ २ ॥

अन्त–

होइ अजान सुजान सुनि, रीझै राज समाज।
सारंगधर सुनि भावशत, मनहि खिलावत काज ॥ १२४ ॥

अर्थ–

जाकउ मनरथ तें विरस, सरस करण की आस।
सारंगधर ता तोष कौ, विरचित विविध विलास ॥ १२५ ॥
दुख गंच (ज) न रंजन हृदय, भंजन नित चित्त ताप।
सारंगधर सुनि भावशत, विधि विचारहु आप ॥ १२६ ॥

इति भावशतक दूहा समाप्त।

लेखनकाल–संवत १६७२ श्रावण वदि १०। पं० मोहन लिखितं।
स्थान–मानमलजी कोठारी संग्रह। प्रतिलिपि अभय जैन ग्रंथालय।

(८) विरह शतं । दोहा ११

आदि–

जो उच्चरिय सु नाम तुम्र, अस बुडियै जु अरत्थ ।
सोइ करता अक्खर सरिस, भंजन गदन समत्थ ॥ १ ॥
सम कहुं कहन ही कहां तहहि, रे पवित्र कहि मोहि ।
माया मुद्रित नयन मम, क्यूं करि देखूं तोहि ॥ २ ॥
इन नैनन देखूं नहीं, इहि विधि ढूंढ्यौ जग्ग ।
सोइ उपदेसो ज्ञान महि, जिहि पावौ तूम्र मग्ग ॥ ३ ॥
विरह उपावन विरहमैं, विरह हरन सावंत ।
विरह तेज तन नहिं सकत, व्याकुल महि जावंत ॥ ४ ॥

अन्त–

अहि मुख सुधा कि पाइयै, सीत तनु अन लेहि ।
दुज्जन याहि भलप्पनउ, सुचि श्वानह का केह ॥ ११८ ॥

इति विरह शतं ।

प्रति–प्रति में प्रेम शतक साथ में लिखा हुआ है । पत्र ३ । पंक्ति २३ । अक्षर ८० । साइज–१०॥ × ५, १७ वीं स०

[स्थान–अभय जैन ग्रंथालय]

(९) शृँगार शतक । रचयिता–महाराज देवीसिंह । रचनाकाल–सं० १७२१ जेठ वदि ९ ।

मध्य

वैनी भुजंग लसै कटि सिंह सु, पच्छ पयोधर दोऊ वनै ।
तीछन उज्जल वज्र समान तै, पांतिन सोहतु दंत घनै ।
कंजुल चाल कहां यह पाउत, मनहि देखि गए हूँ वनै ।
तीर से तेरे ये नैन बली, इते परए सब मोहै मनै ।

अन्त–

महाराजधिराज साहित्यार्णकर्णधर श्री महाराज श्री देवीसिंह देव विरचिते शृंगार शतकं ।

[1]चंद [2]नैन [7]हय [1]भूमिजुत, जेठ नवै वदि जानु ।
देवीसिंह महीप किय, सत सिंगार निरमानु ॥

प्रति– विकीर्ण पत्र । पत्रांक एवं पद्यांक नहीं लिखे हैं ।

(स्थान– अनूप संस्कृत पुस्तकालय ।)

(१०) **समता शतक** । पद्य-१०५ । रचयिता-यशोविजय ।

आदि-

समता गंगा मगनता, उदासीनता जात ।
चिदानंद जयवंत हो, केवल भानु प्रभात ॥ १ ॥

× × ×

अन्त-

बहुत ग्रन्थ नय देखि के, महा पुरुष कृत सार ।
विजयसिंह सूरि कियौ, **समताशत** को हार ॥१०३॥
भावन जाकूँ तत्व मन, हो समता रस लीन ।
ज्युं प्रगटे तुझ सहज सुख, अनुभव गम्य अहीन ॥१०४॥
कवि **यशविजय** सु सीखए, आप आपकूं देत ।
साम्य शतक उद्धार करि, **हेमविजय** मुनि हेत ॥१०५॥

प्रति-प्रति लिपि

[अभय जैन ग्रंथालय]

(ज) बावनी बारखडी व अक्षर बत्तीसी साहित्य

(१) अन्योक्ति-बावनी । पद्य-६२ । रचयिता-विनय यत्ति ।

आदि-

ऊँकार वर्णभेद, पायौ तिन पायौ सब,
याकूं जो न पायौ, तोलुं कहां और पायौ है ।
अंग षट वेद चार, विद्या पार वारही मैं,
जहां तहां पंडितन, याकौ जस गायौ है ॥
नहीं जाकी आदि यातैं, भयौ सब ठौर आदि,
जे हैं बुद्धिमान वाकुं, अति ही सुहायौ है ।
सुखको करण हार, विश्व विश्व वशीकार,
सबहीनैं ठौर ठौर, याही कूं बतायौ है ॥ १ ॥

अन्त-

खरतरै गच्छ भूरि, भाग्य जिनभद्र सूरि,
भये गछराज वाकी, साखा विस्तार मैं ॥
पाठक प्रवीन नयसुन्दर, सुगुरुजू के,
शिष्य सावधान सुद्ध, साधुके अचार मैं ॥
वाचक प्रधान भक्ति-भद्र गुरु विद्यमान,
पाइ कै प्रसाद वाकौ, कृपा अनुसार मैं ॥
बावन करण आदि, दे दे विनैभक्ति कवि,
करियहु युक्ति, नाना भाव के विचारमैं ॥ ६१ ॥
महाकविराज की बनाई, रीति पाई धुरि,
ध्याई माई पद्मावती, ध्या नकी जगावनी ।

नौंह रस भेद कीयां, भइ उदभावनीसी,
यातें लगी संतन के, चित्तकूं सुहावनी ॥
गैन चर भूचर के, नाम परिंद दे दे,
भाव बनी यहु युक्ति, (कुल) विश्व समभावनी ।
याते मन चूंप कैरि, विनय सुकवि याकौ,
यथारथ नाम धरयौ, अन्योक्ति बावनी ॥ ६२ ॥

[स्थान–प्रतिलिपि–अभय जैन ग्रंथालय]

(२) **उपदेश बावनी (कृष्ण बावनी)।** रचयिता–किसन। **रचनाकाल–संवत् १७६७ विजय दसमी।**

आदि–

ऊँकार अपर अपार अविकार अज अजरङ्ग है उदार, दादनु हुस्न को ।
कुंजर ते कीट परजंत जग जंतु ताके, अंतर को जामी बहु नामी सामी संत को ।
चिंता को हरन हार चिता को करनहार, पोषन भरन हार किसन अनंत को ।
अंत कहै अंत दिन राखे को अनंत विन, ताके तंत अंतको भरोसो भगवंत को ॥ १ ॥

अन्त–

सिरि सिंघराज **लोंका** गछ सिरताज, आज तिनकी कृपा जू कविताई पाई पावनी ।
संवत् सतर सतसट्ठे विजैदसमी की, ग्रंथ की समापत भई है मन भावनी ॥
साधवी सुज्ञान मांकी जाई श्री **रतनबाई**, तजी देह ता परि रची है विगतावनी ।
मत कीनी मत लीनी ततहिं पे रुच दीनी, वाचक **किसन** कीनी उपदेस बावनी ॥ ६१ ॥

लेखन काल–१६ वीं शताब्दी।

प्रति–पत्र–७। पंक्ति–१३। अक्षर–४२। साईज–१०×४॥।

[स्थान–अभय जैन ग्रन्थालय]

(३) **केशव बावनी।** पद्य ५७। रचयिता–केशवदास। रचना काल–संवत् १७३६ श्रावण शुक्ला ५।

आदि–

ऊंकार सदासुख देवत ही नित, सेवत वांछित इछित पावै ।
बावन अक्षर माहि सिरोमणि, योग योगीसर ही इस ध्यावै ।

ध्यानमें ज्ञानमें वेद पुराणमें, कीरति जाकी सबै मन भावै ।
केसवदास कुं दीजो दौलति, भावसौं साहिब के गुण गावै ॥ १ ॥

अन्त–

बावन अक्षर जोर करि भैया, गांउ पच्याख ही में भल पावै ।
सत्तर सोत छतीस को श्रावण, सुद पांचु भृगुवार कहावै ।
सुख सोभागनी को तिनको हुवै, बावन अक्षर जो गुण गावै ।
लावन्यरत्न गुरु सु पसाव सौं, केशवदास सदा (सुख) पावै ॥ ५६ ॥

लेखन काल–१६ वीं शताब्दी ।

प्रति–पत्र ५ । पंक्ति १५ । अक्षर ४० । साइज १० × ४॥

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(४) गूढा बावनी (निहाल बावनी) । पद्य–५४ । रचयिता–ज्ञानसार ।

रचना काल–संवत १८८१ मिगसर वदी १ ।

आदि–

दोहा

चांच आंख पर पांउ खग, ठाढो अंब निं डाल ।
हिलत चलत नहिं नभ उड़त, कारण कौन निहाल ॥ १ ॥
चित्रित छै ।

अन्त–

मध्ये प्रवचन माय दुग, सत्ता आदरु अंत ।
मिगसर वदि तेरस भई, गूढ बावनी कंत ॥ ५३ ॥
खरतर भट्टारक गच्छै, रत्नराज गणि शीस ।
आग्रह तें दोधक रचे, ज्ञानसार मन हींस ॥ ५४ ॥

यह गूढा बावनी पंडित वीरचंदजी के शिष्य निहालचंद को उद्देश्य करके कही गई है अतः इस का नाम निहाल बावनी रखा गया ।

प्रति–प्रतिलिपि

[स्थान–अभय जैन ग्रन्थालय]

(५) **जसराज बावनी** । सवैया-५७ । रचयिता-जिनहर्ष । रचनाकाल-संवत् १७३८ फाल्गुन मास ।

आदि-

ऊँकार अपार जगत्र अधार, सबै नर नारि संसार जपे है ।
बावन अक्षर मांहि धुरक्षर, ज्योति प्रद्योतनकोटि तपे है ।
सिद्ध निरंजन भेख अलेख, सरूप न रूप जोगेंद्र थपे है ।
ऐसो महातम है ऊँकार को, पाप जसा जाके नाम खपे है ॥ १ ॥

अन्त-

संवत् सतर अठतिसे मास फागुणमें, बहुत सातिम दिन वार गुरु पाए हैं ।
वाचक शांतिहरख ताहू के प्रथम शिष्य, भले के अक्षर परि कवित्त बनाए हैं ।
अवसर के विचारे बैठिके सभा मंझार, कहे नरनारीके मनमें सुभाए हैं ।
कहे जिनहर्ष प्रताप प्रभुजी के भई, पूरण बावनि गुणी चित्त के रिझाए हैं ॥ ५७ ॥

लेखनकाल-संवत् १८५६ वर्षे शाके १७२५ प्रवृत्तमाने ज्येष्ट सित १० । श्री प्रताप सागर पठन कृते श्री कोटड़ी मध्ये ।

प्रति-पत्र १३ । प्रति के अन्त के तीन पत्रों में यह बावनी है । पंक्ति १६ । अक्षर ५२ । साइज १० × ४॥ ।

[स्थान- अभय जैन ग्रंथ लय]

(६) **जैनसार बावनी** । पद्य- ५८ । रचयिता-रुघपति । रचनाकाल-संवत १८०२ भाद्रपद सुद १५ । नापासर ।

आदि-

ऊँकार बड़ौ सब अक्षरमें, इण अक्षर ओपम और नहीं ।
ऊँकारनिके गुण आदरिकै, दिल उज्जवल राखत जांणदही ।
ऊँकार उचार बड़े बड़े पंडित, होति है मानति लोक यही ।
ऊँकार सदामद ध्यावत है, सुख पावत है रुघनाथ सही ॥ १ ॥

अन्त-

संवत सार अठार बिड़ोतरै, भादव पूनम के दिन भाई ।
किद्ध चौमास नापासर में, तहां स्वामी अजित जिणंद सदाई ।

श्री जिनसुख यतिसर के, सुविनीति विद्याके निधान सदाई ।
पाय नमी रुघपति पयंपित, बावन अक्षर आदि बुलाई ॥ ५८ ॥

इति श्री जैन सार बावनी ।

लेखनकाल- १६ वीं शताब्दी ।

प्रति-पत्र ६ । पंक्ति १६ । अक्षर ५५ साइज १०। × ४। ।

[स्थान- अभय जैन ग्रंथालय]

वि० इसमें चौबीस तीर्थंकरों के २४ पद्य नाम वार है ।

(७) **दूहा बावनी** । दोहा ५३ । रचयिता-जिनहर्ष (मूल नाम जसराज) ।

रचनाकाल-संवत् १७३० आषाढ शुक्ला ६ ।

आदि-

ॐ अक्षर सार है, ऐसा अवर न कोय ।
शिव सरूप भगवान शिव,सिरसा वदूं सोय ॥ १ ॥

अन्त-

सतरैसै त्रीसै समै, नवमी शुक्ल आषाढ ।
दोधक बावनी जसा, पूरण करी कृत गाढ ॥ ५३ ॥

[स्थान-प्रतिलिपि- अभय जैन ग्रंथालय]

(८) **दूहा बावनी** । दोहा-५८ । रचयिता-लक्ष्मीवल्लभ (उपनाम-राजकवि) ।

आदि-

ॐ अक्षर अलख गति, धरूं सदा तसु ध्यांन ।
सुरवर सिध साधक सुपरि, जाकूं जपत जहांन ॥ १ ॥

अन्त-

दूहा बावन्नी करी, आतम पर'हित काज ।
पढत.गुणत वांचत लिखत, नर होवत कविराज ॥ ५८ ॥

इति श्री दूहा बावनी समाप्तं ।

लेखन काल-संवत् १७४१ वर्षे पोष सुदी १ । लिखितं हीरानंद मुनि ।

प्रति-१. पत्र ६ के प्रथम पत्र में । पं० १६ । अक्षर ५३ । साइज १० × ४। ।

२. संवत् १८२१, आश्विन वदी ७ कर्मवाल्यां श्री देशनोक मध्ये भुवन-
विशाल गणि तत् शिष्य फहदचंद दित्त
पत्र २। पंक्ति १५। अक्षर ३८। साइज ६॥×४॥।

[स्थान–अभय जैन ग्रन्थालय]

(९) **धर्म-बावनी**। पद्य ५७। रचयिता–धर्मवर्द्धन। रचनाकाल–संवत् १७२५ कार्तिक कृष्णा ९। रिणी।

आदि–

ऊँकार उदार अगम्म अपार, संसार में सार पदारथ नामी।
सिद्धि समृद्ध सरूप अनूप, भयौ सबही सिर भूप सुधामी।
मंत्रमें, जंत्रमें, ग्रन्थके पंथमें, जाकुं कियौ धुरि अंतर-जामी।
पंच हीं इष्ट वसै परमिष्टु, सदा **धर्मसी** कहै तासु सलामी॥ १ ॥

अन्त–

ज्ञान के महा निधान, बावन बरन जान, कीनी,
ताकी जोरि यह ज्ञान की जगावनी।
पाठत पठत जोइ, संत सुख पावैं सोइ,
विमलकीरति होइ, सारै ही सुहामणी।
सौंत सतरै पचीस, काती वदी नौमी दीस,
वार है **विमलचन्द**, आनन्द वधामणी।
नेर **रिणी** कुं निरख, नित ही **विजैहरख**,
कीनी तहाँ **धरमसीह**, नाम **धर्मबावनी**॥ ५७ ॥

इति श्री धर्म बावनी।

लिपिकाल–लि० सि० कुशल सुन्दर मेड़ता नगरे। संवत् १७६८ श्रावण सुदि ११ दिने।

प्रति–पत्र ८। पंक्ति ११। अक्षर ३६। साइज ६॥×४। पाँच प्रतियाँ।

[स्थान–अभय जैन ग्रन्थालय]

(१०) **प्रबोध-बावनी**। पद्य ५४। रचयिता–जिनरंग सूरि। रचना-काल संवत् १७३१ मिगसर सुदि २ गुरुवार।

आदि-

ऊँकार नमामि सौहै अगम अपार, श्रति यहै तत्तसार मंत्रन को मुख्य मान्यो है ।
इनही तैं जौग सिद्धि सावत्रैकी सिद्धि जान, साधु भए सिद्ध तिन धुर उर धान्यो है ।
पूरन परम पर सिद्ध परसिद्ध रूप, बुद्धि अनुमान याकौ विबुध बखान्यो है ।
जपै जिनरंग ऐसो अक्षर अनादि आदि, जाको हीय सुद्धि तिन याको भेद जान्यो है ॥ १ ॥

अन्त-

हेतबन्त खरतर गच्छ जिनचंद्र सूरि सिंह सूरि राज सूर भए ज्ञानधारी हैं ।
ताके पाट जुग परधान जिनरंग सूरि ज्ञाता गुनवंत ऐसी सरल सुधारी है ।
शशि[1] गुन[3] मुनि[7] शशि[1] संवत् शुक्ल पक्ष, मगसर बीज गुरुवार अवतारी है ।
खल दुरबुद्धि कौ अगम माँति भाँति करि, सज्जन सुबुद्धि कौ सुगम सुखकारी है ॥ ५४ ॥

इति प्रबोध बावनी समाप्त ।

लेखन काल-संवत् १८०० रा अषाढ़ सुदि २, श्री मरोटे लि० प० भुवन विशालश्च ।

प्रति-पत्र १८ के चार पत्रों में । पंक्ति १८ । अक्षर ६० । साइज ६॥ × ६

[स्थान-अभय जैन ग्रन्थालय]

(११) ब्रह्म बावनी । पद्य-५२ । रचयिता-निहालचंद । रचनाकाल संवत् १८०१, कार्तिक शुक्ला २ । मकसुदाबाद ।

आदि-

आदि ऊँकार आप परमेसर परम ज्योति, अगम अगोचर अलख रूप गायौ है ।
द्रव्य तामैं अेक में अनेक भेद पर जो मैं, जाको जसवास मत्त बहुँन मैं छायौ है ।
त्रिगुन त्रिकाल भेत्र तीनों लोक तीन देव, अष्ट सिद्धि नवों निद्धि दायक कहायौ है ।
अन्तर के रूप मैं स्वरूप भुज लोक हूँ को, ऐसौ ऊँकार हषचन्द्र मुनि ध्यायौ है ।

अन्त-

संवत अठारैस अधिक अेक काती मास, पख उजियारे तिथि द्वितीया सुहावनी ।
पुरमें प्रसिद्ध मखसुदाबाद बंग देस, जहाँ जैन धर्म दया पतित को पावनी ।
वासचंद गच्छ स्वच्छ वाचक हरखचंद, कीरतें प्रसिद्ध जाकी साधु मन भावनी ।
ताके चरणारविंद पुन्यतें निहालचंद, कीन्हीं निज मति तें पुनीत ब्रह्म बावनी ॥ ५१ ॥
हमपें दयाल हो कै सज्जन विशाल चित्त, मेरी अेक वीनती प्रमांन करि लीजियौ ।

मेरी मति हीन तातें कीन्हो बाल ख्याल इहु, अपनी सुबुद्धि ते सुधार तुम दीजियौं ।
पौन के स्वभाव तै प्रसिद्ध कीज्यौ ठौर ठौर, पन्नग स्वभाव अेक चित्त में सुणीजियो ।
आलि के स्वभावतें सुगंध लीज्यो अरथ की, हंसके स्वभाव होके गुनको ग्रहीजियो ॥ ५२ ॥

[स्थान-अभय जैन ग्रन्थालय]

(१२) बावनी । पद्य ५४ मान ।

अथ मानकृत बावनी लिख्यते । छप्पय छन्द ॥

आदि-

णमो देव अरिहंत, सिद्ध सरूप पयासण ।
णमो साधु गुरु चरण, परम पंथहि दरसावण ॥
णमो धरम दस भेद, आदि उत्तम खमयुत्तौ ।
कर जोड़िवि अनुभवै, साधु मन राज पवित्तौ ॥
हो जीव अनंतौ काल तुव, दिप्प जाण धण हुव किरण ।
इम परम तत्व मन रहसि करि, हो आइ भौ भौ सरण ॥

अन्त-

× × ×

सदा काल सु पवित्त, एह बावनि मन रंजण ।
कछु आपण कछु परह, करि बुधि दर्प्पण मंजण ॥
ना कछु कीरति हेतु न, कछु धन आर निवंचन ।
यथा सकति मति मंडि, रची पद पद रस रंचन ॥
मम हसउ मित्त कारण लहिवि, यदि यह अर्थ निरथ्थिया ।
धर्म सनेहु मन मांहि धरि सु, मान तणा गुण गुथ्थिया ॥५४॥

इति मान कृत बावनी ।

प्रति-गुटका । सं० १७०४ लि० पत्र ८६ से ६४ पं० २१, अक्षर २४

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(१३) बावनी । मोहनदास श्रीमाल ।

अथ बावनी मोहनदास कृत लिख्यते ॥ सवईया ३१ ।

आदि-

धूल साल देखै मूल सालन नहित उर,
मान खंभ देखे मान जाइ महा मानी कौ ।
कोई के निकट गई कोटिक कलेस कटे,
मेरे परताप परताप जिन वांनी को ॥
बेदी के दिलों के आप वेदी पर वेदी होइ,
निरवेद पद पावै याते है कहानी को ।
बाजै देव बाजै मुनि होंहि रिषि राज मुनि,
बाजै पावै राजि जिन राजी राजधानी को ॥ १ ॥

× × ×

अन्त-

जैनी को मन जैन में, जैनी के उरझाइ ।
सो मन सों मन को भयौ, टरै न टार्यो जाइ ॥
टरै न टार्यो पाइ, अपने रस रसिया ।
चंचल चाल मिटाइ ग्यांन सुख सागर बसिया ।
सुपर भेद को खेद, दुहत ता कारज फीकौ ।
एकी भाव सुभाव, मिल्यौ मनुवां जैनी को ॥ ४३ ॥

इति कवित्त प्रस्तावीं कवि मोहनदास सिरीमाल कृति समाप्तम् !

विशेष–ये पद्य अ, आ पर वर्णों पर नहीं, पर फुटकर, आध्यात्मिक ४३ पद्य ही हैं। इसके बाद इस ही के रचित बारह भावना लिखित है–

दोहरा–

प्रथम अथिर[१] असरन[२] जगत[३], एक[४] आन[५] असुभान[६] ।
आश्रव[७] सेंवर[८] निर्जरा, [९]लोक[१०] बोध[११] दुर्लभान[१२]।
एई बारह भावना, कथे नांम सामान ॥
अब कछु विवरन सौ कहौ, छो उप सम परिमांन ॥ २ ॥

× × ×

अंत-

थिर भई शुद्धि अनुभूति की, ग्यान भोग भोगी भयौ ।
अनुभाग बंध निजु भागतें, भाग राग दारिद गयौ ॥१७॥

इति बारह भावना कृता मोहनदास सिरीमाल कृति संपूर्णम् ॥
प्रति-गुटकाकार । पत्र-१-८८ से ६५ पं० १७, अक्षर २६ ।

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(१४) बावनी । पद्य-५४ । रचयिता-जटमल ।

आदि-

ॐ ऊँकार अपेही आपे दिगर न कोई दूजा,
जां नर बाबर गां सम तारां, अजब बनाइ सचूजा ।
वजै वाउ आवाज इलाही, जटमल समझण मूजा,
आखण जोगा वचन न ए है, समझया अमरत कूजा ॥१॥

अन्त-

लंवण लरक करै धरि लाल्या, पढि पढि लोक सुणावें ।
नागा होइ नगर सब ढूंढै, अंग विभूति वणावै ।
जां जां ग्यान न दीपा अंदरि, ताकुंभ नजरि न आवै ।
जटमल सफल कमाई सस्मा, ज्ञान समेत कमावैं ॥५३॥
चाल खराति सैं दा खा सा, जो नर होवई रहित ।
क्या होया जेथीआ कवीसर, ढाढी वांगे कहिता ।
आप न सूरा लोक लड़ाये, माम न मूरख लहता ।
जटमल साहब सो लहसी, कहत रहत हुइ सहिता ॥५४॥

इति जटमल कृत बावन्नी संपूर्ण । श्रोरस्तु लेखक पाठकयो । श्री ।

लेखन काल-संवत् १७३३ वर्षे भाद्रवा सुदि ६ गुरुवार सवाई जुगप्रधान भट्टारक श्री मच्छ्री जिनचंन्द्र सूरि राजानां महोपाध्याय श्री श्री सुमति शेखर गणि मणीनांमंते वसी वाचनार्थ श्री ५ चरित्र विजय गणि पंडित महिमा कुशल गणि पंडित रत्न विमल मुनि पंडित महिमा विमल सहितेन चतुर्मासीं चक्रे । एक्की ग्रामे लिखितं महिमा कुशल गणि जती ॥ दो० रंगापठनार्थ

प्रति-पत्र ८। पंक्ति ६। अक्षर ३५। साइज १०।×४।।

[स्थान-अभय जैन ग्रंथालय]

(१५) **बावनी** । रचियता-सुन्दरदास (वणारस)।

वणारस सुन्दरदास कृत बावनी लिख्यते।

आदि-

ऊँकार अपार संसार आधार है, ईश्वर तंत संता सुख धामी।
ब्रह्मा करै जाकी चौमुख कीत, उमापति श्रीपति हुं अभिरामी।
मंत्र में जंत्र में याग योगारम्भ, जाप अजपा को अन्तरजामी।
सुंदर वेद पुराण को जात है, तातैं नमुं नित को सिरनामी ॥ १ ॥

अन्त-

२६ वां पद्य लिखते छोड़ दिया गया-अपूर्ण।

प्रति-पत्र ३। पंक्ति १५। अक्षर ३७ साइज-१०×४।।।

[स्थान-अभय जैन ग्रन्थालय]

(१६) **लघु ब्रह्म बावनी** । पद्य ५४। रचयिता-ब्रह्म रूप (चन्द)

आदि-

ऊँकार है अपार पारावार कोइ न पावै, कछुयने सार पावैं जोइ नर ध्यावेगो।
गुण त्रय उपजत निनसत थिर रहै, मिश्रित सुभाव मांही सुद्ध कैसे आवेगो।
अगम अगोचर अनादि आदि जाकी नहीं, असौ भेद वचन विलास कैसे पावेगो।
नय विवहार रूप भासै है अनंद भेद, ब्रह्म रूप निश्चै अेक अेक द्रव्य थावैगो ॥ १ ॥

अन्त-

लिंगाधार सार पक्ष श्वेतांबर कह्यो दक्ष, धार विवहार स्यादबाद शुद्ध ब्रह्म की।
ताहींमें प्रगट भयो,पासचन्द सूरि जयो,थाप्यो पासचन्द गच्छ आसै जिन धर्म की।
तिहुनमें रूचिवंत साधक अनुपचन्द, साध सुसबेगधारी शक्ति सुख शर्म की।
जिनकी महंत कीर्ति ताही को निकटवर्ती, शिष्य ब्रह्मरूप बूझी रीति ब्रह्म कर्म की ॥ ५४ ॥

प्रति-प्रतिलिपि

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(१७) **सवैया बावनी** । पद्य-५२। रचयिता-चिदानन्द। रचनाकाल-
१६०५ लगभग।

आदि-

ॐकार अगम अपार प्रवचन सार, महा बीज पंच पद गर्भित जाणिए।
ज्ञान ध्यान परम निधान सुखथान रूप, सिद्धि बुद्धि दायक अनूपए बखाणिए।
गुण दरियाव भव जलनिधि मांहे नाव, तत्वको दिखाव हिये ज्योति रूप ठाणिए।
कीनो है उच्चार आद आदिनाथ ताते वाको, चितानंद प्यारे चित्त अनुभव आणिए॥ १ ॥

अन्त-

हंस को सुभाव धार कीजो गुण अंगीकार, पन्नग सुभाव श्रेक ध्यान से सुयोजिए।
धारके समीरको सुभाव ज्यूं सुगंध याकी, ठौर ठौर ज्ञाता वृन्द में प्रकाश कीजिए।
पर उपगार गुणवंत वीनति हमारी, हिरदै मैं धार याकुं थिर करि दीजिए।
चिदानंद केवै अरु सुणवै को सार एहि, जिण आणाधार नर भव लाहो लीजिए॥ ५२ ॥

प्रति-प्रतिलिपि

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(१८) सवैया बावनी। पद्य ५६। रचयिता-बालचंद्र।

आदि-

अकल अनंत ज्योति जाणी है अनेक रूप, अैसे इष्ट देवकूं समरि सुख पावनी।
हृदय कमल जम्यैं अति ही .. ..सा सुनत सब संतकूं सुहावनी॥
सुगम सुबोध याकें देखें ही ते बुद्धि बढ़ै, होत सब सिद्धि दुर बुद्धि की नसावनी।
............ति कवि कवित्त की नमन के आनंदकुं करति चंद बावनी॥ १ ॥

अन्त-

इह विधि बावन वरण अधिकार सार, विविध प्रकार रची रचना बनाइकै।
बुद्धि रिद्धि सिद्धि कौ अपार पंथ जानौ यातैं, भूलि परि सोधिये सुकवि मन लाइकै।
विनयप्रमोद गुरु पाठक प्रसाद पाइ, निज मति चातुरी सौं सुजन सुहाइकै।
अवसर रसको सरस मेघमाला सम, बालचंद्र बावनी को परम प्रभाइक॥ ५६ ॥

इति सवैया बंध बावनी पं० बालचंद विरचिता संपूर्ण।

लेखनकाल-१८ वीं शताब्दी।

प्रति-पत्र ४ पंक्ति १७। अक्षर ६० साइज १०॥×४।

[स्थान-अभय जैन ग्रंथालय]

(१९) हेमराज बावनी । पद्य-५७ । रचयिया-लक्ष्मीवल्लभ (राज) ।

आदि-

ऊँकार अपार अगम्भ अनादि, अनंत महंत धरे मनमें ।
ईह ध्यान समान न आन है ध्यान, किये अघ कोटि कटै छिनमें ।
करता हरता भरता धरता, जगदीस है राज त्रिलोकन में ।
सब वेद के आदि विरंचि पढ्यौ, ऊँकार चढ्यौ धुरि बावन में ॥ १ ॥

× ÷ ×

अन्त

आगम ज्योतिष वैदकु वेद जु, शास्त्र शब्द संगीत सुधावन ।
कीयै करैंगे कहै है सु पंडित, आपने आपने नाउं रहावन ॥
भारतीजू को अपार भंडार हैं, कौन समर्थ है पार के पावन ।
राज कहै कर जोरि कै ध्याइयै, अक्षर ब्रह्म सरूप है बावन ॥ ५७ ॥

लेखनकाल-१८ वीं शताब्दी ।

प्रति-१ । पत्र ४ । पंक्ति १५ । अक्षर ५२ । साइज ६।। × ४। ।

[स्थान-अभय जैन ग्रंथालय]

(२०) हंसराज बावनी । पद्य-५२ । रचयिता-हंसराज ।

आदि-

ऊँकार धरम ज्ञेय है न जाते, परतत मत सत ओहि मोंहि गायो है ।
जाको भेद पावै स्याद वादी वादी और कहा जानै मानैं जाते आपा पर उरझायो है ।
दरबतें सरबस लोक हैं अनेक तो भी, पर जे प्रवान परि परि ठहरायो है ।
ऐसो जिनराज राज राजा जाके पांय पूजे, परम पुनीत हंसराज मन भायो है ॥ १ ॥

अन्त-

ज्ञान को निधान सुविधान सूरि वर्द्धमान, सो विराजमान सूरि रत्नपाट ज्यूं ।
परम प्रवीन मीन केतन नवीन जग, साधु गुण धारी अपहारी कलिकीट ज्यूं ।
ताको सुप्रसाद पाय हंसराज उपजाय, बावन कवित्त मनिपोये गुनपाट ज्यूं ।
अरथ विचार सार जाको बुध अब धारि, डोले न संसार खोले करम कपाट ज्यूं ॥ ५२ ॥

विशेष-इसका नाम ज्ञान बावनी भी है ।

[स्थान-जयचंन्द्रजी भंडार]

(१) **अध्यात्म बारहखड़ी** । पद्य ४३६ । रचयिता–चेतन । सं० १८५३ जेठ सु० ३

आदि–

करम भरम सब छोड़ कै, धर्म ध्यान मन लाव ।
क्रोधादि च्यारों तजौ, हो अविचल सुखपाव ॥ १ ॥
× × ×

अन्त–

अध्यातम बारहखड़ी, पूरी भई सुजान ।
सब सेंतालीस अंक के, चेतन भाख्यो ज्ञान ॥
अंकु अंक दोहे धरे, बार बार गुन खान ।
सब च्यार सै बतीस है, बारहखड़ीके जान ॥
संवत् ठारे त्रेपने, सुकल तीज गुरुवार ।
जेठमास को ज्ञान यह, चेतन कियो विचार ॥
यामै जो कछु चूक है, ते बकसो अपराध ।
पंडित धरो सुधार कै, तौ गुण होई अगाध ॥
ज्ञान हीन जानौ नहीं, मन में उठी तरंग ।
धरम ध्यान के कारणे, चेतन रचे सचंग ॥४२५॥

[अभय जैन ग्रंथालय]

(२) **जैन बारहखड़ी** । र० सूरत

आदि–

प्रथम नमो अरिहंत को, नमो सिद्ध आचार ।
उपाध्याय सर्व साध कुं, नमतां पंच प्रकार ॥
भजन करो श्री आदि को, अंत नाम महावीर ।
तीर्थंकर चौवीस कूं, नमो ध्यान धर पीर ॥ २ ॥
तिन धुन सुंवानी खिरी, प्रगट भई संसार ।
नमस्कार ताकौ करौं, इकचित इकमन धार ॥ ३ ॥

जा वानी के सुनत ही, बाध्यो परमानंद ।
भई सूरत कछु कहन कुं, बारहखड़ी के छंद ॥ ४ ॥

नं० ५ से ३६ तक कुंडलियाँ हैं।

अन्त-

बारहखड़ी हित सुं कही, लही गुनियन का रीस ।
दोहे तो चालीस हैं, छन्द कहे बत्तीस ॥ ४१ ॥

प्रति-पत्र ३ ।

[अभय जैन ग्रंथालय]

(३) बारहखड़ी । पद्य ७४ । रचयिता-दत्त । सं० १७३० जे० व० २

आदि-

संवत् सतरह से साठै समै, जेठ वदी तिथि दूज ।
रवि स्वाति बारहखड़ी, करि कालिका पूज ॥ १ ॥
करी कालिका पूज, भवानी धवलागढ की रानी ।
असुर-निकंदन सिंघ चढी, मईया तीन लोक में जानी ॥
सुर तेतींसौ महादेव लौं, ब्रह्मा विष्णु बखानी ।
नमस्कार करि दत्त कहै, मोहि दीजो आगम वानी ॥ २ ॥

अन्त-

जंबू दीप याको कहै, गंग जमना परवाह ।
भरथ खेडा बलवड भू, नरपति नवरंग साह ॥ ७३ ॥
हरयाणै मै मंडल मैं, दिल्ली तखत गुलयारा ।
वार सहरि विचि नगरु लालपुर, जिति है रहन हमारा ॥
दयारामजी करी दास है, इग वड जन्म द्विज यारा ।
दानो वंस दत्त की चरण, पगनीयां पर बलहारा ॥ ७४ ॥

इति बारहखड़ी समप्तं । सं०

ले० संवत् १८५८ वर्षे फाल्गुन सुदी २ शनि दिने पूज किर पारिख लिखतुं । वेरोवाल मध्ये ।

प्रति-पत्र २ ।

[अभय जैन ग्रंथालय, बीकानेर]

(१) अक्षर बत्तीसी (बराखड़ी)–कृष्ण लीला । पद्य–३८ ।

रचयिता–लच्छलाल । रचना काल–संवत् १८०६ से पूर्व ।

आदि–

ॐ नमो सु सारदा, वरदानी माहा माया ।
अपने गुरु की कृपा सुं, पूजूं हरके पाय ॥ १ ॥
पूजूं हर के पाय, बनाय बराखड़ी ।
संति भगत मन भाय, सब्द सूधां खरी ।
पढ़े सुनी जन कोई महा सुख पाव है ।
[1]हरी हरी हरदे वहही, गुण जो गाव हैं ॥ १ ॥
कका केवल राम कहु, कही सत गुरु बात ।
अवसर चूके प्राणपति, फिर पीछै पछतात ।

× × ×

अन्त–

मच्छ कच्छ वराह धार औतार गिणज्जै देवापुंज दल मले प्रेम संतन वसिधि जै ।
प्रगट भई नरसिंघ जेन हरनाकस मार्यौ वावन बुध बल छल्यौ भए द्विजराज निदार्यै ॥

श्री रामचन्द्र रुघवंस पुनि, क्रिष्ण नाम सोभा सरस ।
बुधा अवतार निकलंक कवि, लच्छलाल कुं देदवस ॥ ३८ ॥

इति श्री अक्षर वत्तीस कृष्ण लीला समाप्तं ॥ वराखरी ।

लेखन काल–संवत् १८०६ वर्षे मिति जेठ वदि ५ दिने बुधवारे पं० हरचन्द लिखंत । श्री भूकरका मध्ये ।

प्रति–पत्र ३ । पंक्ति १६ । अक्षर ४४ । साइज १० × ५

[स्थान–अभय जैन ग्रन्थालय]

(२) अक्षर बतीसी । रचयिता–अमरविजय ।

आदि–

ॐकार आराधीये, जांमै मंगल पंच ।
जिस गुण पारन पावही, वासव सेस विरंच ॥ १ ॥

---

१ पाठा दुख दरिद अध मिटै हरे हर गाइये ।

छन्द

वासव सेस विरंच नपावै, मैं मूरख किण गांनो ।
पूत हेत जिम हरिणी धावै, हरि सनमुख हित आंनो ॥
त्युं मैं जिणगुण भक्ति तणै वस, आखूं अक्षर बत्तीसी ।
अमर कहै कविजन मति हसीयौ, मैं हूं मंदमतीसी ॥ १ ॥

अन्त–

अखर बतीसी छंद बणाये, पढीयो नीकी धारणा ।
ज्ञाना वरणी रूप के कारण, आतम पर उपगारणा ॥
अमर विजै विनवै संतनि सौं, असुध जिहां सुध कीजो ।
श्री जिण वांणि सुधा सुं अधिकी, सुणत श्रवण भर पीजो ॥३०॥

इति श्री अखर बतीसी संपूर्ण ।

प्रति– पत्र १० की, जिसमें इसी कवि की स्यादवाद बतीसी, उपदेश बतीसी है।
पं० १२, अ० ४० ।

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(३) कका बत्तीसी लिख्यते–रचियता–सिवजी सं० १८७०

आदि–

प्रथम विंदायक सुमरियै, रिध सिधि दातार ।
मन वंछित की कामना, पूरै पूरन हार ॥
पूरे पूरनहार, छन्द कुंडलिया मांहि ।
कीजै **सिवजी** चित लाइ बनाऊ कका गिर थम ।
हंस चढी सुरसती बिंदाय गुरु प्रंमथ ।

अन्त:–

आदु छा आंबैरि का, अब **जैपुर** के बीचि ।
जोबनेर में थापियो, ककौ मनकुं खैंचि ॥
ककौ मनकुं खैंचि, हारिनाथ से ठीकी ।
ज्वालादेवी प्रताप, और रछस–सब ही को ।
कहै **सिवजी** चित लाय देखि, लीजो धरि बाहु ।
कुल श्रावग आचार जाति, **सोगाणी** आदु ॥

खारी खदरु और, जोबनेर में काज ।
अटल तेज रविज्यु तनु, प्रतापसिंघ के राज ।
प्रतापसिंघ के राज आदि आंबैरि कही जे ।
मिती पोष सुदी तीज, ब्रिहसपतिवार कही जे ।
ठारा सै तीस फही स्पोंजी ये धारि ।
सांभरी की पैदासि होत, इबरु अर खारि ॥

पं० ५ सं० १८७०

वि० नागरीदास इश्कचमन और चत्र मुकट वात आदि भी इसमें है ।

[स्थान-अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(४) कका बत्तीसी ।

आदि-

अथ कका बत्तीसी लिख्यते ।

कका कहा कहुं किरतार कुं मेरी अरज सुनलेय ।
चतुरनार सुंदर कहै हीण पुरख मत देइ ॥ १ ॥
खखा खेलत २ में फिरी चेल कहा की साथ ।
अब दिन कैसे भरूं वरस वराबर जात ॥ २ ॥

अन्त-

हहा हरसु वेमुख हुई करेन कोई सार ।
मुरख के पले पडी मोरन पूजी वार ॥ ३३ ॥
कका बतिसी एक ही आसु मास मझार ।
ससी आंक के योग में मानु शुक्ल गुरुवार ॥ ३४ ॥

इति श्री कंका बत्तीसी संपूर्णम् ॥

लेखन-संवत् १६२६ रा मिति मीगसर सुदि १२ दिने लिखितं श्री चंदनगर मध्ये ॥ श्री ॥

प्रति-गूटकाकार । पत्र-२ । पंक्ति-२३ । अक्षर १८ के करीब । साइज-५॥। × ७॥। ।

(म) अष्टोतरी, छत्तीसी, पच्चीसी आदि

(१) **प्रस्ताविक अष्टोत्तरी** । पद्य- ११२ । रचयिता- ज्ञानसार ।

रचनाकाल १८८१ आसू । विक्रमपुर ।

आदि-

आतमता परमातमता, लक्षणताऐं एक ।
यातें शुद्धातम नम्यें, सिद्ध नमन सुविवेक ॥ १ ॥

अन्त-

सना प्रवर्चनमाय 'दुग, त्यौं आकांश समास ।
संवत् आसू मास पुर, विक्रम दस चौमास ॥१११॥
इक सय नव दोहे सुगम, प्रस्ताबिक नवीन ।
खरतिर भट्टारक गच्छ,ज्ञानसार मुनि कोन ॥११२॥

इति प्रस्ताविक अष्टोत्तरी संपूर्ण ॥

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(२) **रंग बहुतरी** । म० ७१ रचयिता-जिनरंग सूरि ।

आदि-

अथ रंग बहुत्तरी लिख्यते ।

लोचन प्यारे पलक कों, कर दोऊं वल्लभ गात ।
जिनरंग सज्जन ते कहया, और बात की बात ॥ १ ॥
ज्ञानी को मत फिकट सौ, जिनरंग सज्जन दाख ।
मन कपटी अर नारि कौ, ज्यूं गहरना की लाख ॥ २ ॥
अपनों अपनों क्या करै, अपनो नहि सरीर ।

जिनरंग माया जगत की, ज्यूं अंजल को नीर ॥ ३ ॥

अन्त-

जिनरंगसूर कही सही, गछ खरतर गुण जांण ।
दूहा बंध बहुत्तरी, वांचैं चतुर सुजांण ॥७१॥

इति श्री जिनरंग कृत।

पत्र- २

[अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर]

छत्तीसी

(३) **आत्म-प्रबोध छत्तीसी** । पद्य ३६ । रचयिता-ज्ञानसार ।

आदि-

अथ मंगल कथन रा दोहरा-

श्री परमातम परम पद, रहे अनंत समाय ।
ताको हूं वंदन करूं, हाथ जोर सिर नाय ॥ १ ॥

अन्त-

श्रावक आग्रह सौं करे, दोहादिक षट् तीस ।
ज्ञान सार दधि'सार, लौं, ए आतम छत्तीस ॥३६ ॥

[अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर]

(४) **उपदेश छत्तीसी** । रचयिता-जिनहर्ष । सं०१७१३ ।

जिन स्तुति कथन इकतीसा

आदि-

सकल सरूप यामें प्रभुता अनूप भूप, धूप छाया माया है न ऐसे जगदीश जू ।
पुण्य है न पाप है न शीत है न ताप है, जाप के प्रज्ञा प्रगटैं करम अतीस जू ॥
ज्ञान को अंगज पुंज सुख वृक्ष को निकुंज, अतिशय चौतीस अरु वचन पैंतीस जू ।
ऐसो जिनराज जिनहरस प्रणमि, उपदेश की छतीसी कहूँ सवइये छतीस जू ॥ १ ॥

अन्त-

भई उपदेश की छत्तीसी परिपूर्ण, चतुर नर ह्वै जे याकों मध्य रस पीजियौ ।
मेरी है अलप मति तौ भी मैं किए कवित्त, कविता हूं सौ हूं जिन ग्रंथ मानि लीजियौ ।
सरस ह्वै हैं वखाण जांऊं अवसर जाण, दोइ तीन याके भैया सवैया कहीजियौ ।
कहि जिनहर्ष संवत् गुण ससि भत्त, कीनि है तु सुणत शाबास मोकूं दीजियौ ॥ ३६ ॥

[अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर]

(५) करुणा छत्तीसी । माधोराम ।

आदि-

श्री गणेशायनमः ॥ अथ करुणा छत्तीसी लिख्यते ।

कवित्त—

ऐरे मेरे मन काहे विकल बिहाल होत,
चत्रभुज चिंतामनि तेरी चिंत हरि हैं ।
धारबो धर अंबर विसंभर कहावत है,
मोसे दीन दुरबल कौ कैसे बिसरि हैं ॥
असरन सरन अैसो विरद जो धरावत है,
भीर परे भगतन को कैसी भांत टरि हैं ।
बार न की बार कछु करी नहीं बार
सौब कैसे के अंबार वे हमारी बारि करि हों ॥ १ ॥

अन्त-

करन अपराध भोर सामकोर कोर नित,
अनहीक गेर मन और कों निकाम हूं ।
अरचा न जांनु कछु चरचा न बुझत हूं,
कब हेत प्रीत सौं न लेत हरि नाम हूं ।
सबे तकवीर बलवीर मेरी छीमां करो,
कहै माधोरांम प्रभु तुहारो गुलाम हुं ॥ ३६ ॥

दूहा—

या करणा छतीसी कों, पढ़ै सुनै नर नार ।
ताकै सब दुख दंद को, काटै किसन मुरार ॥ १ ॥

इति श्री करणा छतीसी लिखतं संपूरणं ॥

लेखन-संवत् १७६६ रा मिती मिगसर वद ६ भोम ।

प्रति-गुटकाकार । पत्र ८ । पंक्ति १६ । अक्षर २० । साइज-६ × ७॥ ।

(६) चारित्र छत्तीसी—पद्य-३६। रचयिता-ज्ञानसार (नारन),

आदि-

ज्ञान धरौ किरिया करौ, मन राखौ विश्राम ।
पै चारित्र के लेश के, मत राखौ परिणाम ॥ १ ॥

अन्त-

क्रोध मान माया तजै, लोभ मोह अरु मार ।
सोइ सुर सुख अनुभवी, 'नारन' उतरै पार ॥ ३५ ॥
बिन विवहारै निश्चई, निष्फल कह्यौ जिनेश ।
सो तौ इन विवहार मैं, वाको नहीं लवलेश ॥ ३६ ॥

[अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर]

(७) ज्ञान छत्तीसी । रचयिता- कान्ह ।

आदि-

श्री गुरु के पद पंकज की रज, रंजकि अंजकि नैननि कुं ।
जोति जगैं तम दूरि भगैं, परखैं सु पदारथ रैननि कुं ॥
ऐंनहि ऐंनक रूप अनूप, धरूं उर ताही के वैननि कुं ।
कान्ह जी ज्ञानछतीसी कहैं,सुभ संमत है शिव जैननि कुं ॥ १ ॥
जल मांझि थल मांझि पर्वत की गुफा मांझि,
जहां तहां विष्णु व्याप्यौ कहां ही न छेहरा ।
ऐसे कह्यो शास्त्र गीता मन मांझी आनि मीता,
होइ रह्यो कहा अब मूरख को सेहरा ।
जात्रा काज काहे जावौ परे परे दुख पावो,
छोरि देहु आठसाठ (६८) तीरथ तैं नेहरा ।
कान्हजी कहै रे यारो, बात ग्यांन की विचारो,
आतम सौं देव नांही, देह जैसो देहरा ॥ २ ॥

अन्त-

३१ वें पद्य से (तीसरा पत्र प्राप्त न होने से) अधूरी रह गई है ।
प्रति-पत्र २ ।

[अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर]

(८) **भाव षटत्रिंशिका**—पद्य-३६ । रचयिता-ज्ञानसार ।

रचनाकाल-संवत् १८६५ का० सु० १ । किशनगढ़ ।

आदि–

क्रिया अशुद्धता कछु नहीं, भाव अशुद्ध अशेष ।
मरि सत्तम नरके गयौ, तन्दुल मच्छ विशेष ॥ १ ॥

अन्त–

सर[५] रस[६] गज[८] शशि[१] संवतै, गौतम केवल लीन ।
किसनगढ़ै चउमास कर, संपूरण रस पीन ॥ ३८ ॥
अति रति श्रावक आग्रहै, विरचौ भाव संबंध ।
रत्नराज गणि शीस मुनि, ज्ञानसार मति मंद ॥ ३६ ॥

इति श्री भाव षट् त्रिंशिका समाप्तागतम् ।

ले० प्र० संवत् १८७५ वर्षे ज्येष्ठ वदि ६ दिवापति वासरे श्री खंभनयर मध्ये ढार बाटके लिपिकृतं शीघ्रतरम् मुनि रत्नचंद्राय पठनार्थम् ।

[अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर]

(६) **मति प्रबोध छत्तीसी** । दोहा-३६ । रचयिता-ज्ञानसार ।

आदि–

तप तप तप तप क्यों करै, इक तप आतम ताप ।
विन तप संयमता भजी, कूर गडूऔ आप ॥ १ ॥

अन्त–

एहि जिनमत कौ रहिस, दया पूज निममत्त्व ।
ममत सहित निष्फल दऊ, यहै जिनागम तत्त्व ॥ ३५ ॥
मतप्रबोध षड्त्रिंशिका, जिन आगम अनुसार ।
ज्ञानसार भाषा भई, रची बुद्ध आधार ॥ ३६ ॥

इति मतिप्रबोध छत्तीसी समाप्ता ॥

[अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर]

(१०) स्थूलि भद्र छतीसी । पं० ३७ रचयिता–कुशललाभ ।

आदि–

सारद शरद चंद्र कर निर्म्मल, ताके चरण कमल चितलाइकि ।
सुणत संतोष होइ श्रवणण कुं, नागर चतुर सुनहु चितचाइकि ॥
कुशललाभ बुति आनन्द भरि, सुगुरु प्रसाद परम सुख पाइकि ।
कहिहुं थूलभद्र छत्तीसी अति सुन्दर पदबंध बनाइकि ॥ १ ॥

अन्त–

वेसा बाइक सुणी भयउ लज्जित मुणि,
सोच करि सुगुरु कइ पास आवइ ।
चूक अब मोहि परी चरण तदि सिर धरि,
आप अपराध आपइं खमावइ ॥
धन्य थूलिभद्र रिषि निर्म्मल परखि,
ताहि कइ सरिस कुण नर कहावइ ।
धरति जे ब्रहम तप सुजस तिनका,
सूवन कुशल कवि परम आनन्द पावइ ॥ ३७ ॥

प्रति–गुटकाकार

पत्र ६१ से ६८। पं० १३, अ० २४।

[अनूप संस्कृत लाइब्रेरी]

(११) अलक बत्तीसी–रचयिता–सीतारामजी

अथ सीतारामजी कृत अलक बत्तीसी लिख्यते ।

आदि–

दोहा

ॐ सारदा वरपते, सीपत करत प्रनाम ।
बत्तीसी दोहा कहौं, अलक बत्तीसी नाम ।

कमल फूल विधिना रच्यौ, निय आनन मतिमूल ।
मनोपान मकरद करि, अलक अलि उलिभूल ॥

अन्त-

अलक औप वरनौ कहा, जानौ सिंधु समान ।
जहं जहं पहुंची मोहि मति, तहं तहं कियो बखान ।

इति श्रीसीताराम कृत अलख बत्तीसी संपूर्णम् ।
प्रति-पत्र २, पत्राकार, पं० ३२, अक्षर ३८,
साइज ११ × ४॥ [अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(१२) **उपदेश बत्तीसी**-पद्य-३३-रचयिता-लक्ष्मी वल्लभ ।

आदि-

आतम राम सयाने, तूं झूठे भरम भुलाना । झूठे २ कर,
किसके माई किसके भाई, किसके लोग लुगाई ।
तूं न किसीका को नहीं तेरा, आपो आप सहाई ॥ ३१ ॥ आ० ।

अन्त-

इस काया पाया का लीहा, सुकृत कमाई कीजे ।
राज कहैं उपदेश बत्तीसी, सतगुरु सीख सुणीजे ॥ ३२ ॥

इति उपदेश बत्तीसी लक्ष्मी वल्लभजीरी कीधी ।
लेखक—विहारीदास लिखितं ।
प्रति-पत्र-३

[स्थान-अभय जैन ग्रंथालय] ।

(१३) **बतीसी** । रचयिता-बालचन्द (लौंका गंगादास शिष्य) गाथा ३३ । सं० १६८५ दीवाली । अहमदाबाद ॥

बालचंद कृत बतीसी लिख्यतेः—

आदि-

अजर अमर पद परमेश्वर कुं ध्याइयै ।
सकल पतिकहर विमल केवलधर,
जाको वास शिवपुर तासु लव लाइए ।
नाद, बिंदु, रुप, रंग, पाणि पाद, उत्तमांग,

आदि अंत मध्य भंग जाको नहीं पाइयो ।
संघेण संद्राण जाण नहि कोइ अनुमान,
ताही कुं करत ध्यान शिवपुर जाइए ।
भणे मुनि बालचंद, सुणोहो भविक वृंद
अजर अमर पद परमेश्वर कुं ध्याइऐ ॥ १ ॥

× × × ×

अंत–

महाणंद सुखकंद रूप छंद जाणिए ।
आया रूप जीव गणि कुंअर श्री मल्लि मुनि
रतनसी जस धणि त्रिभुवन मानी ई
विमल शासनजास, मुनिश्रीय गंगदास
हस्त दीक्षित तास बत्रीस्मी वखाणि ये ।
वाण वसु रसचंद दीवाली मंगल वृंद
अहम्मदावाद दुंग, रंग मन आणिये ॥ ३३ ॥

इति श्री बालचंद मुनिकृत बत्रीसी संपूर्ण।
सु० परतापसागर पठन कृत ॥ १ ॥ स० १८५६ लि० कोटड़ी ।
प्रति–पत्र ७ मे १० । पं० १३ । अ० ४५ ।

[अभय जैन ग्रंथालय]

(१४) रामसीता द्वात्रिंशिका । रचयिता–जगन पुहकरणा

आदि–

सरसति समरूं सरिस बुधि दीजै मोहि, नमुं पाय गणपति गुणह गंभीर के ।
इक चित हुइ कें गुरु छल्ल कुं प्रणाम करूं, जाके गुण अइसे जइसे गुण दधि खीरके ।
जेने कवि कलिमइ कल्लोल करें कविता के, वचन रचन जु पवित्र गंग नीरके ।
तिनके प्रसाद कीने जगन भगत हेत, सवइये छत्रीस राजा राम रघुबीर के ॥ १ ॥

अन्त–

सुणिये जु श्रति धारि तरिये दधि संसार, जाइये त जम लोक जम्म तैं न डरना ।
सीखै सुख पाईयत नरक न धाईयत, जनम पवित्र होत पाप में न परना ।

अनेक तीरथ फल कटन काया के मल, मन वच क्रम करि ध्यान जाप करना ।
सवइया जु बत्रीस राजा राम रघुवीर जू के, जपति जगन कवि जाति पहु करना ॥ ३३ ॥

इति राम सीता द्वात्रिंशिका समाप्ता''

लेखनकाल—१८ वीं शताब्दी ।

प्रति–प्रति नं० १–पत्र–३, पंक्ति १७, अक्षर–५०, साइज १० × ४॥

प्रति नं० २–पत्र–३, पंक्ति १८, अक्षर–५०, साइज १० × ४॥

इस प्रति में लेखक ने प्रारम्भ में 'अथ रामचन्द्रजीरा सवइया लिख्यते लिखा है और अन्त में, इति श्री जगन बत्तीसी संपूर्ण'' लिखा है ।

[स्थान–अभय जैन पुस्तकालय]

(१५) **समकित बतीसी** । पद्य ३३ । रचयिता–कंवरपाल ।

आदि–

केवल रूप अनूप आतम कूप, संसार अनादि अरुझइ ।
परगुन रचइ तजइ वंछित फल, सुछित ज्ञान उनमान न बूझइ ॥
अब इलाज जिनराज वचन मइ, धरम जिहाज तरण कुं तूझइ ।
कंवरपाल सुध दिष्टि प्रवांणइ, काय सुदिढ करुणाकर सूझइ ॥

अन्त–

हुओ उछाह सुजस आतम सुनि, उत्तम जीके पदम रस भिन्नै ।
जिम सुरहि विण चरहि दूध हुइ, ग्याता तेम वचन गुण गिन्नै ॥
निज बुद्धि सार विचार अध्यातम, कबित बत्तीसी भेट कवि किन्नै ।
कंवरपाल अमरेस तनोत्तम, अति हित चित आदर कर लिन्नै ॥ ३३ ॥

इति कंवरपाल बत्तीसी समाप्तं ।

प्रति–गुटका कार । पत्र २०२ से २०५ ।

[अभय जैन ग्रंथालय]

(१६) **हित शिक्षा द्वात्रिंशिका** । पद्य–३३ । रचयिता–क्षमा कल्याण ।

आदि–

मंगलाचरण रूप ऋषभ जिनस्तुति सवैया ३२,

सकल विमल गुन कलित ललित तन, मदन महिम वन दहन दहन सम ।
अमित सुमति पति दलित दुरित मति, निशित विरति रति रमन दमन दम ।
सघन विघन गन हरंन मधुर ध्वनि, धरन धरनि नल अमल असम सम ।
जयतु जगति पति ऋषभ ऋषभ गति, कनक वरन दुति परम परम गम ॥१॥

दोहा

आतम गुण ज्ञाता सुगन, निरगुण नाहि प्रवीन ।
जो ज्ञाता सो जगत में, कबहू होत न दीन ॥ २ ॥

× × × ×

निज पर हित हेतें रची, वतीसी सुखकंद ।
जाके चिंतन से अधिक, प्रगटैं ज्ञानानंद ॥ ३२ ॥

पूरण ब्रह्म स्वरूप अनुपम, लोक त्रयी किव पाप निकंदन ।
सुन्दर रूप सुमंदिर मोहन, सोवन वान सरीर अनिन्दन ।
श्री जिनराज सदा सुख साज, सु भूपति रूप सिद्धारथ नन्दन ।
शुद्ध निरंजन देव पिछान, करत क्षमादिकल्याण सुवन्दन ॥१॥

स्थान— प्रतिलिपि अभय जैन ग्रन्थालय ।

(१७) कुब्जा पच्चीसी । रचीयता – मलूकचंद

आदि–

अथ कुब्जा पच्चीसी लिख्यते ।

दोहा

घनपति[1] की संपति लहै, फनपति सीतम[2] होइ ।
चाहत जो धनपति भयो, नित गनपति मुख जोइ ॥ १ ॥
जग में देवी देवता सबै करै अगवान ।
वेद पुराननि में सुनि, सर्वमयी भगवान ॥ २ ॥

अन्त–

१– धन, २– सीमति

गुन तिनकी सूझत नहीं, औगुन पकरे दौर ।
कही **मलूक** तिन नर न को,हरखे नाहीं ठौर ॥ ६२ ॥

× × × ×

जाके ध्यान सदा यहै, ताकी हौं बल जांव ।
कुब्जा पच्चीसी सुनौ,यह ग्रन्थ को नांव ॥ ६६ ॥

गोपिन को उराहनो उद्धव प्रति--इसके बाद २६ पद और हैं जिनमें से अन्त का इस प्रकार है ।

क्यों कर पाऊं पार, इनके प्रेम समुद्र कौ ।
अपनी मत अनुसार, कह्यौ सूछिम यौं सकल कवि ॥ १ ॥

इति श्री मलूकचद्र कृते कुब्जा पच्चीसी संपूर्ण ॥श्रीस्तु॥
लेखन काल— संवत् १७८६ वर्षे मिति फाल्गुन सुदी ४ बुधवार

प्रति— १. गुटकाकार पत्र ८२ से १०३ । पंक्ति ११ । अक्षर- १५ साइज ७ × ६ ।
२. पत्र-४ पंक्ति- १६, अक्षर--४२, साइज-- १०॥ × ५ ।
३. पत्र-- ३, पंक्ति-- १८, अक्षर-- १४.

विशेष- इस गुटके (१) में इस प्रति से पहिले ऋतुओं के वर्णन में हिन्दी कवित हैं ।

स्थान— प्रति (१) अनूप संस्कृत पुस्तकालय ।
प्रति (२) अभय जैन ग्रंथालय । इस प्रति में "श्रीमान महाराज कुमार मलूकचन्द विरचिताय" कुब्जा पच्चीसी समाप्तम् लिखा है ।

(१८) **कौतुक पच्चीसी । पद्य २७** । रचयिता-काह्न, संवत् १७६१

आदि— कामत दायक कलपतरु, गनपति गुन कौ गेहु ।
कुमति अन्धेरे हरण कुं, दीपक सी बुधि देहु, ॥१॥

प्रारंभ— रमत रमा विपरीत रति, नाभि कमल विधि देखि ।
नारायन दच्छन नयन, मुंदत केल विशेष ॥१॥

अन्त— सतरै सै इगसठि समैं; उत्तम माहा असाढ़ ।

दुरस दोहरे दोहरे, गुप्त अर्थ करि गाढ ।।२६।।
सद्गुरु श्रीअमरसिंहजू, पाठक गुणे प्रधान ।
कौतुक पच्चीसी कहीं, कवि वणारस काह्न ।।२७।।

इति कौतुक पच्चीसी समाप्तः।

ले० सं० १८२२ माधव शुक्ला पचम्यां। श्री मेड़ता नगरे।

प्रति-पत्र २, पंक्ति १६, अक्षर ४३ ।

१- दानसागर भंडार ।

२- अभय जैन ग्रन्थालय ।

(१६) **छिनाल पचीसी** । पद्य २६ । रचयिता-लालचंद

आदि-

परमुख देख अपण मुख गोवै, मारग जाती लटका जोवै ।
नाभि मंडल जो बहिसि दिखावै, तो छिनाल क्या ढोल बजावै ।। १ ।।

अन्त-

एक समै इकतीया निहाली, छयल संग करती छीनाली ।
लालचन्द आखर समझावै, तो छिनाल क्या ढोल बजावै ।। २६ ।।

प्रति-

पत्र १, जिसमें गीदड़प्रसो, मूरखसोलही आदि भी हैं।

दानसागर भण्डार ।

२०. भागवत पच्चीसी.

आदि-

प्रथमहि मंगलाचरन व्यास कियो चदसूतजु सौं सोनकादिक वाद रस भर्यो है।
उत्तर में अवतार भेद व्यास को संताप नारद मिलाप निज आलाप उच्चर्यो है।
भागवत करी शुकदेव कौ पठाय कुंतीविनै भीष्म स्तुति परिक्षत जन्म धर्यो है ।
कलियुग दंड मृगया में मुनि सराप ग्रह त्याग गंगा तट शुक ह्य सौं प्रश्न कर्यो है ।

× × × ×

दशमा सवैया लिखते छोड़ा हुआ है अतः ग्रन्थ अधूरा ही मिला है।

प्रति-

पत्र-२ । पंक्ति-१३ । अक्षर-४५ । साइज १०॥ × ५॥

स्थान- अभय जैन ग्रन्थालय ।

(२१) मोहणोत प्रतापसिंह री पच्चीसी । पद्य २५ । कवि सिवचन्द ।

अथ ग्रन्थ प्रताप पचीसी

आदि-

कवित दोष जांनै सबैं वाघनन्द परवीन ।
तातें य नही को धरे, करि कैं कवित नवीन ॥ १ ॥

अथ असलील दोष लक्षणं ।

दोहा ।

तीन भांति असलील है, एक जुगपसा नाम ।
व्रीड असंगल जानियैं, ग्रंथ नमत गुन धाम ॥ २ ॥

अथ जुगपसा लक्षणं ।

पढत ग्लान उपजै जहां, तहां जुगपसा जांन ।
सबद विचार प्रवीन कवि, कवितन मैं जिनआन ॥ ३ ॥

× × × ×

वार्ता-

यहाँ लिंग शब्द की ठौर रचि न कह्यौ चाहियैं । लिंग व्रीडा दूषन हौ ।

अन्त-

कवित्त

दोष न दिखाय बेकूं गुन समझाय बेकूं
कविन रिझाय बेकूं महावाक वांनीसी ।
अमित उदारन कूं रस री झवारन कूं
सूर सिरदारन कूं सिष्या की निसानीसी
मन मगरू रन के क्रपन करुरन के
मान काट बेकूं भई तिष्यन क्रपानीसी ।

कवि सिवचन्द जू पच्चीस का बनाई यह
बाघ के प्रताप की अकीरति कहांनसी ॥ २५ ॥

दोहा

यह प्रताप पचीसका, पढ़ै गुनैं चित लाइ
कवित दोष सब गुन सहित, समझै सबै बनाय ॥ १ ॥

इति श्री सेवक सिवचन्दजी कृत किसनगढरा मोहणोत प्रताप सिंघरी पचीसी संपूर्णं ।

सं० १८५७ ना वर्षे पोष मासे शुक्ल पक्षे २ द्वितीया तिथौ बुधवासरे इन्द पुस्तकं संपूर्णो भवता ।

पंडित श्री १०८ श्रीज्ञानकुशलजी तच्छिष्य पं० कीर्तिकुशलेन लिखितात्मार्थे ।

प्रति परिचय--पत्र ६ साइज १० × ४॥। प्रतिपृ० पं० १३, प्रति पं अ० ४०

[राजस्थान पुरातत्व मन्दिर, जयपुर]

(२२) राजुल पच्चीसी— विनोदीलाल

आदि—

प्रथमहि हों समरूं-अरिहंतदेव सारद निज हियरै धरौ ।
बलि जीव वे बंदो वे अपने गुरु के पाय, राजुमतीगुन गाइसुं ।
वलि गाउं मेरौ राजुल पचीसी नेम जबे व्याहन चले
देखि पसु जिय दया ऊपजी, छारि सब वन को हली ।
गिरनागढ पर जाय कै प्रभु, जैन दीक्षा आदरी
राजुल तव कर जोरि यहु, वाने सो बीनती करी ॥

× × × ×

अन्त—

भवियन हो, भवियन हो जो यह पढ़ै त्रिकाल अरु सुर धरियह गावही ।
जो नर सुद्धि संभालि, द्वादश भावन भावहि ॥
यह भावना राजुल पचीसी जो कोई जन भाव हि ।
सो इन्द्र चन्द्र फनीन्द्र पद धरि, अन्त सिवपुर जावहि ॥
आनन्द चन्द विनोद गायौ, सुनत सव जन मह्हवरौ ।
राजुल श्रीपति नेम सब, संग को रक्षा करो ॥

ले० १७८२ मगसिरवदी ६, दिने पं० प्रवर मनोहर लिखतं साध्वी केशवजी पठनी।

प्रति पत्र ३, पं० १५, अ० ४७

(स्थान-अभय जैन पुस्तकालय)

(२३) **मूरख सोलही** । रचियता-लालचंद। पद्य १७

आदि— अथ मूरख सोलही लिख्यते—

कुबुधी कदे न आवइ मनसा काम की, घुंस राति मन मांहि जउ तिसना दांम की।
भली बुरी कछु बात न जांणइ आप था, अरु मुरख सिरु सींग कहा होइ नव हत्था ॥

अन्त— समझो चतुर सुजांण, या मूरख सोलही।
किवरी विरत विचार, सुकवि लालचन्दै कही ॥
समझै आरिख एह, कुसज्जन संग था।
अरु मूरख सिरु सींग, कहा होइ नवहत्था ॥ १७ ॥

प्रति- गीदड़ रासो वाले पत्र १ में लिखित।

(दानसागर भंडार)

जैन साहित्य

(१) अनुभव प्रकाश । रचयिता-दीप (चंद) । १८ वीं शती

आदि-

अथ अनुभव प्रकाश लिख्यते ।

दोहरा-

गुण अनंतमय परम पद, श्री जिनवर भगवान ।
गेय लखंत है ज्ञान में, अचल सदा जिन थान ॥

गद्य-

परम देवाधिदेव परमात्मा परमेश्वर परमपूज्य अमल अनूपम आणंदमय अखंडित भगवान निर्वाण नाथ कूं नमस्कार करि **अनुभव प्रकाश** ग्रंथ करों हों। जिनके प्रसादतें पदार्थ का स्वरूप जानि निज आणंद उपजै ? प्रथम यह लोक षट द्रव्य का बन्या है। तामें पंच द्रव्य सों भिन्न सहज स्वभाव सत्‌चित् आनंदादि गुणमय चिदानंद है। अनादि कर्म संजोग तें अनादि असुद्ध होय रह्या है।

अन्त-

यह 'अनुभव प्रकास' ज्ञान निज दाय है ।
करियाको अभ्यास संत सुख पाय है ।
यामें अर्थ (अपार) सदा भवि सई है ।
कहे दीप अतिकार आप पद को लहै ।

इति श्री अनुभवप्रकास अध्यात्म ग्रन्थ समाप्ता ।

लेखन काल-संवत् १८६३ वर्षे मिति फागुण शितात् द्वितीयायां चंद्रवासरे लिख्यतम्, पम हेतोद्येन श्री ।

प्रति-पुस्तकाकार । पत्र ३५ से ५८ । पंक्ति २६ से ४० । अक्षर ३० से ४० साइज ७। × ११

[स्थान-अभय जैन ग्रंथालय]

(२) कल्याण मंदिर टीका (गद्य.) । रचयिता-आखैराज श्रीमाल ।

आदि-

परम ज्योति परमातमा, परम ज्ञान परवीन ।
वंदौ परमानंद-मय, घट घट अन्तर लीन ।

अन्त-

यह कल्याण मंदिर की टीका, पढ़त सुनत सुख होई ।
आखैराज श्रीमाल ने, करी यथा मति जोइ ॥४५।

लेखन काल-संवत १७६६ म० सु० ६ गु० लि० अकबराबादे बहादुरसाह राज्ये ।

प्रति-पत्र २५ । पंक्ति-११ । अक्षर-३३ ।

[स्थान-सेठिया जैन ग्रंथालय]

(३) कल्याण मंदिर धुपदानि । रचयिता-आनंद ।

आदि-

दूहा

आनंद वदत कृपा करहु, श्री जिनवर की वानि
शुभ मंदिर के रचहुं पद, काव्य अरथ परमानि ॥ १ ॥

राग-सारंग-

चरणांबुज श्री जिनराज के प्रणमुंहुं सकल मंगलके,
मंदिर अतिहि उदार कह्या जिके । च० ।
दुरित निवारण भव भय तारण, प्रसंसित सकल समाज के ।
भव जल निधि से बुडत जगत को, तारण विरूद्ध जिहाजके ॥ २ ॥

अन्त-

वे नर रसिक चतुर उदार ।
पास जिनवर दास तेरे, जगत के शिरदार ॥ १ ॥ वे० ।

रूप निरूपम जल सुवासित, वचन परम रसार ॥ २ ॥ वे० ।
नवल झलकत कांति मनुहर, देव के अवतार ॥
विलसि संपद लहई आनंद, सुगति के सुख सार ॥३॥वे०४४॥

इति कल्याण मंदिर स्तोत्रस्य ध्रु पदानि ।
लेखनकाल-संवत् १७१०

[स्थान-प्रतिलिपि-अभय जैन ग्रन्थालय]

(४) **कुशल विलास** । पद्य-७८ । रचयिता-कुशल ।

आदि-

अथ कुशल विलास लिख्यते
राजा परजा जे नर नारि, बाला तरुणा बूढ़ा ।
आला सूका सरव जलेंगे, ज्यूं जंगल का कूड़ा ।
पर घर छांड मांड घर घर का घर में कर घर वासा ।
पर घर में केते घर घर है, घर घर में मेवासा ॥ १ ॥

अन्त-

धरम विवेक विना गुरु संगति, फिर फिर वो चौरासी ।
कुसल कहे चेत सयाने, फिर पीछे पीछे पिछतासी ॥७७॥
सुणे भणे वांचे पढ़े, भूल भरम को नास ।
नाम धर्यो या ग्रन्थ को, कुसल विवेक विलास ॥७८॥

लेखनकाल-संवत् १९३३, मांह वदि १२, रवि वासरे-तत् शिष्य मुनि अभय-सागर लिपि कृतं श्री अहिपुर पट्टण नगरे ।

प्रति-पत्र ६ । पंक्ति १३ । अक्षर ४० । साइज-१०॥ × ५

[स्थान-अभय जैन पुस्तकालय]

(५) **कुशल सतसई** । रचयिता-कुशलचंद्रजी ।

आदि-

नमन करूं महावीर को, जग जन तारण हार ।
कुशल गुरु कुशलेंहु को, देहु सुमति सुविचार ॥ १ ॥

जिन वानी हिरदै धरी, करहुं गच्छ हितकार ।
जिहिं ते कर्म कषाय का, नाश होत ततकार ॥ २ ॥
ज्ञानचंद्र गुण गण रमण, भए सन्त श्रुत धार ।
उनके चरनन में रही, रचहु सतसई सार ॥ ३ ॥

विशेष-इसकी पूरी प्रति अभी प्राप्त नहीं हुई । खांव गांव के यतिवय बालचंद्राचार्य के कथनानुसार बीकानेर में प्रति मोहनलालजी के पास उन्होंने इसकी प्रति स्वयं देखी थी । उनके पास जो थोड़े से दोहे नकल किये हुए मुझे भेजे थे उसीसे ऊपर उद्धत किये गये हैं ।

[स्थान-यति मोहनलालजी, बीकानेर]

(६) चतुर्विंशति जिन स्तवन सवैयादि-रचयिता-विनोदीलाल,पद्य ७१

लेखनकाल सं० १८३९

आदि-

जाके चरणारविंद पूजित सुरिंद इंद देवन के वृंद चंद शोभा अतिभारी है ।
जाके नख पर रवि कौटिन किरण वोरे मुख देखै कामदेव सोभा छबिहारी है ।
जाकी देह उत्तम है दर्पन सी देखीयत अपनों सरूप भव सातकी विचारी है ।
कहत विनोदीलाल मन वचन त्रिहुकाल ऐसे नामिनंदन कूं वंदना हमारी है ।

× × ×

अन्त-

मैं मतिहीन अधीन दीन की अस्तुत इतनी करें कहां तें अधिक होइ जाकी मति जितनी ।
वर्णहीन तुक भंग होइ सो फेर बनावहु ।
पंडित जन कविराज मोहि मत अंक लगावहु ॥
यह लालपचीसी तवन करि, बुद्धि हीन ठाढौ दई ।
जिनराज नाम चौबीस भजि, श्रुत ते मति कंचन भई ॥ ७ ॥

इति चतुर्विंशति स्तवनं । इति विनोदीलाल कृत कवित्त संपूर्णम् ।
लिखतं वेणीप्रसाद श्रावक वाचणार्थं ।
ली० श्री संवत् १८३९ भाद्रपद कृष्णा तृतीया सुक्रवार, पत्र १४, पं० १२, अ० २७

विशेष-आरम्भ के ८-६ पद्य आदिनाथ के, फिर नवकार, १२ भावना पार्श्वनाथके सवैये हैं। पद्यांक ४७ से ६८ में २४ तीर्थंकरों के एक २ सवैये हैं।

[स्थान-अभय जैन ग्रन्थालय]

(७) चौवीश जिनपद

आदि-

नाभिरायां कुलचंद, मरुदेवी केरे नंद ।
अधिक दीठइ आणंद, टारइ भव फेरउ ॥
निरमल गांगनीर, सोवन व्रन्न सरीर ।
सेवतां संसार तीर, जाकइ इंद्र चेरउ ॥
नयरंग कहइ लोइ, सुणउ २ सहु कोइ ।
त्रिभुवन नीको जोइ, नाही हइ अनेरउ ॥
सेव सेव आदिनाथ, सिवपुर केरउ साथ ।
सुरतरु जाके हाथ, सोहन नवेरउ ॥ १ ॥

प्रति-पत्र २ अपूर्ण, पद ३२ पूरे, ३३ वां अधूरा रह जाता है। ले-१७ वीं लिखित।

[अभयजैन ग्रंथालय]

(८) चौवीस जिन सवैया धरमसी

आदि-

आदि ही कौ तीर्थंकर आदि ही कौ भिक्षाचर ।
आदि राय आदि जिन च्यारौं नाम आदि आदि ॥
पाँचमौ रिषभनांम पूरै सब इच्छा काम ।
काम धेनु काम कुंभ को नो सब मादि मादि ॥
मन सौ मिथ्यात मेटि भाव सौ जिणंद भेटि ।
पावौज्यु अनंत सुख जावौगुण वादि वादि ॥
साची धर्म सीख धारि आदि ही कुं सेवो यार ।
आदि की दुहाई भाई जौ न बोलै आदि आदि ॥ १ ॥

अंत-

साधु भाव दस च्यारि हजार, हजार छतीस सु साध्वी वंदौ ।
गुणसठि सहस्स सिरै लख श्रावक श्रावकणीं दुगुणी दुति चंदौ ॥

चौवीस में जिनराज कहै राज विराजत आज सबैं सुख कंधौ ।
श्री धुमसी कहैं वीर जिणिंह कौ शासन धर्म सदा चिरनन्दौ ॥२॥

इति-चौवीस तीर्थंकरां रा सवैया संपूर्ण । लेः- पं. सायजी लिखतं बीकानेर मध्ये सम्वत् १७८१ वर्षे मिती आषाढ़ सुदी ६ दिने ।

प्रति पत्र २, पंक्ति १४ अ. १६

[अभय जैन ग्रंथालय]

(६) **चौवीशी । रचयिता**-गुणविलास (गोकुलचन्द) सं. १७६२ जैसलमेर

आदि-

गोकलचन्द कृत चौवीसी ।
अब मोह तारौ दीनदयाल ।
सबही मत देखौ मई जिन नित, तुमही नाम रसाल ॥ १ ॥ अ. ॥
आदि अनादि पुरुष हौ तुमही, तुमही विष्णु गुपाल ।
शिव ब्रह्मा तुमही में सर वधै, भाजि गयौ भ्रम जाल ॥ २ ॥ आः ॥
मोह विकल भूल्यौ भव मांहि, फियौं अनंता काल ।
'**गुण विलास**' श्री ऋषभ जिणेसर, मेरी करो प्रतिपाल ॥ ३ ॥ आ. ॥

अन्त-

संवत सतर बाणवै वरसे, माघ शुक्ल दुतीयाए ।
जेसलमेर नगर मैं हरषै, करि पूरन सुख पाए ॥
पाठक श्री सिद्धि वरधन सदगुरु, जिहि विधि राग बताए ।
'**गुण विलास**'पाठक तिहि विध सौं, श्रीजिनराज मल्हाए ॥ ५ ॥

इति चौवीस तीरंथकरायां (स्तवन) संपूर्ण ।

लेखनक काल - १६वीं शताब्दी

प्रति - १ पत्र । पंक्ति १६ । अक्षर ५४ । २ पत्र २४ की संग्रह प्रति में

[स्थान-अभय जैन ग्रंथालय]

(१०) **चौवीशी** जिन रत्न सूरि

आदि-

राग वेभास तथा श्रीराग ।
समरि समरि मन प्रथम जिनं ।

युगला धरम निवारण सामी निरखी जइते सफल दिनं ॥ १ ॥
उपसम रस सागर नित नागर दूरि करइ पातग मलिनं ।
श्रीजिन रतन सूरि मधुकर जिम, रसिक सदा प्रभुपद नलिनं ॥ २ ॥

अंत-

राग धन्यासीः-
चउवीसे जिनवर जे गावइ
त्रिकरण शुद्ध तिके भवि प्राणी, मन वंछित पूरन पावइ ॥ १ ॥
श्री जिनराज सूरि खरतरगच्छ सह गुरु नइ सुप सावइ ।
राति दिवस तुम्ह गुण समरी जइ एह भाव मनि आवइ ॥
श्री जिन रतन प्रभु तणी सानिध, दिन २ अधिकइ दरवइ ।
आरति खेइ ध्यान दुइ परिहरि, धर्म ध्यांन नितु ध्यावइ ॥ २ ॥

इति चउवीसी

प्रति- ३ प्रतियां, पत्र १-२-६ जिनमें १ सं. १७१६ सोमनंदन लि०

[अभय जैन ग्रंथालय]

(११) **चौबीशीपद**—कोटारी मगनलाल कृत

आदि-

करूं सेव ऋषभदेव प्रथम जिणंदा ।

अंत-

तीस नव उगनीसै संवत, वर्णव्या प्रभु निर्मला ।
मगन जिनवर जाप जपतां, शुभ दिशा चड़ती कला ॥ ५ ॥

दोहा

चौवीसी जिन गुण वरणी, निज बुधि के अनुसार ।
मगनलाल ने दी लखि, भक्तन के सुखकार ॥ १ ॥
जयपुर राजस्थान में, विदित कर्ण के काज ।
रचे राग पद सुगम करि, सब सुख के हैं साज ॥ २ ॥
तुफीद खलायक मंत्र है, सहद अकबदा बाद ।
अधकारी मूंसी तहां, महावीर परसाद ॥ ३ ॥

तिनकी अनुमति पाय के छपवाइ पुनी ताए ।
भक्त जन के अर्थ एह, करूं निवेदन जाए ॥ ४ ॥

लिखतं लछमनदास अंबाले मध्ये मोतीलाल की चोवीसी

(१२) चौवीस जिन सवैया आदि । रचयिता–उदय ।

आदि–

प्रथम ही तीर्थंकर रूप परमेश्वर कौ, वंश ही इक्ष्वाकु अवतंश ही कहायौ है ।
वृषभ लांछन पग धोरी रहै धींग जाकै, धन्य मरु देव ताकी कुक्षि आयौ है ॥
राजऋद्धि छोर करि भिक्षाचार भेष भये, समता संतोष ज्ञान केवल ही पायौ है ।
नाभि रायजू को नंद नमै सुर नर वृंद, उदय कहत गिरि शत्रुं जे सुहायौ है ॥ १ ॥

अंत–

फर संसार मांहै आयौ तब कीयो स्पर्श, रसना के रस मांहि रह्यौ दिन रात ही ।
प्राण हू के रस मांहि आयौ तासूं थी सुवास, चक्षूही के रस रूप देखे बहु भांति ही ।
श्रोत हू के रस मांही आयौ राज हुवो मग्न, विषय त्रेवीस याके सब कहिलात ही ।
उदय कहत अब बार बार कहौं तोहि, तार मोहि तारक तूं त्रिभुवन तात ही ॥

लेखनकाल–१६ वीं शताब्दी

[बीकानेर बृहद् ज्ञानभंडार ।]

वि० भक्ति, नीति, उपदेशादि सम्बन्धी अन्य २०० फुटकर सवैये कवि के रचित इस प्रति में साथ ही हैं।

(१३) चोवीस स्तवन । –रचयिता–राज ।

आदि–

पद–राग वेलाउल–

आज सकल मंगल मिले, आज परम आनंदा ।
परम पुनीत जनम भयौ, पेखै प्रथम जिनंदा ॥ १–॥ आ० ॥

फटे पडल अज्ञान के, जागी ज्योति उदारा ।
अंतर जामी मैं लख्यौ, आतम अविकारा ॥ २ ॥ आ० ॥

तूं करता सुख संग कौ, वंछित फल दाता ।
और ठौर राचे न ते, जे तुम संग राता ॥ ३ ॥ आ० ॥

अकल अनादि अनंत तूं, भव भय तैं न्यारा ।
मूरख भाव न जान ही, संतन कूं प्यारा ॥ ४ ॥ आ० ॥
परमातम प्रतिबिंब सी, जिन मूरति जांनै ।
तें पूजित जिनराज कूं, अनुभव रस मांनै ॥ ५ ॥ आ० ॥

अंत-

राग धन्या सिरी

नित नित प्रणमि चउवीसे जिनवर ।
सेवक जनमन वंछित पूरण, संमति परतखि सुरतर ॥१॥ नि. ॥
रिषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति नाथ पदम प्रभु,
सुपाद चंद्रप्रभ सुविधि सीतल जिन, श्रेयांस श्रीवासुपूय विभु ॥२॥नि
विमल अनंत धर्म शांति कुंथुजिन, महिम मुनिसुव्रत देवा ।
नमि नेमि पास महावीर सामी, त्रिभुवन करत सुसेवा ॥३॥ नि. ॥
दरसन ज्ञान चरण गुण करि सम, ए चोवीस तिर्थंकर ।
राज श्री लिखमीवल्लभ प्रभु नाम जपतभव भयहर ॥४॥ नि.॥

इति श्री चतुर्विंशति तीर्थंकराया मिति अध्यात्म युक्तानि पदानि ।
ले० सं० १७५५ लिखतं गांव पीपासर मध्ये माह वदि ४ ।
प्रति-१ । पत्र ४ । पंक्ति १४ । अक्षर ४० ।

२। पत्र ४, सं० १७६०, फा० व० १ गु मुलताण मध्ये सुखराम लि०
[अभय जैन ग्रंथालय]

(१४) चौवीसी । पद-२५ । रचयिता-जिनहर्ष ।

आदि नाथ पद - राग ललित ।

देख्यौ ऋषभ जिनंद तब तेरे पातिक दूरि गयौ,
प्रथम जिनंद चन्द कलि सुर-तरु कंद ।
सेवै सुर नर इंद आनन्द भयौ ॥ १ ॥ दे० ॥
जाके महिमा कीरति सार प्रसिद्ध बढ़ी संसार,
कोऊ न लहत पार जगत्र नयौ ।

पंचम आरै में आज जागै ज्योति जिनराज,
भव सिंधुको जिहाज आणि कै त्यो ॥ २ ॥ दे० ॥

बण्या अद्भुत रूप, मोहनी छबि अनूप,
धरम कौ साचौ भूप, प्रभुजी जयौ ।
कहै जिन हरषित नयण भारे निरखित,
सुख घन बरसत, इति उदयौ ॥ ३ ॥ दे० ॥

अंत–

राग धन्या सिरी

जिनवर चौवीसे सुखदाई ।
भाव भगति धरि निजमनि थिरकरि, कीरति मन सुध गाई ॥१॥ जि. ॥
जाके नाम कलपवष समवर, प्रणमति नव निधि पाई ।
चौवीसे पद चतुर गाईओ, राग बंध चतुराई ॥२॥ जि. ॥
श्री सोम गणि सुपसाउ पाइके, निरमल मति उर आनई ।
इति चोवीस तीर्थ कराणां पदानी ॥३॥ जि.

ले० सं० १७६६ रा माघ वदी १० श्री मरोटे लि० पं० भुवन विशाल मुनिना ।
प्रति-पत्र ३, इसके बाद आनंदवर्द्धन की चौवीसी प्रारम्भ होती है ।

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(१५) चौवीसी । पद-२५ । रचयिता-ज्ञानसार । रचनाकाल-संवत् १८७५, मार्ग सु० १५ । बीकानेर ।

आदि–

राग भैरूं-उठत प्रभात नाम जिनजी कौ गाइयै ।

ऋषभ जिणंदा, आणंद कंद कंदा ।
याही तैं चरण सेवै, कोट सुर इंदा ॥ ऋ० ॥ १ ॥
मरु देवा नाभिनंद, अनुभव चकोरचंद ।
आप रूप कौ सरूप, कोट ज्युं दिणंदा ॥ ऋ० ॥ २ ॥
शिव शक्ति न चाहूं, चाहूं न गोविंदा ।
ज्ञानसार भक्ति चाहुँ, मैं हूँ तेरा बंदा ॥ ऋ० ॥ ३ ॥

प्रति– [अभय जैन ग्रन्थालय]

(१६) चंद चौपई समालोचना । पद्य–४१३ । रचयिता–ज्ञानसार
रचना काल – सम्वत् १८७७ चैत्र बदी–२ ।

आदि–

ए निश्च निश्चै करौ, लखि रचना कौ मांझ ।
छंद अलंकारै निपुण, नहीं मोहन कविराज ॥ १ ॥
दोहा छंदै विषम पद, कही तीन दस मात ।
सम में ग्यारह द्व धरे, छंद गिरंथे ख्यात ॥ २ ॥
सो तो पहिले ही पदै, मात रचीं दो बार ।
अलंकार दूषण लिखूं, लिखत चढत विस्तार ॥ ३ ॥

अंत–

ना कवि की निन्दा करी, ना कछु राखी कान ।
कवि कृत कविता शास्त्र की, सम्मति लिखी सयान ॥ २ ॥
दोहा त्रिक दश च्यार सौ, प्रस्तावीक नवीन ।
खरतर भट्टारक गच्छै, ज्ञान सार लिख दीन ॥ ३ ॥
भय भय पवयणमाय सिध, धानवाम लिख दीध ।
चैत किसन दुतिया दिने, संपूरण रस पीध ॥ ४ ॥

इति श्री चंद चरित्र सम्पूर्णं । संवन्नवत्यधिकान्यष्टादश–शतानि (१८८६) प्रमिते मासोत्तम मासे चैत्र कृष्णेकादश्यां तिथौ मार्त्तण्ड वारे श्रीमत्बृहतखरतर गच्छे पं. आणंदविनय मुनिस्तच्छिष्य पं० लक्ष्मीधीर मुनिस्तस्य पठनार्थमिदं लि०। श्री । श्री । लूणकरणसर मध्ये ॥ (पत्र ८७)

[स्थान–सुमेरमलजी यति संग्रह,भीनासर]

(१७). जयतिहुअण स्तोत्र भाषा । पद्य ४१ । रचयिता–क्षमा कल्याण । महिमापुर—

आदि–

परम पुरुष परमेशिता, परमानंद निधांन ।
पुरसादाणी पास जिन, वंदु परम प्रधांन ॥ १ ॥

अन्त-

महिमापुर मंडन जिनराया, सुविधि नाथ प्रभु के सुपसाय ।
श्री जिनचंद्र सूरि मुनिराज, धर्म राज्य जयवंत समाज ॥३९॥
बंगदेश शोभित सुश्रोत, श्रोश वंश कातेला गोत ।
सोभाचंद सुत गूजरमल्ल, भ्राता तनसुखराय निसल्ल ॥४०॥
तिनके आग्रह सैं गुन कीन, जपतिहुअण की भाषा कीन ।
वाचक अमृत धर्म गनीस, सीस क्षमा कल्याण जगीस ॥४१॥

लेखनकाल-१९ वीं शताब्दी ।

प्रति-पत्र २

[स्थान-अभय जैन ग्रंथालय]

(१८) जिनलाभ सूरि द्वावैत । रचयिता-वम्ता(विनयभक्ति)

आदि-

अथ पदावली सहित श्री जिनलाभ सूरिजी री द्वाबैत लिखीजै छै वाचक विनयभक्ति जी री कही

गाहा चौसर

धवल धणी सेवक धरणी धर, धुर सिर हर देवां धरणी धर ।
धुंना देवै नमो धरणी धर, धरिजै कृपा नजर धरणी धर ॥१॥
पहपायाल सुन्दरि पदमावती, पूरण मन वंछित पदमावती ।
पृथ्वी अनंत रूप पदमावती, प्रसन मींटि जोवौ पदमावती ॥२॥
इल पामाल हुंता वहि आवौ, अम्हा सहाय करण वहि आवौ ।
इस्ट मंत्र आराही आवौ, आई साद दीयंतां आवौ ॥३॥

वचनिका

ऐसी पदमावती माई बड़े बड़े सिद्ध साधकुंनैं ध्याई । तारा के रूप बौद्ध सासन समाई । गौरी के रूप सिव मत वालुं नैं गाई । जगत में कहांनी हिमाचल की जाई । जाकी संगती काहू सो लखी न जाई । कौसिक मत मैं बज्रा कहानी । सिवजूं की पटरानी । सिव ही के देह में समानी । गाइत्री के रूप चतुरानन मुख पंकज वसी । अच्छर के रूप चौद विद्या में विकसी ।

अन्त—

ऐसे जिनु के सब जस अवदात । किनसैं कह्या ने जात । सब दरियाव कैं जलकी रुसनाई करिवावैं । आसमान का कागद बनवावैं । सुर गुरु से आबु लिखवै की हिम्मति करै । सो थकि जात है । इक उपमान कै उरै । जिस वात मैं सरस्वती हू का नर हया सारा, तौ और कवीश्वरु का क्या विचारा । पर जिन जिन की जैसी उक्ति अरु जैसी बुद्धि की शक्ति । तिन माफक टुक बहुत कह्या ही चाहियै । बडु बडु कविश्वरु की उक्ति देखि हिम्मत हार बैठे रहियै यातै सब गच्छराजन के महाराज गच्छाधिराज श्री जिनलाभ सूरि द्वाबैत कही गुन गाया । अपनी कविता का पुनि स्वामी धर्म का फल पाया ।

दोहा

अविचल जा गिर मेरुल, अहिपति सायर इन्द ।
कायम तां राजस करौ, श्रीजिनलाभ सुरीन्द ॥ १ ॥
कीन्हौ गुण वस्तै सुकवि, बहुत हेत द्वाबैत ।
करियै प्रभु चडती कला, जुग जुग गछपति जैत ॥ २ ॥

इति श्री जिनलाभ सूरि राजानाम् द्वाबैत गुण वाचक वस्तपाल री कही ।

लेखन काल–वा० कुसल भक्ति गणि नाम लिखतम पंचभद्रा मध्ये संवत् १८२८ रा पोष वदी ८ तिथौ रविवारे ।

प्रति–१– गुटकाकार । पत्र ७ । पंक्ति १६ । अक्षर ३७ । साइज ६ × ५॥

२– पत्राकार–सं० १८४२ आ० १२ खारीया में धर्मोदय लिखित पत्र ८॥ पं० १४ अ० ३८

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(१६) जिनसुखसूरि मजलस–रचयिता–उपा–रामविजय सं० १७७२

आदि–

अथ भट्टारक श्री जिनसुखसूरि री द्वावैत मजलस ।

वणारस रुपचंदजी कृत लिख्यते ।

अहो आवौ बे यार बैठो दरबार ।
स चांदणी रात कहौ मजलस की बात ।
कहो कौण कौण मुलक कौण कौण राज देखे ।

कौंण कौंण पातिस्याह देखैं कौंन २ दईवांन देखे।
कौंन कौंन महिर्बान देखे...............
जोधांण राठौड़ राजा अजीतसिंघ देखे,
बीकांण राजा सुजाणसिंघ देखैं ।
आंबेर कछवाहा राजा जयसिंह देखैं ।
आंबेर कछवाहा राजा जयसिंह देखैं ।
जैसाण जादव रावल बुध संघ देखैं ।
ए कैसे हैं, वडे सुविहांन है,वड महिर्बान है,
वडे सिरदार हैं,वडे बूझदार हैं,वडे दातार हैं,
जमी आसमान बीच संभू अवतार हैं ।

अंत-

श्री पूज्य जिनसुखसूरी आइ पाट विराजवे हैं ।
इंद्र से छजते हैं धर्म कथा कहितैं गाजतैं हैं ।
तो ऐस जैन के तखत वडे नेक वखत
साहिब सुविहांन भगवांन से भगर्बान ।
परम कपाल भक्ति प्रतिपाल
चौरासी मूं राज उमरदराज
अई जालम युग जुग कांयम ।
वात को वात चोज का चोज ।
गुणा का गुण मौज की मौज ।
दैसातुं पास रहिया तो द्वागीर ।
चंद द्वावैत कहिया ॥

इति मजलस द्वावैत जिनसुख सूरिजी री संपूर्ण। कीनी रु० श्री रामविजय जी १७७२ करी।

प्रति-इसके प्रारम्भ में जिनवल्लभ सूरि द्वावैत १ पीछे पंजाबी भाषा में सीह चल्लो छंद (रु० रूपचन्दजी रचित) है । कुल पत्र ११, पंक्ति १५, अक्षर ३६ से ४०

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(२०) जीव विचार भाषा—रचयिता—आलमचंद । रचन काल—संवत् १८१५, वैसाख सुदि ५ । मकसुदाबाद ।

आदि—

अथ भाषा लिख्यते—

चोपई

तीन भुवन में दीप समांन । वंदु श्री जिनवर वर्धमांन ।
मन शुद्ध वंदु गुरु के पाय शुभ मति द्ये मुझ सरस्वति माय ॥ १ ॥
भाषा बंध रचूं जीव (वि) चार । सूत्र सिद्धान्त तणै अनुसार ।
अलप बुद्धि के समझण हेत । भाषा किन्ही बुद्धि समेत ॥ २ ॥

अन्त—

समय सुंदरजी सरव प्रसिद्ध । आसकरणजी पंडित वृद्ध ।
तासु शिष्य है कल्याण चंद । तसु लघु बंधव आलमचद ॥ ११० ॥
तिण यह भाषा रची बणाय । निजमति मांफक युगति उपाय ।
बालक ख्याल कियौ मैं अेह । सुगुण सुकवि मति दीज्यो छेह ॥ १११ ॥
बाण शशि वसु चंद वखांण (१८१५) श्रे संवछर संख्या जांण ।
वैसाख सुदि पँचमी रविवार । भाषा बंध रच्यौ जीवचार ॥ ११२ ॥
साह सुगालचंद सुगुण प्रवीन । श्री जिनधर्म माहें लयलीन ।
तिनके हेत करी यह जोड़ि । दिन दिन होज्यो मंगल कोडि ॥ ११३ ॥
नगर नाम मकसूदांबाद । दिन दिन सुख है धर्म प्रसाद ।
संघ चतुरविध कुं जिणचंद । नित नित दीज्यो अधिक आनंद ॥ ११४ ॥

इति श्री जीव विचार भाषा संपूर्णम्

लेखनकाल—सुश्रावक पुन्य प्रभावक श्री जिनाज्ञा प्रतिपालक साउं सुखन गोत्रीय साहजी श्री सुगालचंदजी पठनार्थ ।

प्रति—गुटकाकार । पत्र—११ । पंक्ति २० । अक्षर १५ । साइज ६।×६॥

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(२१) जोगीरासो । जिनदास

आदि—

आदि पुरुष जो आदिज गोतम, आदि जती आदि नाथो ।
आदि पुरुष गुरु जोग पयास्यौ, जय २ जय जगनाथो ॥ १ ॥

तास परंपद मुनिवर हूया, दिगंबर सहिनांणि ।
कद कंदाचार्य गुरु मेरा, पाहुड़ कही कहांणी ॥ २ ॥
तो परु अप्पौ अप्प, न जाणयौ पर सुं पेम घणेरौ ।
वो षद जोग विया नहि तूटत भव तव रोगी केरौं ॥ ३ ॥

अंत–

हौं बलिहारी चेत (न) केरी, जौं चेतन मन भावै ।
छोड़ि अचेतन झूंपड़ा ओयण सिवपुर जावै ॥ ४१ ॥
जोगी रासौ सीखहु श्रावक, दोष न कोई लेजो ।
जो जिनदास त्रिवधि त्रिवधि हि सिध हं समरण कीज्यो ॥ ४२ ॥

इति श्री जोगी रासौ संपूर्ण ॥

प्रतिः— कई है ।

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(२२) ज्ञान गुटका । पद्य-१०५

आदि–

अथ ग्यान गुटका विचार सवैया लिख्यते । भगति का अंग–

दोहा

अरिहंत सिद्ध समरूं सदा, आचार्य उवझाय ।
साधु सकल के चरन कूं, वंदु सीस नमाय ॥ १ ॥
सासन नायक समरिये, भगवंत वीर जिणंद ।
अलय विघन दुरे हरो, आपो परमानंद ॥ २ ॥

× × ×

अन्त–

वासी चंदन कप्पो यद्धर तौनी परे सब सहो ।
अपनी न कहो दुसरे की सहो जिचाहे जीहां रेहो ॥ १०५

इति ज्ञान गुटका हितो उपदेश दूहा सम्बन्ध समाप्त ॥

लेखनकाल–२० वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध

प्रति–पत्र–४, पंक्ति–१५, अक्षर–३६, साइज–१०॥ × ५

[स्थान–अभय जैन ग्रन्थालय]

(२३) ज्ञान चिंतामणि । पद्य-१२८ । रचयिता-मनोहरदास ।

रचना काल संवत् १७२८ शुक्ल ७ भृगुवार । बुरहानपुर ।

आदि-

आदि के कई पत्र गायब हैं ।

अन्त-

ऐसी जानि ज्ञान मन धरो, निरमल मन परमारथ करौ ।
संवत् १७२८ मांही सुदी सप्तमी भृगुवार कहाई ॥१२३॥
नगर बुरां (बुरहा) न पुर खान देश मांही, मुमारख पुरा वसे गुण ग्राह ।
धनें श्रावक वसें विख्यात्, सदा धरम करें दिन रात ॥१२४॥

दोहा

सकल देव रच्छा करे, ग्रह न पीड़े कोय ।
जो सम-दृष्टि हो रहे, ताकि भलि गति होय ॥१२५॥
श्री आदि जिन समरतां, हिरदै आयो ज्ञान ।
ब्रह्म सुथानिक में कह्यौ, लिख्यौ धरम धरु ध्यान ॥१२५॥
भये अठारा दोहरा, गाथा बावन सार ।
और अठावन चौपई, इतना में विस्तार ॥१२७॥
साधु संत के संग सों, हुवौ ज्ञान प्रकाश ।
परमारथ उपगार थें, कहे **मनोहरदास** ॥१२८॥

ज्ञान चिंतामणि संपूर्ण ।

लेखन काल-मिति आषाढ़ वदी १० संवत् १८२४ केवल रसी लिप्यकृतम । वांचे तिनको जथा जोग्य वंचना ।

प्रति-गुटकाकार । पत्र-२० । पंक्ति-१२ । अक्षर-१४, साइज-५॥। × ६.

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(२४) ज्ञान प्रकाश । रचयिता-नंदलाल । रचना काल-संवत् १९०६ । कपूरथला ।

आदि-

वद्धमाणं नमो किच्चा सासण नाय जो मुणि ।

गणहर गोयमं वन्दे, कल्लाणं मंगलं पट्ठे ॥ १ ॥

× × ×

मिथ्या दृष्टि जीव की, श्रद्धा विषम जो होइ ।
दृष्टि विषम के कारणे, देव विषम तस जोइ ॥ १ ॥

अन्त-

एह ग्रन्थ पूर्ण थयो, नामे **ज्ञान प्रकास** ।
सत गुरु कृपा क.......भव्य जीव हित भास ॥

× × ×

उत्तर देश पंजाब में, कपूरथले मंझार ।
उनवीसवें सठ (षट्) साल में ग्रन्थ रच्यौ शुभकार ॥ १६ ॥

× × ×

काल (प्लट ?) पंचमें ऋषि विराजे, श्रीमनजी मोटा ऋषिराय ।
तास पटोधर संत मुनीसर, **नाथूराम** महन्त कहाय ॥
ऋषि **रायचन्द** सत गुणा कर शिष्य श्री **रतिराम** कहाय ।
तस चरणां बुज सेवन हारो, **नन्दलाल** मुनि गुण गाय ॥ २३ ॥
जिसी भावना माहरी, तैसे ग्रन्थ बणाय ।
ओछो अधिको जो कह्यो, मिच्छामि दुक्कड़ मथाय ॥ २४ ॥

लेखनकाल-रचना समय के समकालीन

प्रति-पत्र-२१ । पंक्ति-१२ से १६, अक्षर ४२ से ५२ ।

विशेष-ग्रन्थ दस काण्डों में विभक्त है । इसमें सम्यकत्व और सम्यक दृष्टि का वर्णन है ।

[स्थान- चारित्र सूरि भण्डार]

(२५) ज्ञानार्णव (भाषा चौपई बंध) रचयिता-लब्धि विमल ।

सं० १७२८ विजय दशमी, फतेपुर में ताराचंद आग्रह से

आदि-

छप्पय छंद

ललित चिह्न पर कलित मिलत निरखति निज संपत ।
हरषित मुनि जन होय कलिमल गुण जंपति ॥

दिढ आसन थिति बासु जासु उज्जल जग कीरति ।
प्रातीहा राज अष्ट नष्ट गत रोग न पीरति ॥
अजरामर एकल अछल अग अनुपम अनमित शिव करन् ।
इंद्रादिक वंदित चरण युग जय जय जिन अशरन शरन ॥ १ ॥

दोहा

ज्ञान रमा धन श्लेष तैं, वंदित परमानंद ।
अजर अबै परमातमा, नमो देव जिनचंद ॥ २ ॥

× × × ×

कहि हौं संत प्रमोद घर, यह ज्ञानार्णव ग्रन्थ ।
जग विद्या निग्रह करै, कोविद शिव को पंथ ॥ १३ ॥

× × × ×

पूर्वाचार्य स्तुति में समंतभद्र, देवनंदी, जिनसेन, अकलंक का निर्देश है।

× × × ×

ज्ञान समुद्र अपार वय, मति नौका गति मंद ।
पै वै (खे ?) वट नीकों मिल्यौ, आचारज शुभचंद ॥ ४७ ॥
ताके वचन विचारि कैं, कीने भाषा छंद ।
आतम लाभ निहारि मनि, आचारज लखमीचंद ॥ ४८ ॥
सुगुरु कृपा तें मै सुगम, पायौ आगम पंथ ।
भविक बोध के कारनै, भाषा कीनौं ग्रंथ ॥ ४९ ॥

कुंडलिया

गन खरतर सब जग विदित, शुभ भाषा जिनचंद ।
लब्धि रंग पाठक सुगुरु, रत जिन धर्म अनंद ॥
रत जिनधर्म अनंद, नंद सम ब्रह्म विचारी ।
द्वै शिष ताके भए, विदुष चित्त शुभ जिन गुन धारी ॥
कुशल नारायणदास तासु लघु भ्रात लखमन ।
जानि भविक सुख न विदित्र जग सब खरतर गन ॥ ५० ॥

बदलिया गोत घर करत वजीरी नित, स्वामि कांम सावधान हियो परिचाऊ है ।
ताराचंद नाम वस्तपालजू को नंद हिरदै मैं जाके जिनवानी ठहराउ है ॥

इन ही के कारन तें ग्रन्थ ज्ञान निधि भयौ, पठत सुनत याके मिटत विभाव हैं ।
आगम अगिम कौं वखान्यौ मग भाषा रचि, स्व रस रसिक यासौं राखे चित चाउ है ॥ ५२ ॥
ज्ञान समुद्र सुभाष सुभ, पदमागम सुख कंद ।
सज्जन सुनहु विवेक करि, पढ़ति गुनत आनंद ॥ ५३ ॥

इति श्री ज्ञानार्णवे योग प्रदीपाधिकारे भइया श्री ताराचंद सुतभ्यर्थनया पंडित लब्धि विमल कृतौ भाषाया प्रारंभ पीठिका वर्णनं प्रथमो प्रकरणम् (१)

अंत-

वसु८युग२ मुनि७ इंदु१संवत् कुवार मास विजय दशमि वार मंगल उदारू है ।
देव जिन मानिक कै पाट भए जिनचन्द अकबर साहि जाकों कहैं सिरदारू है ॥
उवभ्फाइ समैराज कौल लाभ भए ताके लवधि कीरत गति जगजस सारू है ।
लब्धि रंग पाठक हमारे उपगारी गुर तिनके सहाइ रच्यौ आगम विचारू हैं ॥ ५७ ॥
ताराचन्द उदौ भये जैसैं नत ताई रेहे प्रतिपल साम्य वाढै जैसैं बालचन्द है ।
वस्तु के विलोकन को यहै है तिलोकचन्द और चन्द्रभानु यासौं दोऊ मतिमंद हैं ॥
दहन कषाय कौं वरफ तूं किया चाहै सम्यक सौं राचि भई या जहा नाही दंद है ।
ज्ञानसिंधु कारन है सम्यक की सुद्धता कौं यहै हेतु जानि रच्यौ ग्रंथ शुभ चंद है ॥ ५८ ॥
नगर फतेपुर मैं क्याम खाती कायम हैं सिरदार साहिब अलिफखां दीवान है ।
ताति राज काज भार ताराचंदजू कौं दीनौ देश कौ दिवान किनौ जातु परधांन है ॥
ताकै जैन बानी कौ श्रद्धान प्रमान ज्ञान दरशनवान दयावान प्रतीतवान अवधान है ।
इनही के कारन तैं भाषा भयौ ज्ञानसिंधु आगम कौ अग यामें ध्यान कौ विधान है ॥ ५९ ॥

इति श्रीमालान्वये वदलिया गोत्रे परम पवित्र भईया श्रीवस्तुपाल सुत श्री ताराचंद साभ्यर्थनया पंडित लब्धि विमलगणि कृतौ ज्ञानार्णव भाषायां योग योग प्रदीपाधिकार संपूर्णम् ॥ संवत् १८२८ वर्षे श्री अश्विन मासे शुक्लपक्षे तिथौ चतुर्दश्यां ॥ १४ ॥ भौमवासराग्विनायाम्, लिखितं स्वामी रिषि शिवैचंद गौश गंज मध्ये पठनार्थं आत्मार्थ व परमार्थो ॥

(सं० १९७५ आश्विन शुक्ला ६ गु० लि० अमीलाव श्रमा निवासी ग्राम पालय सूबा दिल्ली सहर का यह शास्त्र बाकी दिल्लो ला. महावीर प्रसाद उर्फ नूरीमल की स्त्री ने भी मंदिरजी कूये सेठ में प्रदान किया ।

पत्र ६६, पंक्ति १२, अक्षर ४२, साइज १२ × ७

१. शेष अधिकारों में लक्ष्मीचंद्र नाम भी है।

(२५) तत्त्व प्रबोध नाटक।

आदि—

॥ ६० ॥ नमः श्री प्रत्यूह व्यूंह छिदे राग ललित दोहरा —

स्याद वाद वादी तिलक, जगगुरु जगदानन्द।
चन्द सूरितै अधिक द्युति, जै जिन सो जगिचन्द ॥१॥

मध्ये गुरु नाम प्रथमार्हंत वर्णंन सं. ३१ सा.

साद वाद मतता कौ, ज्ञान ध्यान शुद्ध ताकौ.
नव भेद वेद वाको, नाही है इकत्त्व कौ।
हरि हर इन्द चन्द, सुरा सुर नर वृन्द,
ज्ञानी बिन जानैं कौन, यावता कै सत्व कौ।
चौतीस अनेक जास, अतिसय कौ विलासं,
लोका लोक कौ प्रकास, ह्रासन अमत्व कौ।
सोई अरिहत देव, श्री जिन समुद्र सेव,
प्रणमि दिखाउं भेव, सुणौ नव तत्व कौ ॥२॥

दोहा

अरि हंतादिक पंच पद, नायक पन्च प्रमिष्ट।
पृथक् भेद करि वर्ण हौं, सुनहु सुगुन गुन मिष्ट ॥३॥

प्रथमार्हंत वर्णनं, सवैया ३१ सा—

अष्ट महा प्राति हार्य राजति जिनेन्द्र राजा सुरासुर कोडि करजोडि सेवै द्वारजू
तीन शाल प्रविसाल रूप्य स्वर्ण मणिमाल चिहुदिशि सायुध प्रवर प्रतीहारजू॥
कंचन नव कमल ध्वन क्रमयुगल विमल गगन तल अमल विहारजू, श्रीजिन
समुद्रसोईं तीन लोक पति होई जय जय जय जिन जगत्र अधारजू ॥ ४ ॥

सवैया ३१ सा—

स्याद वाद मडंन कुवादि वादि खंडण मिथ्यात कौ
विहंडण जू दंडन कुं बोधकौ दोष कौ

निकंदन सुगति पंथ स्यंदन भविजना नन्दन नन्दन सुबोध कौ
सुगति सुख कारन दुगति दुख वारुण भविक जनतारन निवारन करोध कौ
श्रीजिन समुद्र सांमी सोई साचौ सिवगांमी नमुंसिरनांमी जाकौ वचन श्रबोध कौ ॥५॥

अन्त—

अथ ग्रंथ संपूरनं आभोग कथनं – दोहरा —

तत्त्व प्रबोध गुन उदधि ज्यूं, किन विधि लहीयै पार ।
यथा शक्ति कछु वरन यौ, निजमति कै अनुसार ॥७५॥
गाथा प्रकरण अनेकरी, महा अर्थ की खांनि ।
बहु श्रुत धारिजे हुवै, ते सम लखै विज्ञांन ॥७६॥
बाल बुद्धि समझै नहीं, गाथा अरथ दुगम्य ।
तब भाषा कीनी भली, चतुरनि कौं चितरम्य ॥७६॥
संवत सतरह से वरस, बीते ऊपरित्रीस ।
कार्तिक सित पंचमी गुरौ, ग्रंथ रच्यौ सुजगीस ॥७७॥
श्री वेगड गछ मैं भलो, सूरि सकल गुन जांन ।
श्री जिन चन्द सूरी स्गुरु, सुविहित मति सुप्रधांन ॥७८॥
तास सीस सु विनय धरन, श्री जिन समुद्र सूरीस ।
कीनौ सम सुख हेत कौ जोरि सुखद सुकवीश ॥७९॥
पूरब मंगल पंच पद मध्यम साधु प्रवीन ।
अंतिम सम्यक की कला मंगल क्षेम सुचीन ॥८०॥

सवैया—

सकल गुन विधांन पंडित जो प्रधान बहु गुण के विधांन भूषन सहित हैं ।
तत्वकै प्रबोध की जो रचनाकरी मैं हित ताहि तुम सोधियौ जु अरथ अहत है)
संवत सतरहसै तीसै समैं कीनौ एह सिरी दुर्गजैसलमैं धरम महत है ।
श्री जिनचंद सूरीस श्री जिन समुद्रसीस भाखैं शाध ग्यांन ईस वीनती कहत है ॥८१॥

इति श्री तत्वबोध नाम नाटक सपूर्णम् श्री वेगड़ गछाधीश भट्टारक श्री जिन समुद्र सूरिभिःकृतं सं०१७३० कार्तिकयांसित पंचम्यां गुरौ श्री जैसलमेरुगढ महदुर्गे ॥ महा नंद राज्ये श्रीः ॥ श्री श्रीः ॥ कल्याण भूयात् ॥

(२७) तत्व वचनिका । रचयिता- दुलपतराय ।

आदि —

प्रथम शिष्य गुरु दयालसौं, पाणि संपुट जोरि के प्रश्न करत है – स्वामी शुद्ध वस्तु को कहा। अर अशुद्ध वस्तु को कहा : तदा गुरु प्राशाद होय उत्तर कहै है - शिष्य जो वस्तु अपने ही गुन करके सहित है सो तो शुद्ध वस्तु अरु जामैं और वस्तु कौ मिसाल भयौ सो अशुद्ध वस्तु ।

अन्त —

ताके उदय आवे शुभाशुभ कर्म भुक्ते हैं। वाको हर्ष–शोक कछु नहीं। ता (तें) समकीति जीवकों कर्म लगै नहीं, पूर्व कर्मकों निरजरें, नवे कर्म बांधे नहीं । ऐसे कर्म सम्पूर्ण करिके सिद्ध गति मैं बसे हैं ।

इति तत्व वचनिका श्रावक दुलपतरायजी कृत तत्व बोध प्रकाश । ग्रंथ ६०५

लेखनकाल— लि. प्रो. सुखलाल, अजमेर

प्रति— पत्र २२ । पंक्ति – १५ । अक्षर – ३५ ।

विशेष— जैन धर्मानुसार सम्यक्त्व और १२ व्रतादि का वर्णन है ।

[जिन चारित्र सूरि भण्डार]

(२८) त्रैलोक्य दीपक । पद्य–७४३ । रचयिता–कुशल विजय । रचना काल – सम्वत् १८१२

आदि —

श्री जिनवर चौवीस कों, नमों नित्त धर भाव ।
गणधर गोतम स्वामी के, बन्दौं दोनों पांव ॥

अन्त —

शुभ गच्छ तपों में अधिक, पण्डित, कुशल विजय पन्यास ।
यह तीन लोक विचार दीपक, लिखी सुद्ध सुभास ।
कुछ भूल मन्द सवार उनतें, ओसवाल सितम्बरी ।
गुरु भगत समती दास लघु सत, कही भवानीहू करी ॥

[जैसलमेर भण्डार]

(२६) दान शील तप भाव रास रचयिता-कृष्णदास, र.काल सं.१६६६

आदि —

> अं.......... वर मुखवरखनी विमल बुद्धि परगास ।
> दान सील तप भाव का, कविजनं जंपै रास ॥ १
> एक समै राजग्रही, समो अर्या वर्द्धमान ।
> देवहि मिलिकै तहं किया, समो सरन मंडान ॥
> बैठी बारह परखदा, आया अपने ठाऊ ।
> वाद करै नह आप मैं, दान सील तप भाउ ॥
> दान कहै यौं हूंबडो, स्वामी श्री वर्द्धमान ।
> प्रथम बखानउ हम कहूं, एसौ बोल्यौ दांन ॥

अन्त —

> दान सील तप भावका, रांसा सुणे जिकोई ।
> तिसके घरमैं सदा ही, अखै नवनिधि होई ॥

गाथा —

> सोलह सइ गुण हत्तरइ, सम्वत् विक्रम राइ समएखं ।
> सितपक्ख माघ मास रासा कवि क्रिस्णदास उचरिंयं ॥ ७

कलसरउ —

> दान उत्तम सील सुपवित्त तप देही सुद्ध करि मिले ।
> भाव तप सर्व सोह.................. क्या कहो ईक ॥
> इक सबै जगत मैं "दान सील तप भावना चारे एक समान ।
> किशनदास कविजन कहै, सुप्रसन्न श्री वर्द्धमान ॥

इति दान सील तप भावना का रासा संपूर्णम् ।

प्रति-गुटका पत्र २१६ से २८, पं० १३, अ० १८ ।

१८ वीं शताब्दि साइज ५॥ × ४

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(३०) दिगपट खंडन । पद्य १६२ । रचयिता—यश (विजय)

आदि —

अथ अध्यात्म मत खंड ।

सुगुण ध्यान शुभ ध्यान, दान विधि परम प्रकाशक ।
सुघट मान प्रमान, आन जस सुगति अभ्यासक ॥
कुमत वृंद तम कंद, चंद परिद्वन्द्व निकाशक ।
कवित्र मंद मकरंद, संत आनंद विकासक ॥
यश वचन रूचिर गंभीर निजे, दिगपट कपट कुठार सम ।
जिन वर्द्धमान सोई वंदियै, विमल ज्योति पूरण परम ॥ १ ॥

अन्त —

हेमराज पाडे किये, बोल चौरासी फेरी ।
या विधि हम भाषा वचन ता (को) मति कियौ ओरि ॥ ५९ ॥
है दिगपट के वचन से, और दोष सत साख ।
केते काले छेडिये, भुंजित दधि उर माख ॥ ६० ॥
पंडित साचौ सरदहै, मूरख मिथ्या रंग ।
केहनो सो आचार है, जन न तजे निज ढंग ॥ ६१ ॥
सत्य वचन यो सद्दहै, करे सुजन कौ संग ।
वाचक जस कहे सो लहै, मंगल रंग अभंग ॥ ६२ ॥

इति दिगपट खंडन ।

लेखनकाल—१९ वीं शताब्दि

प्रति—पत्र ६ । पंक्ति १६ । अक्षर ४० । साइज ६॥। × ४।

[—अभय जैन ग्रंथालय]

(३१) द्रव्य प्रकाश । रचयिता — देवचन्द्र । रचनाकाल-सं. १७६७ मा. व. १३ । बीकानेर ।

आदि —

अथ द्रव्य प्रकाश लिख्यते—

दूहा —

अज अनादि अवरख गुनी, नित्त चेंतनावान ।
प्रणमुं परमानन्दमय, सिव सरूप भगवान ॥१॥

अथ षट् द्रव्य के नाम सवैया —

प्रथम जांण धर्म द्रव्य, दूसरौ अधर्म द्रव्य, तीसरौ आकास पुनि, लोका लोक मान है ।
चौथौ काल द्रव्य, एक पुदगल द्रव्य रूपी, निज निज सत्रावंत, अनंत अमांन है ॥
पांचौ है अचेतन जू, चेवना सरूप लीये, छट्टौ ज्ञान वान द्रव्य, चेतन सुजान है ।
स्याद वाद नांत्र लीमैं, तीनौ अधिकार कामैं, ग्रंथ को आरम्भ कीनौ, ग्रंथ ज्ञान भांन है ॥

अन्त —

पूर्व कवीसर के गुन वरन (न) स. ३१

पाठक सुपाठही के निवारन आठही कै, **हंसराज** राजपति नामैं **हंसराज** है ।
ताके कीने हैं कलश रात अड़वीस जुत, ज्ञान ही के जांन अरु दंशन के राज है ॥
तत्व के पिछान, जान, ताही को निधान मान, विमल अमल सब, ग्रंथ सिरताज है ।
आपा पर भेद कर, परं ब्रह्म भाव भर शुद्ध सरद्धान धर नर ताकै काज है ॥५३॥

हिन्दू धर्म **बीकानयर**, कीनौ सुख चौमास ।
तहां एह निज ज्ञान मैं, कीयौ ग्रन्थ अभ्यास ॥ ५४ ॥

अथ कवीसरके गुरु के नाम कथन स० ३१

वर्तमान काल थित, आगम सकल वित्त, जगमैं प्रधान ज्ञान वान सब कहै है ।
जिनवर धरम पर, जाकी परतीति थिर, और मत वात चित्त, मांहि नहिं गहै है ।
जिनदत्त सूरि वर, कही जो क्रिया प्रवर **खरतर** खरतर शुद्ध रीति कहै है ।
पुन्यके प्रधान, ध्यान **सागर सुमतिही** कै, **साधू रंग** साधु रंग **राज सार** लहै हैं ॥५५॥

सब पाठक सिर सेहरो, **राज सार** गुन वांन ।
विचरै आरज देश मैं, भविजन छत्र समांन ॥ ५६ ॥

ताके सीश है विनीत, पर मीत सौं विनीत, साधू रीति नीति धारी गुन अभिराम है ।
आत्म ज्ञान धर्म धर, वाचक सिद्धान्त वर, अति उपशांत चित्त, ग्यान धर्म नाम है ॥
ताके शिष्य राजहंस, राजहंस मान सर, सुप्रधान उपमादि गुन गाम धाम है ।
अंतेवासी देवचन्द कीनो ऐ ग्रन्थ वर, अपनो चेतनराम, खेलिवौ को ठांम है ॥

कीनौ इहां सहाय अति, दुर्गदास शुभ चित्त ।
समझावन निज मित्रकों, कीनौ ग्रन्थ पवित्त ॥५८॥

अथ शास्त्र के श्रोता तिनके नाम सं. ३१

आतम सभाव मिठुमल्ल को पहारी दीठो, भैरूंदास भैरूंदास मूलचन्द जान है ।
ग्यान लेख राज वर पारस स्वभाव धर, सोम जीव तत्व परि जाकी सरधांन है ॥
ज्ञानादि त्रिगुन मंत, अध्यातम ध्यान मत, मूलतान थान वासी श्रावक सुजांन है ।
ताकी धर्म प्रीति मन आनि के ग्रन्थ कीनौ,- गुन पर जाय धर जामैं द्रव्य ज्ञान है ॥५६॥

अन्त-

अध्यातम सैलि सरस, जे मानत सो जैन ।
ते वाचैं (गे) ग्रन्थ यह, ग्यानामृत रस लैन ॥६०॥
गुन लछन पहिचांन के, हेय वस्तु करी हेय ।
चिदानंद चि(दरूप) सम, शुद्ध ब्रह्म आदेय ॥६१॥
परमातम नय शुद्ध धरी, शिव मारग ऐहीज ।
यहै मोह मैं नव मर्मै, यही ग्रन्थ को बीज ॥६२॥

सम्वत् कथन दोहा-

विक्रम सम्वत् मान यह, मय लेश्यौं ७ के भेद ।
शुद्ध संजैम अनुमोदि कैं, करि आश्रय को छेद ॥६३॥
ता दिन या पोथी रची, वध्यो अधिक संतोष ।
शुभ वासर पूरन भई, प्रथम जिनेश्वर मोख ॥६४॥

लेखन काल - १६वीं शताब्दी

प्रति - ग्रन्थ ७०० । पत्र १६ । पंक्ति १५ । अक्षर-५२ । साइज ६॥ + ४॥।

[अभय, जैन ग्रन्थालय]

(३२) द्रव्य संग्रह भाषा ।

आदि-

जीवमजीवं दव्व जिनवर वसहेण जेण णिदिट्ठं ।
देविंद विंद वच्छं, वंदे तं सव्वदा सिरसा ॥ १ ॥

अर्थ— तंजिनवर वृषभं, सर्व्वज्ञं अहं वंदे । ते जु श्री जिनव वृषभं सर्वज्ञं अहं वंदे । तेजु श्री जिनवर वृषभ, सर्व्वज्ञ देउ । ताहि वंदे नमस्कार करतु हइ । तं किं जिनवर वृषभं, ते कउणि जिनवर वृषभ, जेणि जिणवर वृषभेन । जिनवर वृषभ सर्वज्ञ देवेन । जीव अजीव द्रव्यं निदिष्टं । जीव द्रव्य अजीव द्रव्य कहें । तं वंदे । ते जिनवर वृषभनूं नमस्कार करतु हइ । केन काहे करि नमस्कार करतु हइ । सिरसा-मस्तकेन मस्तक करि नइ । कितक कालें – कितेक काल लगि नमस्कार करतु हइ । सर्व्वदा सर्व काल विषै । कथं भूतं जिनवर वृषभं । ते जिनवर वृषभ कइसे हइ । दविंद विंद वंदे । देवेंद्र वृंद वंद्यं । देविनके जू इंद्र तिनके जू वृंद समोह ता करि जु वंद्या हइ 'स तेद्रें' करि वंद्या हइ ।

अन्त-

भो मुनि नाथा । भो मुनि नाथं । मये पंडित किसौ हो तुम्हा । दोष संचयंम्बुता । दोषनी के जु संचय कहियइ समूह तिन तइ जो रहित है । मया नेमि चंद्र । मुनि नाथेन भणित यत् द्रव्य संग्रहं । इमां प्रत्यक्षी भूतं । हो जु हो नेमिचंद्र मुनि, तिन जु कह्यौ यहु द्रव्य-संग्रह साचु तोहि सोधयंतु सोधौ, हूं किस्सौ हुं तनु सूत्त धरेणा तेनु कहियइ थोरौ सो सूत्र कहियइ सिद्धांतु, ताकौ जु धारकु हों । अल्प शास्त्र करि संयुक्त है जु नेमिचंद्र मुनि तेणइ कह्यो जु द्रव्यसंग्रहू सास्त्रु तो कौ भो पंडित ! हो । साधो !

इति द्रव्य संग्रह भाषा समाप्त संपूर्ण ।

लेखनकालं-इसी गुट के में अन्यत्र लेखनकाल संवत् १६८४ । ८७ लिखा है ।

प्रति-गुटकाकार । पत्र २२ । पंक्ति १४ । अक्षर २० । साइज ५॥ × ३॥,

[अभय-जैन ग्रंथालय]

(३३) द्वादश अनुपेक्षा– आलू

आदि–

अथ भावना लिख्यते —

ध्रुव वस्तु निश्चल सदा, अध्रुव भाव पट जाव ।
स्कंध रूप जौ देखियैं, पुग्गल तणौ विभाव ॥१॥

छंद —

जीव सुलक्षणा हो, मो प्रति भास्यौ आज ।
परिग्गह परितणा हो, तास्यौं को नहीं काज ॥
कोई काज नांही परहौं सेती सदा ऐसौ जांनियै ।
चैतन्य रूप अनूप निज धन तास सुं सुख मानियै ॥
पिय पुत्र बधव सयल परियण पथिक संगी पेखणा ।
समणाण दंसण सौं चरित्रहं संग रहै जीव सु(ल)क्षणा ॥२॥

अन्त–

अकथ कहानी ग्यान की, कहन सुननं की नांहि ।
आपन ही मैं पाइयै, जब देखें घर मांहि ॥२६॥

इति द्वादश अनुप्रेक्षा आलू कृत समाप्ता ।

प्रति–गुटकाकार । साइज ६॥+४॥ । पत्रांक २०५ । से २०५ । पंक्ति २१ । अक्षर २६ ।

[अभय-जैन ग्रंथालय]

(३४) नवतत्व भाषा बंध । पद्य ८२ । रचयिता-लक्ष्मीवल्लभ ।

रचना काल-संवत् १७४७ वै० व० १३ । हिसार ।

आदि–

श्री श्रुत देवता मन में ध्याय, लहि श्री सद्गुरु को सुपसाय ।
भाष करी नव तत्व विचार, भाषत हुँ सुणियो नरनार ॥ १ ॥

अन्त-

श्री विक्रम सै सतरसै, बीते सहुतालीस ।
तेरसि दिनि वैशाख वदि, वार बखाणि जगीस ॥ ७४ ॥
सुत श्री रूपसिंह के, उत्तम कुल ओसवाल ।
बुच्चा गोत्र प्रदीप सम, जानत बाल गुपाल ॥ ७५ ॥
जिन गुरु सेवा में अडिग, प्रथमज मोहनदास ।
तैसैं ताराचंद श्री, तिलोकचंद सु प्रकास ॥ ७६ ॥
तृ तुथ कीनी प्रार्थना, पुर हिंसार मझार ।
नव तत्व भाषा बंध करो, सो हुइ लाभ अपार ॥ ७७ ॥
तिनके वचन सुचित्त धरी, लक्ष्मीवल्लभ उवकाय ।
नव तत्व भाषा बंध कियौ,जिन वच सु गुरु पसाय ॥ ७८ ॥
श्री जिन कुशल सूरिश्वरु, श्री खरतर गच्छराज ।
तासु परंपर में भये; सब वाचक सिरताज ॥ ७९ ॥
क्षेमकीर्त्ति जग में प्रसिद्ध, ताहु से खेमराज ।
तामे लक्ष्मीवल्लभ भया पाठक पदवी भाख ॥ ८० ॥
पटधारी जिन रतन को, श्री जिन चंद सुरिंद ।
कीनो ताके राज में, नव तत्व भाषा बंध ॥ ८१ ॥
पढ़ै गुणै रुचि सुं सुणे, जे आतम हित काज ।
तिनको मानव भव सफल, वरणत है कविराज ॥ ८२ ॥

लेखनकाल-संवत १७६० वर्षे चैत्र सुदी १३ दिने चं० नेमिमूर्ति लिखितं श्री पल्लिका नगरे ।

प्रति-पत्र ७ । पंक्ति १६ । अक्षर ४८ । साइज-१० × ४ ।

विशेष-जैन धर्म में जीव[१], अजीव,[२] पुण्य[३], पाप[४], आश्रव[५], संवर[६], बंध[७], निर्जर[८] और मोक्ष[९] ये नव तत्व माने जाते हैं । इनके भेद प्रभेद आदि का इसमें वर्णन है ।

[अभय-जैन ग्रंथालय]

(३५) **नववाड़ के झूलणे**– रचयिता – मगनलाल । सं. १६४० भा शु. ८, पत्र २६ ।

आदि–

सरसत सांमण विनवुं, गणपत लागुं पाय ।
सील तनी नव वाड़कुं, गावा मन हुलसाय ॥ १ ॥

अन्त–

नववाड़ा के झूलणा, दोसा रहित बनाय ।
गुरु कृपा से मगन ने, कीनो दो घट आय ॥२५॥
अजी कने दो घट आन, मास भाद्रव सुद अष्टम धारी है ।
उगणीसै साल चालिसामें, किया चौमासा सुखकारी है ॥
जिन धरमी श्रावक लोक वसै जिन श्राग्रह सु मनसा धारी है ।
कहै मगनलाल मुझ बुध तुछ, ग्यांनी जन लेवो सुधारी है ॥

गुटकाकार – [गोविंद पुस्तकालय]

(३६) **नेमजी रेखता**–

आदि–

समुद विजइका फरजंद व्याहनै कौ आपने नेमनाथ खूब बनरा कहाया है ।
वखत विलंदसीस सेहरा विराजता है, जादौं सब पंजकोटि जान खूब लाया है ॥
यानवर देखिकै महरबान हुवा आप, इनकौ खलास करौ येही फुरमाया है ।
जाना है जिहांनकौ दरोग है विनोदीलाल, गिरनार जाय भक्ति सेती चितलाया है ॥

× × +

अन्त–

गिरनेरगढ़ सुहाया, खुस दिल पसंन्द आया तहां जोग चित्तलाया तन कहां गया है ।
शुभ ध्यान चित्त दीहां नवकार मंत्र लीन्हा, परहेज कर्म्म कया है ॥
स्त्री लिंग छेद कीन्हा पुल्लिंग पद लीन्हा ससद रहै स्वर्ग पहुँची ललतांग पद भया है ।
खुस रेखते बनाये लाल विनोदी गाये अनुसाफदर्प दाते, राजुल का भया है ॥

इति श्री नेमिनाथजी की रेखता समाप्त

[अभय जैन ग्रंथालय]

(३७) नेमिनाथ चंदाइण गीत ।

आदि-

राग-केदारा जुडी-दूहउ

सामल वरण सोहामणु, सव गुण तणु भंडार ।
मुगति मनोहर मानिनी तिन को हइ भरतार ॥१॥

चालि-मुगति रमनि तु भरथारा, तुझ गुण कोइ न पावइ पारा
तीन भुवन कु आधारा, अभयदान कुहइ दातारा ॥२॥
ब्रह्मचारि नइ धुरि जानु तेरी दुलतह महीबखानु !
अंधयार हरइ जिनु भानु, तेज अनंत तुम्हारा जानु ॥३॥

अन्त-

नेमिचंदायण जे भणइ रे ते पावइ सुमार ।
मुनि भाऊ उइम वीनवइ छोरउ भव के पार ॥४६॥

(३८) पद ६६ । रचयिता – रूपचन्द ।

पद – चेतन चेति चतुर सुजान ।

कहा रंग रच रह्यौ पर सौ, प्रीति करि अति वान ॥ १ ॥
तु महंतु त्रिलोक पति जिय, जान गुन परधान ।
यह चेतन हीन पुदगलु, नाहिं न तोहि समान ॥ २ ॥ चे०॥
होय रह्यो असमरथु आप नु, परु कियौ पजवान ।
निज़ सहज सुख छोडि परवश, परयौ है किहि जान ॥३॥चे०॥
रह्यौ मोहि जु मूढ यांमें, कहा आमि गुमान ।
रूपचन्द चित्त चेति परु, अ[illegible] न होइ निदान ॥४॥चे०॥

लेखनकाल–१७ वीं शताब्दी ।

प्रति–गुटकाकार–फुटकर पत्र । साइज–५॥×३।

विशेष–कई पद भक्ति के हैं, कई अध्यात्मिक कई निर्णायक भी हैं ।

[अभय जैन ग्रंथालय]

(३९) पद संग्रह । रचयिता–ज्ञानसार

आदि–

होरी काफी

भाई मति खेलै सूं, माया रंग गुलाल सूं । भा० ।
माया गुलाल गिरन तैं मूंदी आंख अनंते काल सूं ॥ भा० ॥ १ ॥
जल विवेक भर रुचि पिचकारी, छिरकै सुमति सुचालसूं । भा० ।
उघरत ग्यान नयन तैं खेलै, ग्यानसार निज ख्यालसूं ॥ भा० ॥

अन्त–

राग धन्यासी मुलतानी–

प्यारे नाह घर विन योंही जीवन जाय ।
पिय विन या वय पीहर–वासों कहि सखि केम सुहाय ॥ १ ॥ प्या०
हा हा कर सखि पइयां परत हुँ, रुठडौ नाह मनाय ।
घर मिंदद सुंदर तनु भूसन, मात पिता न सुहाय ॥ २ ॥ प्या०
इक इक पलक 'कलप' सौं वीतत, नीसासे जिय जाय ।
ज्ञानसार पिय आंन मिलै घर, तौ सब दुख मिट जाय ॥ ३ ॥ प्या०

इति पदं । इति श्री ज्ञानसार कृत ध्रुपद संपूर्णं । श्रीरस्तु ॥

लेखनकाल–१६ वीं शताब्दी ।

प्रति–गुटकार । पत्र–५१ से७८ । पंक्ति–११ । अक्षर १६ से २० । साइज–५॥ × ४।

विशेष–अन्य कई प्रतियां मिलती हैं ।

[अभय जैन ग्रंथालय]

(४०) पंच इंद्रिय वेलि ।

आदि–

अथ पंचेद्री की वेल लिख्यते ।

दोहरा-

वन तरुवर फल खातु फिर, पय पीवतौ सु छंद ।
पदसण इंद्री प्रेरियौ, बहु दुख सहइ गयंद ॥ १ ॥

चालि- बहु दुख सहै गयंदो, तसु होइ गई मति मंदो ।
कागद कै कुंजर काजै, पडि खाडै• सक्यौ न भाजै ।
सिहि सहीप घणी दुख भूखो कवि कौन कहै तसु दुखो ।
रखवाला व लग्यो जांण्यो, वेसासी दाय धरि आण्यो ।
बंध्यो पगि सकुल धालै, सो कियौं ससकै चालै ।

अन्त-

कवि गेल्हु सुतनु गुण धामु, जगप्रगट ठुकुरसी नामुं ।
कहि वेल सदसगुण गाथा, चित चतुद मनुष्य समुझाया ॥
मन मूरिख संक उपाई, तिहि तणौ चित्तिन सुहाई ।
नहि जंपौ घणुं पसारो, इंह एक वचन है सादौ ।
संबत पनरैसै पंचासै, तेरिस सुद कतिग मासै ।
जिहि मनु इंद्रि वसि कीया, तिहि हरत परत जग जीया ॥

इति पंच इंद्रिय वेलि संमाप्त

प्रति- गुटकाकार साईज ५॥×६॥, पत्रांक १७६ से ७८ ।
पंक्ति १६, । अक्षर २२ ।

[अभय जैन ग्रंथालय]

(४१) पंचगति वेली- हरदव कीर्ति

आदि-

दोहरा-

रिषभ जिनेसर आदि करि, वर्द्धमानजि (न) अत ।
नमस्कार करि सरस्वती, वदणौ वेली मंत ॥ १ ॥

(४२) **पंचमंगल** । रचयिता- रूपचन्द ।

आदि-

प्रणमइ पंच परम गुरु गुरुजन सासनम् ।
सकल सिद्धि दातार तौ विघ्न विनासनम् ॥
सारद अरु गुरु गौतम, सुमति प्रकासनम् ।
मंगल करहु चौ संघ, पाव प्रणासनम् ॥
पापैं प्रणासन गुणहि गुरुवा, दोष अष्टादश रह्यौ ।
धरि ध्यान कर्म विनास केवल, ज्ञान अविचल जिहि लह्यौ ॥
प्रभु पंच कल्याणिक विराजित, सकल सुर नर ध्याहिये ।
त्रिलोकनाथ सुदेव जिनवर, जगत मंगल गाइये ॥

अन्त-

पांमत अष्टो सिद्ध नव निध, मन प्रतीत ज्यूं मानिये ।
भ्रम भाव छूटै सकल मनकै, जिन स्वरूप जे जानिये ॥
पुनि हरैं पातक टलै विघन सु, होइ मंगल नित नये ।
भनै रूपचंद त्रिलोक पति जिन, देव चौ संघे जये ॥

इति पंच मंगल रूपचंद कृत समाप्त ।

लेखन काल — मिति ज्येष्ठ सुदि ८ संवत् १८२४

प्रति — गुटकाकार । पत्र-५० से ६० । पंक्ति-१२ । अक्षर- १४ साइज ५॥ × ६

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(४३) **बारह व्रत टीप (गद्य)** । रचयिता-उद्योत सागर ।

आदि-

सदा सिद्ध भगवान के, चरण नमुं चित लाय ।
श्रुति देवी पुनि समरियै, पूजूं ताके पाय ॥१॥
करूं सुगम भाषा सही, बारह व्रत विस्तार ।
भिन्न भिन्न भेद जुं करी, भव्य जीव उपकार ॥२॥

बुध **उद्योत सागर** गणि, अपनी मति अनुसार ।
विधि श्रावक के व्रत तणी, टीप लिखूं निर्द्धार ॥५॥

अन्त-

इति श्री सम्यक्त मूल बारह व्रत टीप विवरण ऐसी विगत माफक दोष मिटाय के व्रत पाले सो परम पद कल्याण माला माले । ऐ बारह व्रत भली रीति सेती दूषण टाली अवश्य पुण्य प्राणी करै सो मुक्ति लक्ष्मी निरंतर करै ।

इति श्री द्वादश व्रत [टिप्पण] विरचिते सुगम भाषायां पण्डितोत्तम पाठक श्री ज्ञान सागरजी गणि शिष्य श्री उदय सागर गणिना कृता टीप सम्पूर्ण ।

लेखनकाल-१६ वीं शताब्दी

प्रति-पत्र १४० । पंक्ति-१० । अक्षर ४५

[सेठिया जैन ग्रंथालय]

(४४) भक्तामर भाषा । पद्य-४ । रचयिता-आनंद (वर्द्धन)

आदि-

अथ भक्तामर भाषा कवित्त लिख्यते । सवइया इगतीसा ।
प्रणमत भगत अमर वर सिर पुर, अमित मुकुट मनि ज्योति के जगावनां ।
हरत सकल पाप रूप अंधकार दल, करत उद्योत जगि त्रिभुवन पावनां ॥
इसे आदिनाथ जू के चरन कमल जुग, सुवधि प्रणमि करि कछु भावनां ।
भवजल परत तरत जन उधरत, जुगादि आनन्द कर सुंदर सुहावनां ॥१॥

अन्त-

जगि सुवास अमिलान विमल तुम गुन करि गुंफत ।
सुंदर वरन विचित्र कुसुम वहु अति सुंदर मित ॥
धरै कंठ सुजन अहोनिशि यह है वर माल ।
मानतुंग पनि लहै, सुवसि लखमी सुविशाल ॥
आतम हित कारन कियो. **भक्तामर** भाषा रुचिर ।
पढ़त सुनत **आनंद** सौ, पावि सुख संपद सुथिर ॥४१॥

इति भक्तामर भाषा कवित्तानि

लेखनकाल-संवत् १७१०

प्रतिलिपि- [अभय जैन ग्रंथालय]

(४५) भगवती वचनिका (गद्य)

आदि-

अब दोय से इकतालीस गाथा करके भगवती वचनिकान्तर्गत ब्रह्मचर्य नाम महा व्रत का वर्णन करते हैं तिनमैं पांच गाथा करके सामान्य ब्रह्मचर्य कुं उपदेश है।

अन्त-

विषय रूप समुद्र में स्त्री रूप मगरमच्छ बसै है। ऐसे समुद्र कूं स्त्री रूप मच्छ अर पार उतर गये ते धन्य हैं। ऐसे अनुसिष्टि नाम महा अधिकार विषै ब्रह्मचर्य का वर्णन दोयसै इकतालीस गाथा मैं समाप्त किया।

इति ब्रह्मचर्य नामा महा व्रत समाप्त।

लेखन काल- २० वीं शताब्दी।

प्रति-पत्र ८५। पंक्ति-७ से १२। अक्षर-३४ से ४२।

[सेठिया जैन ग्रंथालय]

(४६) भरम विहंडन

आदि-

अथ भरम विहंडन भाषा ग्रंथ लिख्यते।

दोहा-

प्रथम देव परमातमा परम ग्यान रस पूर।
रच्यो ग्रंथ अद्भुत रुचिर, भरम विहंडन भूर॥
सबहि बातै मतनि की, रुचि सों सुनी अछेह।
हिय विचार देखि तबै, उपज्यौ मन संदेह॥
तब हम देशाटन करन, निकसे सहज सुभाय।
देख चमत कृत नर तहां, रहते जहां लुभाय॥ ३॥

(फिर मुनि मिलते हैं और प्रश्न जान कर उत्तर दे संतुष्ट कर देते हैं)

अन्त-

भरम विहंडन ग्रंथ को, समझै मरम अनूप।
वेद पुरान कुरान कों, जान लेत सब रूप॥ १०१॥

इहे ग्यांन की बात है, दुरी अपार अगाध ।
मैं जुइहां परगट करी, सो छमियो अपराध ॥ १०२ ॥

प्रति- पत्र ४, पंक्ति १४, अक्षर ४८ ।

[वृहत् ज्ञान भंडार]

(४७) भावना विलास । पद्य-५२ । रचयिता-लक्ष्मीवल्लभ । रचना-काल-संवत् १७२७, पोष दशमी ।

आदि-

प्रणमी चरण युग पास जिनराज जू के, विघ्न के चूरण हैं पूरण है आस के ।
दृढ दिल मांझि ध्यान धरि श्रुत देवता को, सेवत संपूरन हो मनोरथ दास के ।
ज्ञान दृग दाता गुरु वडौ उपगारी मेरे, दिनकर जैसे दीये ज्ञान प्रकास के ।
इनके प्रसाद कविराज सदा सुख काज, सवीये वनातंति भावना विलास के ॥ १ ॥

अन्त-

द्वीप युगल मुनि शशि वरसि, जा दिन जन्मे पास ।
ता दिन कीनी राज कवि, यह भावना विलास ॥ ५१ ॥
यह नीकै कै जानियै, पढ़िये भाषा शुद्ध ।
सुख संतोष अति संपजै, बुद्धि न होइ विरूद्ध ॥ ५२ ॥

इति श्री उपाध्याय लक्ष्मीवल्लभ गणि कृत भावना विलास संपूर्ण ।
लेखनकाल- संवत् १७४१ आसोज १४ लिखितं हर्ष समुद्र मुनि नापासर मध्ये ॥ श्री स्तु ॥

प्रति- पत्र ७ से १०, पं० १७ से १८ । अक्षर- ५७ साइज १० x ४।

विशेष- जैन धर्म की वैराग्योत्पादक अनित्य, अशरणादि १२ प्रकार की भावनाओं का इसमें सुन्दर वर्णन है ।

[अभय जैन ग्रंथालय]

(४८) भाषा कल्प सूत्र । रचयिता- रायचन्द । रचना काल- सम्वत्-१८३८, चैत सुदी ६ मंगलवार, बनारस ।

आदि-

अथ श्री भाषा कल्प सूत्र लिख्यते ।

चौ०– जै जै जैन धर्म हितकारी, संघ चतुर्विध जिहि अधिकारी ॥१॥
साध्वी साधु श्राविका श्रावक, यहि चतुर्विध संघ प्रभावकारी ॥२॥
नराकार सौधर्म बखाना, जाके तेरह अंग प्रधाना ॥३॥
वदन पंच प्राण रु द्वै हाथा, बुधि चित आतम द्वै पद साथा ॥४॥

राजत्रय जासौं कहै, ज्ञान दरस चरित्र ॥१॥
धर्म भूप नर रूप कौ, कहिये वदत पवित्र ॥२॥

× × ×

इन आठौं दिन में जति, जिन जन सनमुख होय।
कल्प सूत्र को अर्थ सब, वरनी वखाने सोय ॥ १५ ॥

अन्त–

कल्प सूत्र को मूल यह, प्राकृत बानी माह।
लोक संस्कृत तहि पढ़ि क्यौं हूँ समभै नांह ॥
तैसी टीका संस्कृत, भई न समभन जोग।
अरु अनेक ता पर करे, टब्बा जिन जिन लोग।
एक देस की भाष सो, गुरजर देसी जान।
आन देस के जन तिन्हें, समभि न सकै निदान।
यातै यह भाषा करी, जिहि सब देसी लोग।
सुख सौं सब समभैं, पढ़ैं, वड़ै पुन्य सुख भोग।
ऐसी मति उर आनि श्री,जिन जन कुल परसंस।
गोन **गोखरू** जैन मत, **ओस वंस** अवतंस।
समाचंद नर राय कै, अमर चंद वर राय।
तिनके सुत कुलचंद नृप, डालचंद सुखदाय ॥

× × × ×

तिन जिन जन सुख हेत, अरु धर्म उद्योत विचार ॥
कह्यौ **रायचन्द** हि चतुर, उपकारी मतिधार ॥
कल्प सूत्र करि कल्प तरु, भाषा टीका हेत ॥
सो अनुसरि जिन यश वचन, सिर धर लेइ सहेत ॥

× × × ×

संवत् ठारह सै वरस, सरस और अड़तीस।
विक्रम नृप वीतैं भई, टीका प्रकट बुधीस ॥

चैत चांदनै पाख की, सुभ नौमी अभिराम ।
पुष्य नक्षत्र धृत जोग वर, मंगलवार ललाम ॥
जन्म सुपारस परस थल, पुरी बनारस नाम ।
जन्म भूमि या ग्रंथ की, भई छई सुख धाम ॥

× × × ×

विशेष-ग्रन्थ का परिणाम २५०० श्लोक के लगभग है
प्रति-गुटकाकार ।

[खरतर आचार्य शाखा भंडार]

(४६) भोजन विधि । पद्य-५१ । रचयिता-रघुपति ।

आदि-

स्वस्ति श्री ऋद्धि वृद्धि सिद्धि आनंद जय मंगल उदय हेतु जन्म जाको भयो है ।
उछव अनेक ताके कुंडपुर नगर मांहि कराये सिद्धार्थ भूप पार किन लह्यो है ॥
दान मान नित्य-प्रति करत ही अेकादश दिवस व्यतीत हुवे मोद परनयो है ।
बारमें जु दिन मांहि पुत्र जन्म नाम धरबै कुं भोजन विधान राजा सिद्धार्थ पुछ्यौ है ॥

असन पान खादिय तथा, स्वादिम च्यार प्रकार ।
यथा योग्य संस्कार युत, भोजन होत तैयार ॥ १ ॥

× × × ×

अंत-

हाथ जोर रघुपति करी, वीनती वार हजार ।
मो गरीब कूं स्वामि जी, भव सागर सैं तार ॥ ५१ ॥

इत्यलं । भोजन विधि ॥
लेखन काल-संवत् १६२० सरसा मध्ये ॥
प्रति परिचय-पत्र-३ । पंक्ति-१५ । अक्षर-४० । साइज-१०×४॥.
विशेष-भगवान महावीर के दसोठण (नाम स्थापन संस्कार) के समय भोजन की तैयारी की गई उसका वर्णन कविने किया है ।

(५०) मदन युद्ध—रचयिता-धर्मदास ।

आदि-

मुनिवर मकरध्वज, दहून मांडी दारि ।
रति कंत वली यत, उतहिं निवल ब्रह्मचारि ॥
दोऊ सूर सुभट दल, साजि चढ़े संग्राम ।
तप तेज सहस यत, उतहि महाभड़ काम ॥ मु०॥१॥
प्रथम जपूं परमेष्टि, पंच पचमि गति पावूं ।
चतुर बंस जिन नाम, चित धरि चरण मनाऊं ॥
सारद गनि मनि गुण, गभीर गवरि सुत मंचो ।
सिद्धि सुमति दातार, वचन अमृत गुन बचों ॥
गुरु गावत मुनि जन सकल, जिनको होइ सहाइ ।
मदन जुझ धर्मदास को, वरणतु महि पसाइ ॥ मु०॥२॥

अंत-

पहिरइ सील सन्नाह, लुंच अति छत्र जदीए ।
सीस परन धु धीव, खिमा करि षडग लीयइ ॥
दसन जन वदन्न धजा, कोउ रथ उपरि सि सज्जे ।
सत सुमते स्वारथ सुहड़, संजम गल गज्जे ॥
चेतन हुइ रथ छ .... निसाण ।
हाकि चलेउ वरत उवनि, गए मदन अवसान ॥ ३२ ॥

इति मदन जुझ समाप्त ।
प्रति-पत्र ४ । पं० १३ । अ० ३७.

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(५१) विवेक विलास दोहरा । पद्य- ११७ ।

आदि-

नमुं सरवदा सीस नै, जिनवर रिषभ जिनंद ।
जीव अजीव दिखाइयो, नमैं इंद अरु चंद ॥ १ ॥

चौपई-

प्रथम देव गुरु धर्म पिछानै । ता परतीत मिथ्या तन मानै ।
कु गुर कु देव कुधर्म निवारै । सुगुर वचन नित चित संभारै ॥ २ ॥

× × × ×

अंत-

कुगुर तना औगन अनंत, कहतां कोई न जानै अन्त ।
सुगुर तनी संगति डारसी, आप तरै और न तारसी ॥ ११६ ॥

दूहा-

अठार दूषन रहत, देव सुगुर निरग्रन्थ ।
धरम दया पूर अपर, मति अविरोध गरंथ ॥ ११७ ॥

इति श्री विवेक विलास संपूर्ण ।

लेखनकाल- श्री कासमा बाजार मध्ये लिखित आचार्य श्री कीर्त्ति: पंडे, वेलचंद पंडे लक्ष्मीचंद पटनार्थं संवत् १७६५ वर्षे ज्येष्ठ सुदी १ श्चौ श्री स्तु ॥

प्रति- गुटकाकार- पत्र-५८ से ७६ । पंक्ति- १३ । अक्षर- १३, साइज-४ × ६

[अभय जैन ग्रंथालय ।]

(५२) विंशति स्थानक तपविधि-(गद्य) ज्ञानसागर रा० सं० १८२६ मि०व० १०, मकसुदा वाद ।

आदि-

श्रीमर्हंतमानम्य गुरुं च ज्ञानसागरम् ।
विंशते स्थानकस्याहं लिखामि विधिविस्तरम् ॥

"अथ बीस स्थानक तपका विधि विस्तार मेती लिख्यते, तिहां प्रथम शुभ निर्दोषमुहूर्त दिवसे नंदीस्थापना पूर्वक सुविहित गुरु के समीप विंसति स्थानक तप विधि पूर्वक उच्चरै । एक ओली दो मासें जावत् छः मासें पूरी करें कदाचित् छ मासमध्ये पूरी न कर सकें तो वे ओली जाय फेर करणी पड़ै ।

× × × ×

अंत-

इनसै कोई अज्ञान मूढता दोष सेती कोई न्यूनाधिक विरुद्ध लिख्या गया होइ, उसका श्री संघ साखिमिच्छामि दुक्कडं हो, अरु गुणी जन नें छमा कर कै शुद्ध करंगाजी ॥ "

दूहा-

संवत् अठारहसैं अधिक, वीते एगुणतीस ।
मृगसिर वदि दशमी दिनैं, पूरण भई जगीस ॥ १ ॥
तप गच्छपति महिमा निलौ, नागर वन्दित पत्र्य ।
श्रीपून्य सागर सूरिवर, नमो सुयश सदाय ॥ २ ॥
तस आणा सिर धारतां, करता विषय कषाय ।
कृपावंत आगम रुचि, श्रीज्ञानसागर उवझाय ॥ ३ ॥
तास सीस पूरव तणा, भेटत तीर्थ अनेक ।
रह्या मछुदावाद मैं, चऊमासा सुविवेक ॥ ४ ॥
ओसवंसे भद्रक प्रकृति, साह रूपचन्द सुजांन ।
रतनचंद तस सुत सुगुण, धर्म रुचि सुमवांन ॥ ५ ॥
शास्त्र सुणत तप रुची भई, वीसठाण गुणगेह ।
कहें विधि हमकूं लिखदीओ, तब श्रम कीन्हों एह ॥ ६ ॥
विधिपूर्वक जो तप करै, भावै भावनसार ।
तीर्थंकर हुई तेल है, शाश्वत सुख श्रीकार ॥ ७ ॥

मिति सं० १८७१ कार्तिक सुदी ३ अजीमगंज नगरे—
प्रति-पत्र ३४, पं० १२ से १७, अ० ३६ से ४२,
साइज-१०॥ × ५

[मोतीचंद जी खजानची संग्रह]

(५३) संयम तरंग । पद-३७ आध्यात्मिक । रचयिता-ज्ञानानन्द ।

अंतिम पद-

राग झिझोटी

रहो बंगले में, बालम करूं तोहे राजी रे । र०॥ टेक ॥
निज परिणति का अनुपम बंगला, संयम कोट सुगाजी रे । र०

चरण करण सप्तति कंगुरा, अनंत विरजथंभ साजी रे । र० ॥ १ ॥
सात भूमि पर निरभय खेलें, निर्वेद परम पद लाई रे । ए० ।
विविध तत्त्व विचार सूखड़ी, ज्ञान दरस सुरभि भाई रे । र० ॥ २ ॥
अहनिशि रवि शशि करत विकासा, सलिल अमीरस धाई रे । र० ।
विविध तूर धुनि सांभल वालम, सादवाद अवगाई रे । र० ॥ ३ ॥
ध्येय ध्यान लय चढ़ी है खुमारी, उतरै कबहु न रामी रे । र० ।
सुन निधि संयम घरनी वाचा, ज्ञानानन्द सुख धामीरे । र० ॥ ४ ॥

[प्रतिलिपि–अभय जैन ग्रन्थालय]

(५४) समय सार-बालबोध–रचयिता-रूपचन्द सं० १७६२ ।

आदि–

अथ श्री नाटक समयसार भाषाबद्धों लिख्यते ।

दोधक–

श्रीजिनवचन समुद्र कौ, कौ लग होइ बखान ।
रूपचन्द तौहू लिखै, अपनैं मति अनुमान ॥

अथ श्री पार्श्वनाथजी की स्तुति, झंझटा की चालि–
सवैया ३१–

"मूल सवैया की टीका–अब ग्रन्थ के आदि मंगलाचरन रूप श्री पार्श्वनाथस्वामीजी की स्तुति आगरा कौ वासी श्रीमाली वंशी विहोलिया गोत्री बनारसीदास करतु है श्री पार्श्वनाथस्वामी कैसे हैं-करमन भरम-करम सो आठों ही करम, भरम सो मिथ्यात सोई जगत में तिमिर कहतां अंधकार ताके हरन कौ खग कहतें सूर्य है । अरु जाके पगमें उरग लखन कहतें सर्प को लंछन है अरु मोक्ष-मार्ग के दिखावन हार है, अरु जाको नयन करि निरखतें भविक कहतां कल्यानरूपी जल है सो वरषै, ताते अमित कहतां परिमान बिना अधिक जन सरसी कहतां भव्यलोक सरोवर है सो हरषत हैं, जिन कहतैं जिहि कारन मदन वदन कहतां कंदर्प के वमा कारक हैं, अरु जाको उत्कृष्ट सहज सुखरूपी सीत है, सो मगत कहत भाग जाइ है ।"

अंत

पृथ्वीपति विक्रम के, राज मरजाद लीन्हें,
सहसैं वीतै परिवातु आव रस मैं ।

आसू मास आदि द्यौंसु, संपूरन ग्रन्थ कीन्हौ,
वारतिक करिक, उदार वार ससि मैं।
जोपै सहु भाषा ग्रन्थ. सबद सुबोध याकौ,
तौ हू विनु संप्रदाय नावै तत्व वस मैं।
यातैं ज्ञान लाभ जांनि, संतनि कौ वैन मानि,
वात रूप ग्रन्थ लिख्यौ, महा शान्त रस मैं ॥ १ ॥

खरतर गछनाथ विद्यामान भट्टारक जिन भक्ति सूरिजू,
के धरम राज धुर में।
खेम साख मांझि **जिन हर्ष** जू बैरागी कवि,
शिष्य सुख वर्द्धन शिरोमनि सुघर मैं।
ताकौ शिष्य दयासिंध जानि गुणवंत मेरे,
धरम आचारिज विख्यात श्रुतधर मैं।
ताकौ परसाद पाइ **रूप चंद** आनंद सौं,
पुस्तक बनायो यहु **सोनगिरी** पुर मैं।

मोदी थापि महाराज जाकौं सनमान दीन्हौं,
फतैचंद पृथ्वीराज पुत्र **नथमल** के।
फतेचंद जू के पुत्र **जसरूप** जगन्नाथ, गोतम गनधर मैं,
धरैं या शुभ चाल कौ तामैं **जगन्नाथ** जू कै।
बूझिवै के हेतु हम, व्यौरि के सुगम कीन्हें, वचन दयाल के,
वाछत पढत अब आनंद सदा एक सैं।
संगि **ताराचंद** अरू **रूपचंद** बालके ॥ ३ ॥

देशी भाषाको कहौं, अरथ विपर्यय कीन।
ताकौ मिछा दु कडूं, सिद्ध साख हम दीन ॥ ४ ॥

लेखन पुस्तिका—

नंद वन्हि नागेन्दु वत्सरे विक्रमस्य च। पौषसितेतर पंचमी तिथौ धरणीसुत्तवासरे ॥ श्रीशुद्धिदंतीपत्तने श्रीमति विजयसिंहाख्य सुराज्ये । बृहत्खर तरगछे निखिलशास्त्रौघ पारगमिनो महीयांसः श्रीक्षेमकीर्तिशाखोद्भवाः पाठ

कोत्तम पाठकाः। श्रीमद्रूपचंद जिद्गण्ःस्तच्छिष्य पं० विद्याशीलमुनिस्तच्छिष्यो गजसारमुनिस्समयसारनाटक ग्रन्थमलिखत्। श्रीमदगवडीपुराधीशप्रसादाद्भावकं भूयात्पाठकानाम् श्रोतृणां छात्राणां शश्वत्। श्रीरस्तु।

प्रति परिचय-सुन्दर अक्षर। पत्र १४३, पं० १५, अक्षर ५०।

[सहित्यालंकार मुनि कांतिसागरजी संग्रह]
अन्यप्रति- बीकानेर ज्ञान भंडारों में

—०:*:०—

बारह मासी साहित्य

(१) नेमिनाथ राजिपती बारह मासी । पद्य १३, विनयचन्द ।

आदि–

आवु हो इस रीति हित सै यदु कुल चन्द । थउ मोहि परमानन्द ॥ आ० ॥
रस रीति राजुल वदत प्रमुदित, सुनौ यादव राय ।
छोरि कै प्रीति परतीति प्रिय तुम, क्यों चले रिसाय ।
चिहुँ ओर घोर घटा ... ... त मैन ।
धरि अधिक गाढ आषाढ़ उमट्यौ, घट्यौ चित्त से चैन ॥ १ ॥

अन्त–

इस भांति मन की खांति, बारह मास विरह विलास ।
करके प्रिया प्रिय पास चारित, ग्रह्यौ आनि उल्हास ।
दोउ मिले सुन्दर सुगति मंदिर, भइ जहाँ मति नन्द ।
मृदु वचन ताकौ रचन भाखत, विनय चन्द्र कवीन्द्र ॥ १३ ॥

इति श्री नेमिनाथ राजमत्यौ द्वादस मासः ।

प्रति :— गुटकाकार ।

स्थान :– [अभय जैन ग्रन्थालय]

(२) नेमि बारह मासा । पद्य १३ । रचयिता–जसराज (जिनहर्ष)

आदि–

सावन मास घना घन बास, आवास में केलि करे नर नारी ।
दादुर मोर पपीहा रटे, कहो कैसे कटे निशि घोर अंधारी ॥

बीज झिलामल होई रही, कैसे जात सही समसेर समारी ।
आइ मिल्यो जसराज कहें, नेम राजुल कुं रति लागें दुखारी ॥ १ ॥

अन्त-

राजुल राजकुमारी विचारि के संयम नाथ के हाथ गह्यो है ।
पंच समिति तीन गुपति धरी निज, चित में कर्म समूह दह्यो है ॥
राग द्वेष मोह माया नहें, उज्जवल केवल ज्ञान लह्यो है ।
दम्पति जाइ वसें शिव गेह में, नेह खरो जसराज कह्यो है ॥ १३ ॥

इति श्री नेमि राजिमती बारमासा समाप्त ।

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(३) नेमि बारह मासा । सवैया-११ । रचयिता-जिन हर्ष ।

आदि-

घन की घनघोर घटा उनही, विजुरी चमकंत झलाहलि सी ।
विचि गाज अगाज अवाज करंत सु, लागत मों विष वेलि जिसी ।
पपीया पीऊ पीउ रटत रयण जु, दादुर मोर वदै उलिसी ।
असे श्रावण में यदु नेमि मिले, सुख होत कहै जसराज रिसी ॥ १ ॥

अन्त-

प्रगटे नभ बद्दर आदर होत, घना घन आगम आली भया है ।
काम की वेदन मोहि सतावै, आषाढ़ में नेमि वियोग दयो है ।
राजुल संयम ले के सुगति, गई निज कंत मनाय लयो है ।
जोरि के हाथ कहै जसराज, नेमीसर साहिब सिद्ध जयो है ॥ १२ ॥

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(४) नेमि राजुल बारह मासा । पद-१४ । रचयिता-लक्ष्मीवल्लभ ।

राजीमती बारहमासियौ राज कृत सवैया लिख्यते ।

आदि-

उमटी विकट घनघोर घटा चिहुँ ओरनि मोरनि सोर मचायो ।
चमकै दिवि दामिनि यामनि कुं भय भामिनि कुं पिउ को संग भायो ।

लिव चातक पीउ हीं पीड़ लई, भई राज हरी भुंइ देह छिपायो ।
पतियाँ पै न पांई री प्रीतम की अली, श्रावण आयो पे नेम न आयो ॥ १ ॥

अन्त-

ज्ञान के सिंधु अगाधि महा कवि मैसर छीलर नीर निवासो ।
हैं ज महा कवि तो दिन राज से, मेरो निसाकर कौ सौ उजासो ।
तातैं करूं बुध सुं यह वीनंति, मेरो कहुँ करियौ जनि हांसो ।
आपनी बुध सूं राज कहै यह, राजल नेमि को बारह मासो ॥ १४ ॥

इति सवैया बारै मासैरा समाप्तं ॥

प्रति-पत्र-१ पंक्ति-१५ । अक्षर-४२ ।

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(५) **नेमनाथ बारह मास** । पद्य-१५ । रचयिता जिनसमुद्र सूरि ।

आदि-

श्री यदु पति तोरण आया, पशु देख दया मन लख्या ।
प्रभु श्री गिरनार सिधाया, राजल रांणी न विदाया हो लाल ॥ १ ॥
लाल लाल इम करती, नयणे नीझरणा झरती ।
प्यारी प्यारी हो नेमि तुहारी, भव भव की केम वीसारी हो ॥ २ ॥

अन्त-

सखी री नेमि राजुल गिरवरि मिलीया, दुख दोहग दूरे टलिया ।
जिणचन्द परमसुख मिलीया, श्रीजिनसमुद्र सूरि मनोरथ फलिया ॥ १५ ॥

इति श्री नेमनाथ बारहमासी गीत ।

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(६) **नेमिराजिमती बारह मासा** । पद्य १६ । रचयिता-धर्मसी ।

आदि-

सखीरी रितु आई अब सावन की, घुररंत घटा बहू छन की ।
वानी सुणी पपीयन की, निशा जाये क्युं विरहन की ॥ १ ॥

इकतारी नेम से करती, धन सीयल रतन ने धरती ।
तिम विरह करी तनुतपती राजुल वालंभ ने जपती ॥ २ ॥

अन्त-

सखी मन धारो बारह मासा, आणौं वैराग उलासा ।
गुरु विजय हरख जसवासा, वधते धर्मसील विलासा ॥ १६ ॥

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(७) नेमि राजिमती बारहमासा पद्य १३ । रचयिता- केसवदास । सं १७३४

आदि-

घनघोर घटा उमरी विकटी, भृकुटी दृग देखत ही सुख पायो ।
बिजुरी चमकंत सुकंत सही, फुनि भू रमणी उर हार बनायो ॥
मर भोर भिंगोर करै वन में, धन में रति चोर को तेज सवायो ।
सुख मास भयो भर जोवन श्रावण, राजुल के मन नेम सुहायो ॥ १ ॥

अंत-

गुरु के सुपसाउ लही शुभ भाव, वनाय कह्यो इह बारह मासा ।
उग्रसेन सुता नमि जो गुण गावत, वंछित सीझत ही सब आसा ॥
सुध मास सदावण को शनिवासर, सम्वत् सतर चौतीस उबासा ।
श्री लावण्यरत्न सदा सुप्रसाद ही, केशवदास कहि सु-विलासा ॥ १३ ॥

इति श्री नेम राजुल के बारह मासा समाप्तं ।

ले० :- बीकानेर मध्ये ।

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(८) नेमि बारह मास । पद्य १३ । रचयिता-लब्धिवर्द्धन ।

आदि-

अकटा विकटा निकटा निरजें गरजें घनघोर घटा घन की ।
सजूरी पजूरी वीजरी चमकै, अंधियार निसा अती सावनकी ।
पीउ पीउ कहै पपीहा जुदहइ, कोइ पीर लहें पर के मन की ।
ऐसो नेम पीया ही मीलाय दियै, वलिजाउं सखी जगि वा जनकी ।

अन्त-

एम द्वादश मास सहि गृहवास, गई प्रियू पास विराग सुं आंणी ।
विषया रस छोरी दोहु करि जोरि, सिव सुख काज सुणी जिन वांणी ।
लहि संजम भार तजी कुविचार, सती सिणगार राजिमती रांणी ।
लबधि बर्द्धन धन धन्न नेमीसर, सामी नमो निते सवि प्रांणी ॥ १३ ॥

इति द्वादश मास नेमी राजिमती समाप्त ।

[अभय जैन ग्रंथालय]

(९) नेमिबारहमासा । पद्य-१६ ।

आदि-

सुणजे री वात सहेली जदुराय बिन खरीय दुहेली ।
मेरो पीउ है कामनगारो, चित ले गयो चोर हमारो ॥ १ ॥
दीया दोष पसुन को झूठा, वालम तो मोसुं रूठा ।
रूठो पीउ मनावे कोई, सखी मित्र हमारो सोई ॥ सु० ॥ २ ॥

अन्त-

जदुपति उग्रसेन की कुंअरी, परणी व्रत चारित्र धरणी ।
नव भव की प्रीत विसारी, जाय मुक्ति पुरी में सारी ॥ सु० ॥ १६ ॥

[अभय जैन ग्रंथालय]

(१०) नेमि राजिमती बारह मासा । पद्य २६ । विनोदीलाल ।

आदि-

विनवै उग्रसेन की लाड लड़ी, कर जोरी के नेम के आगे खरी ।
तुम काहे पिया गिरनार चले, हम सेती कहो कहा चूक परी ॥
यह बेर नहीं पीय संयम की, तुम काहे कौ ऐसी चित्त धरी ।
कैसे बारह मास बितावेंगे, समझावो पिया हम ही सगरी ॥

अन्त-

बारह मास जु पूरे भए, तबै नेमिहि राजुल जाय सुनाए ।
नेम ह द्वादश भाव नसु अनु प्रछते राजुल कूं समुझाए ॥
राजुल ही तब संयम लैं तपु के सुभ भावसु कर्म जटाए ।
नेम जिनन्द अरु राजमति प्रति - उतर लाग विनोदी ने गाए ॥ २६ ॥

इति नेमनाथ राजीमती बारहमासो सम्पूर्णम् ।

प्रति-रेखता बारहमासा सम्मलित, पत्र ६, पं. १३, अ. ४०

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(११) बारहमासा । पद्य-१३ । रचयिता-वृन्द ।

अथ स्तवन लिख्यते । वसन्त राग ।

आदि-

मास वसंत मधुर महि सुन्दर, लाग रह्यौ रित सुखवानी । मा
नीली धरा तरू एकड़हकत फूलत पूर महक सुहानी ।
प्रभुी मनोहर केसर घोर कै, कंचन मुरत पूज रचानी ।
चैत्र के मास में आदि जिनेसर, पूज रचै कवि वृन्द सहानी ॥ १ ॥

× × ×

अन्त-

इम द्वादश मास मैं आदरता सु ए, नेह श्रृंगार धर्यो मन ही ।
नित देव निरंजन ध्यान धरैं, धन ते नर मानत अन्दर ही ।
सहु सुख मिलै जिन ध्यावन में, नित पावत सुर्ग निवावरही ।
कवि वृन्द कहै जिन चोविस कुं, सब आन परागन धावन ही ॥ १५ ॥

इति बारैमासा सवैया संपूर्ण ।

लेखन काल-१६ वीं शताब्दी ।

प्रति-गुटकाकार । पत्र ३ । पंक्ति-१० । अक्षर-१८ । साइज-६।।।×४।।

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(१२) बारहमासा । रचयिता-केशव ।

आदि-

सुख ही सुख जह राखियैं, सिख ही सिख सुख दानि ।
सिक्षा छेपु कह्यौ वरनि, छपद बारह बानि ॥ १ ॥

अन्त-

लोक लाज तजि राज रंक, निरसंक विराजत ।
जोई आवत सोई करत कहत, पुनि सहन न लाजत ।

घर घर जुवती जुवनि मोर, गहि गाढ़ि निचौरैहि ।
वसन छीनि मुखु माजि आंजि, लोचन तितु तोरहि ।
पटवासु सुवासु अकास उड़ि, भुव मंडलु सबु मंडियै ।
कहि केसवदास विलास निधि, सु फागुन फागुन छंडियै ॥१३॥

इति बारहमासा वर्णन संपूर्णं । शुभं भवतु ।

लेखन काल-संवत् १७५० वर्षे मिति श्रावण वदि १४ दिने बीकानेर मध्ये ।

प्रति-गुटका । पत्र- ४॥ । पंक्ति-७ । अक्षर ३४ ।

[वृहद् ज्ञान भण्डार]

(१३) बारह मासो । दोहा-१२ । सवैया-१२ । रचयिता- बद्री कवि ।

आदि-

चैत मास प्यारे चतुर, आदि वरस को मास ।
गोन करति परदेस प्रिय, तातें रहत उदास ॥ १ ॥

अन्त-

गावति राग वसन्त बजावति, आवति ही वनिता गुन मैं ।
कहूं आन कह्यौ सखी प्यारे को,आगम होंतो छकी अनुरागुन मैं ॥
जब आन परी तिय मो तन हेर, लगी मुसकान सुधा गुन मैं ।
तब लूट लयौ सुख बारै ही मासके, लाल मिले पिया फागुन मैं ॥ १२ ॥

प्रति- गुटकाकार । पत्र-४ । पंक्ति-७ । अक्षर-३४ ।

[व्रहत् ज्ञान भण्डार]

(१४) बारहमासौ । रचयिता-मान

अथ बारह मासौ लिख्यते—

आदि-

दोहरो

अगहन मान समान दुति, जारत सकल सरीर ।
चलन कहत परदेस पिय, छिन छिन वाढतपीर ॥ १ ॥

सोरठो

गवन कियौ नंदलाल, गोकुल तजि मथुरा गए ।
राधे उर दे साल, काल भई व्रज बाल सब ॥ २ ॥

अन्त-

घोंसु दिवारी हरि मिले, भारी भेष बनाइ ।
परी सुख मोकौं दयौ, सारी पीर गंवाइ ॥ ३७ ॥

इति श्री कवि मान कृत बारहमासौ संपूर्ण

प्रति—गुटकाकार नं० ७६ । पत्र ४७ से ५० । पंक्ति-१६ अक्षर-२२ साईज ६॥ × ५॥।

विशेष—इस प्रति में सुंदर शृंगार, विहारी सतसई टीकादि भी है।

[अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(१५) बारह मासा ।

आदि-

रख्यौ मास द्वादस पिया, पिय अपनो निज देश ।
नयौ नयौ बरनन कियौ, दीयो न चलत विदेश ॥ १ ॥

अन्त-

ऊरत गुलाल अति उड़त अबीर मय, छित सौं लगाइ रहत अकास यौ ।
छूत है जल पिचकारनि तैं चिहुं ओर जानु घनघोर बरषत ज्यूं ॥
फागुण मैं ऐसे पिय फागु राग गाईयत, रूप कहे रसही मैं रस वस होइ त्यूं ।
भोरी जान मो भरमावत हो जोरी वातैं होरी आये अहो पिय क्यों करि चलयो ॥ १२ ॥

इति बारह मासा सम्पूर्णं ।

लेखन काल- सवत् १७५० वर्षे श्रावण वदि १३ दिने बीकानेर मध्ये मथने पेमू लिखतं तत्पुत्र मैहपाल तत्पुत्र अखेराज ।

[वृहत् ज्ञान भण्डार]

(१६) बारहमासी । बालदास

अथ बारैमासी लिख्यते—

आदि-

मोहना वंसी वाजे कृष्ण, तेरी अवाज सुण करसैं दौड़ी ।
रमझम रमझम मेहा वरसै, तट जमना पर लगी झड़ी ॥ १ ॥

अन्त-

जेठ मास में तपै देवता, पंचागन तपस्या कीनी ।
सांवरी सूरत मोहे दरसन दीनो, बालदास उर कठ कीनी ।

इति बारै मासी संपूर्ण

प्रति— १ आधुनिक प्रति । पद्य १२ ।

[अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(१७) **बारामासी** । पद्-१२२ । रचयिता-हामद् काजी ।

अथ हामद् काजी कृत बारहमांसो लिख्यते ।

आदि –

दूहा–

आप निरंजन आदि कल, रच्यौ प्रेम मंडाण ।
रूप मुहमद देह धर, खेल्यौ खेल निदान ॥ १ ॥
एक अकेले अंग थें, स्वाद लग्यौ नह नेह ।
विरह जोती जगमगित, बपकरिय यह देह ॥ २ ॥

× × × ×

विछरण द्वादस मास को, मो तन पयो पहार ।
ज्यों ज्यों जरी विजोग तें, त्यों त्यों करी पुकार ॥ ५ ॥

अन्त–

आज भलै उद्योन भयौ, दिन नागर नाह विदेस से आयो ।
हूं मग जोय थकी बहु चाहत, भागबड़े घर बैठे हि पायो ।
नैन सिराय हियो भयो सीतल, कोट कचावन मंगल गायो ।
हामद सुहाग सेज बनाय के, आणंद सुं हसी रंग बनायो ॥ १२२ ॥

इति काजी हामद् कृत बारहमासो संपूर्ण ।

लेखन काल– संवत् १८२८ वर्षे भादवा सुदि ६ सनौ लिखितम् हरी धीर मनिहि

प्रति– गुटका कार । पत्र–५ । पंक्ति–२० । अक्षर ३८ । साइज ६ × ५॥

[अभय जैन ग्रंथालय]

(१८) **बारहमासा** । पद्य ८३ । रचयिता– **साहि महंमद फुरमती**

अथ बारहमासा साहि महंमद फुरमती का लिख्यते ।

आदि-

दोहा-

साहि महंमद फुरमति, ताकित बारहमास ।
विरही तन मन रंजना, भोगी चित हुलास ॥ १ ॥

सोरठा-

अहद हुतो तबसुन, मीम परत मूरत भई ।
देखें गहु घटका पुन, प्रभु प्रगटे नर रूप होई ॥ २ ॥

अन्त-

कवित्त-

सुगन सकल बहु हुतें नेन कुच भुजा फरकहिं ।
फरकति अंचल दरस दरस पिय कमन तरकही ।
श्रवन रसन चख प्रांन परस रख भुज सुखलीनौ ।
अब नब जब विध रचत संइछत मोहि दीनौ ।
मांनवी मदन **महमुद** मुदति मिले मनोहर विविध मति ।
नौरस विलस तरुनी मनुहर वंन साहि चंपा जु पति ॥

दोहा-

बारहमास जु मैं कहै, ज्यों अभरन बिन हार ।
जुरते अछर चित धरहु, टूटत लेह संवार ॥ ८३ ॥

इति श्री साहि **महमद** कौ बारहमासा संपूर्ण । शुभं भवतुः ॥
ले. संवत् १७५० वर्षे चैत्र सुदि ८ अष्टम्यां तिथु छेनीसुर वारे श्री बीकानेर मध्ये मथेन पेमू लिखत तत्पुत्र मैहपालः तत्पुत्र ।

[अभय जैन ग्रंथालय]

(१९) **बारहमासा**—श्री मीना सतमी आसाधन की ।

आदि-

परथम वेनमूं नया मंडारू । अलख एक सो सेरजन हारु ।
आस तोरी मो बहोत गोसाइ, डरेहूँ काहू कर रगे नाही ।

अन्त-

सतमिना कहि साधन थिर राजे अब केरतार ।
कूट न भार न सारी कहस तीन के परकार ॥

प्रति—पं० ११३, पंक्ति १५, अक्षर ११,

[अनूप संस्कृत लाइब्रेरी]

(२०) षड्ऋतुवर्णन-

अथ ग्रीषम वर्णन

दसौं दिसंत चह अवालौ अति ग्रीषम में जल थल विकल अवनि सब थहरी ।
अमृत के पुंज दोऊ औचकां मिले है कुंज द्रुमके वेलीनिकी तकि छवि छांह गहरी ।
राधा हरि भूलि पल रूप छके सखी सुख, रहके बढी अनुराग लहरी ।
चंद्रमा सौ लग्यो भांत चांदिसी सी लगि धूप सरद की राति भई जेठ की दुपहरी ॥ १ ॥

ग्रीष्मवर्णन पद्य ३१, वर्षा ६७, सरद के २५, हिमके १० + १० + १०–६५, संवत् ३३.

अन्त-

फूलनि के बंगला झरोखा अटारी जारी फूल की सिवारी छबि माही रंग रंग है ।
फूलनि भूषण वसन तन फूलनि के फूलि रहे सांवन गवर अंग अंग हैं ।
कुंजनि में नैन फूले नैननि में कुंज फूले सुखी सुख दिपी दुति महल अनंग है ।
विहारी विहारनि विहरै दिठि दरपननिरूप काय व्यू ह है भूलके दोउ संग है ॥

इति वसंत संपूर्ण ।

संवत् १७ ८६ वर्षे मिति फागण सुदि ४ बुधवार वि. अंत में कुबिजापचीसी मलूकचंद कृत है ६६ × २६.

प्रति- पत्र ८१, पं० ११, अ० १६, साइज ६॥ × ५॥

[अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

ग० कृष्ण काव्य

वसंत लतिका ।

आदि-

पहले के १६ पन्ने नहीं हैं ।

मध्य-

चौंकि चले निज ठौर में, पंचम जुगल किसोर ।
को जानै निसि शेष में, को ससि कौन चकोर ॥ ६४ ॥

इति श्री श्रीमद् वसंत लतिकायां पंचमी कलिका समाप्त

श्रीमन्मर्कल रुचि रुचिर तरु तरुणावलाम्बितायां ।
नव दल दलित ललित मंजु मंजरी संयुतायां । अलि कुल भक्तितायां ।

प्रादुर्भुत केलि कोरकन्नाम प्रथम स्तवकः

दोहा

अमल मुखी प्राची प्रिया, मुख पट करिके दूर ।
प्रात भाल नभ मैं दयो, लाल अरुन सिंदूर ॥ १ ॥
जागी वधूगन महरि पे, सकुचत सकुचत जाय ।
परि पायनि घर को चलि, घूंघट में सिरनाय ॥ २ ॥

द्वितीय स्तवक की प्रथम कलिका पूर्ण होकर द्वितीय कलिका के पद्य यह प्राप्त हुए हैं, ग्रन्थ अधूरा रह गया है।

लेखनकाल-२० शताब्दी ।

प्रति-पुस्तकाकार। पत्र-१७ से ४६ तक। पंक्ति-२१, अक्षर-२०, साइज ६॥ × ११॥

[स्थान-अभयजैन ग्रंथालय]

ड़ वेदान्त

बुधि बल कथन-रचयिता-लछीराम

आदि-

सरसति कौ उरि ध्यान धरि, गणपति गुरु मनाइ ।
लछीराम कवि यह कथा, अद्भुत कहत बनायी ॥ २ ॥

चौ०

पूरब दिसि जहां वहै सुरसरी, ता उपकंठि वसति सिवपुरी ।
जहां नरनारी सुंदर रूप,
राजै ज्ञानदेव तहां राव, रविले अधिक प्रताप दिखाय ।
जाके ज्ञान तेज उरि जगै, तातैं दूर मूढता भगै ॥

अंत–

मंगल भक्त मही ज्यौं राजै, बुधिबल बुधिमतीत्यों छाजै ।
धन बुद्धिबल मंगल चतुराइ, दीनी तेरै दस ठकुराइ ॥४०॥
नई कथा अर नांम गुन, पुनि नर नारी समाजु ।
लछीराम कलपित करै, रीझौ कविराजु ॥४८॥
बुधिबल सुनें बुधि अतिबाढै, मनतै सकल मूढता ।
सोरहसै विक्रम कौ साकौ, तापर वरस इक्यासी ताकौ ॥४६॥
तीजै महावदि पोथी भई, बुधिबल नांउ कल्पना नई ।
लछीराम कहि कथा बनाई, तामें रीति रस निकी छाई ॥५०॥
स्वारथ परमारथ युगल, दीने सब निज नाइ ।
चूकपरी जा ठौर सूँ, कविजन लेहु बनाइ ॥५१॥

इति श्री बुधिबल अंत प्रभाव वेदांत खंड समाप्त ॥

अष्टम प्रभाव समाप्त ॥

पत्र २१६ से २३२ पं० ३०अच्छर २६ गुटकार ।

ज्ञानमाला ।

आदि–

प्रथम पत्र नहीं

करम है सो आप किरपा करकै इन धेनु करम के भेद भिन भिन मौ से कहो, जोइ मेरे मनका संदेह निवारण करो । राजल यह प्रसन सुनाकर श्रीशुकदेवजी बहुत प्रसन्न भये और आज्ञा कीनि कि हे राजा तेरे प्रसंग में संसारी मनुस कूं नहलाये है । और जो यह संदेह तेरे मनमें उपजी है सोही अरजुन के मन में उत्पन्न भया था, सो श्रीकिसनजी ने वाके प्रसंग में कहा–

अंत-

आदि बुधि की होन हो दुर्जतन धरिजाय ।
लीजै आखत हीन हो चोथे रोजी धरि ॥
इतने लछन पापके होवे बार बार ।

लिखा है अरजुन जो मनस इन तीन पावन कूं अपने चित्त सूं कभी नियारी नहीं करै तो इस लोक पार पर लेया में परम सुख पावै प्रथम सुख पावै- प्रथम स्वामी की सेवा में हंसमुख और निरलोभ रहै दूजे चाकर के मनकूं दुखी न राखे। तीजो किरोध न करे।

इति श्री ज्ञानमाला संपूरणम् ।

प्रति पत्र २ से ६५ पं० १२ अ० १४ साइज ६॥×८

[स्थान-अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

च. निति

चाणक्य भाखा टीका ।

अथ चाणक्य भाखा टीका लिख्यते ॥

आदि-

दोहा

सुमति बढ़ावन सरब जन, पावन नीति प्रकास ।
भाखा लघु चानक भलैं, भनत भावनादास ॥ १ ॥
संकर देव प्रनाम करि, विधिपद वंदन ठांनि ।
विष्णु चरन जुन सीस धरि, कहुं सुचि शास्त्र वखांनि ॥ २ ॥
कह्यौ प्रथम चाणक्यमुनि, शास्त्र सुनीति समाज ।
सोइ अब मै वरनू नरन, बुद्धि बढावन काज ॥ ३ ॥

अन्त-

कहियत चानक संस्कृत, निरमल नीति निवास ।
भाखा करि दोहा भनै, साधु भावनादास ॥ २० ॥
षोउश चानक के कहियै, दोहा द्वै सततीस ।
सुभग स्वरग सोपान सम, अतिमुद प्रद अवनीस ॥ २१ ॥

अंक अयन ग्रह इन्दु कहि, संबत माधव मास ।
पख उज्जल रवि पंचमी, पूरन ग्रन्थ प्रकाश ॥ २२ ॥

इति श्री वैष्णव भावनादास विरचिते भाखा टीका वृद्ध चाणक्ये अष्टमोऽध्याय ॥ ८ ॥

प्रति–गुटकाकार । पत्र ४४ पंक्ति ६ अक्षर २४

गुटके में पहले इन्हीं टीकाकार का भर्तृहरि शतकत्रय और फिर चाणक्य मूल श्लोक और प्रत्येक श्लोक के साथ पद्यानुवाद ।

छ शतक

(१) भरतरी शतक श्लोक भाखा टीका नीति मंजरी । टीकाकार–भावनादास ।

श्रीगणेशायनम ॥ अथ भरतरी शत श्लोक भाखा टीका नीति मंजरी लिख्यते ॥

आदि–

सोरठा

अमल प्रीति उर आंनि, दामोदर पद कमल प्रति ।
भावना भनहिं सुवांनि, नीति सतक भाखा सु भलि ॥ १ ॥

सवैया

जिनकौं हम प्रानप्रिया कहि चिंतत,
भिन्न सदा तिनकौ चित है ।
जन औरन तैं बह प्रीति करै,
जन सो पुनि और हुतै रतहै ।
अनुराग न ता तियके नितसौं,
हमकौं प्रिय जांनि चहै वितहै ।
धिक हैं तिय कौं जनकौं रूमनोज कौं,
याहि कौं मोहिकौं सो नित है ॥ १ ॥

दोहा

सुख सौं समुझत मूढ जन, अति सुख विदुख रिझाइ ॥
अरध दग्धि मति मन्द कौं, बिधिन सकै समुझाइ ॥ २ ॥

अन्त-

दोहा

ग्यान अनल कौं अरनि सम, मुनिजन जीवन मूरि ।
बरनी सतक विराग की, भावन भाखा भूरि ॥१०९॥
मरुधर नगर सु जोधपुर, बसिबौ सदा बखान ।
राम सनेही साधु हम, खैरावा गुरु थान ॥११०॥

कवित्त-

स्वच्छ रमनीय हीय अछर अनूप जाके
नीति राग विमल विराग त्याग तैं भरी ।
जरी गुन दानक कैं बानक बिसेख बनी
सिंधु भव भूरि ताके तरिबे कौं हैतरी ।
रसिक रिझाविनी विवेक की बढावनी है
जेते बुद्धिवंत ताके जीवन की हैजरी ।
अंक नैन अंक इंदु मास सुचि राका कवि
भाखा मैं वखांनी टीका भावन भरतरी ॥ १११ ॥

इति श्री भरतरी सत भाखा वैष्णव भावना दासेन विरचिता वैराग्य मंजरी समाप्ता ॥ ३ ॥

वि०-भर्तृहरि शतक के तीनों शतकों के मूल श्लोक और उनके नीचे उनका पद्यानुवाद दिया हुआ है।

प्रति-गुटकाकार। पत्र १६० ॥ पं. ६ अक्षर २२। इसके बाद चाणक्य मूल और पद्यानुवाद इन्हीं टीकाकार का है।

(२) भर्तृहर शतं, भाषा टीका

आदि-

॥ ६० ॥ श्री गुरुभ्योनमः ॥ अथ भर्तृहर शतं लिख्यते ॥

भर्तृहर नाम ग्रंथ कर्त्ता। ग्रंथ की निर्विघ्न समाप्ति कौं। ग्रंथ कै आरंभ समय श्री महादेव कौं प्रणाम रूप मंगल करत है॥ कैसे हैं श्री महादेव। ज्ञान दीप रूप सबतैं अधिक ह्वै वर्त्तत हैं॥ कौन ठौरि विषै वर्त्तत हैं॥ जोगीश्वरन्ह कौ जेवंत सोई भयो भरु तामैप्रवर्त्तत हैं॥ पुनः कैसौ है श्री महादेव। माथै उपरी धरि है

जो चंद्रमा की कला ताकी चंचत् देदीप्यमान जु शिखा ताकरि भासुर देदीप्यमान है ।। पुनः कैसै हैं श्री महादेव । लीला अपुनी करि जार्‌यौ है काम रूप पतंगु जिनि ।। पुनः कैसौ है ।। मोक्ष दसा कै आगै प्रकासमान है ।। पुनः कैसे हैं श्रीमहा-देव । अंतःकरण विषै बाढ्यो जु मोह अज्ञान रूप अंधकार ताकौं नाश करणहार । असो श्री महादेव जयवंत वर्त्तै ।। १ ।। राजा भर्तृहर । या संसार की दसा। जैसी आपुनकूं भई। तैसी साधुन कौं जनाइ करि । वैराग्य उपराजिवै कहुं । ग्रंथ करत हैं ।। तहां जो असाधु निंदा करैं तौ करौ । निंदा असाधु हीं कौ कर्त्तव्य है ।। असाधु सुं कछु तातपरज नाहीं। असाधु कौ निर्णय करत है। आगिलेश्लोकन्ह विषै ।। × × ×

अंत-

अहो महां तनके वचन चित विषै अवस्यमेव राखिजै। यह आयु जु है सु कल्लोल भई। लोल चंचल है। जैसे जल को तरंग। अरु जोबनु की जु श्री सोभा तें थोरे हीं दिवस है। परंतु बिनसि जातु है। अरु अर्थ जु है अनेक प्रकार की लक्ष्मी ते स्मर तुहीं जात हैं। अरु भोग को समूह सु जैसें मेघ वितानमौ विजुरी चंचल तैंसो क्षण एक चंचल है। उपजै अरु नष्ट जाइ। अरु प्रिया जुस्त्री तिन्ह जुआलिंगनु विलास सो चितवत ही जात है। तातें हौं कहत हौं यह समस्त अनित्य जाणिकरि परब्रह्म जिहैं श्री नारायण तिन्ह विषै अंतहकरण निरंतर ह्वै लगावहु। अब संसार को त्रास निवारी करि वैकुंठ विषै चलो ।। ७८ ।।

(अपूर्ण लिखा हुआ)

प्रति-पुस्तकाकार गुटका। पत्र ८५ पंक्ति १७ अक्षर २० प्रत्येक मूलश्लोक के नीचे टी का लिखि है। मूल श्लोक यहां नहीं दिये हैं।

[वृहत ज्ञानभंडार-बीकानेर]

(१) अमर सार नाम माला- रचयिता-कृष्णदास-दो ३६०

आदि—

आदि पुरुष जगदीश हरि, जागुन नाम अनेक।
सबद रूप रचि जान ही, आदि अंत जो एक ।। १

देषहु एक अनेक मैं, ग्यान दिठ नर संत ।
ज्यौं दिपक सब गेह प्रति, त्यौं घर सकलंद नंत ॥ २

× × ×

क्रिष्णदास कवि तुछमति, सबदमहोदधि मांहि ।
बाग समत्थ उताही, सार हत्थ गही बांह ॥ १०
भीमसेन नृपराजहित, करु नाम नग दाम ।
कविकुल विगनि मानही, अमरसार अभिराम ॥

× × ×

सवत षट रसात परिषट् धरिसावत मास ।
बदि तैरसि गुरु पुस्यदिन त्रियो प्रबंध षटकास ॥ १२
नायरतन की मालिचंद शोभा दिपति समेत ।
कोविद कुल कंठहिलसै बितु भूपन छवि देत ॥ १३
अमरकोष मुन केस किय अमरसिंह मति राज ।
किस्दास मतिसर सिय कर सुबुद्धि हित राज ॥ १४

× × ×

अरथ तरंग अनेक छबि, गुन दोस नगलाल ।
भीमसेन नृपराज के, अग्र धरि गहिमाल ॥ ५८
सुमन रूप सबि देह धर, नान प्रमोद सुगंध ।
कृष्णदास अलिवाश लिय, रचि किय ग्रन्थ प्रबंध ॥ ५९
साठि तीनसै दोहरा, अमरसार अभिराम ।
विप्र सन सूत किय, जे प्रसिद्ध हित नाम ॥ ६०

इति श्री अमरसार नाममाला दोधक संपूर्ण ।

ले० संवत् -१८६५ वर्षे मंगलवारे वैसाख सुदी सातम दिने ७ ताल मध्ये लिखी सामिजी बाल वाचक वाचनार्थे लीखी छे ।

पत्र ८ पं० २१ अ० ४२

[स्थान—गोविंद पुस्तकालय]

(२) एकाक्षरी नाम माला—रा रतनू वीरमाला पद्य ३४

श्री गणेशायनमः ॥ अथ एकाक्षरी नाम माला लिख्यते

दोहा

कहत अकारज विष्णु कुं, पुनि महेश महेश मतमांन ।
आ ब्रह्म कुं कहत है, ई जुगमार या जान ॥ १ ॥
लघु उकार संकर कह्यौ, दीरघ विष्णु सदेख ।
देव मात लघुरी कहै, दीरघ दनुज विशेष ॥ २ ॥

अंत-

विदुषन मुख सुनि तरक षट, अष्टादसहि पुरान ।
नाम माला एकाखरी, भाषी रतनू भांन ॥३४॥

इति श्री घड़ोई रा रतनू वीमाण कृत एकाक्षरी नाममाला संपूर्णः ॥ लेखन प्रशस्ति स० १८५६ ना वर्षे श्रावण बदि ३ रवौ लिखिता श्री गोड़ीजी प्रसादात् ॥

प्रति पत्र २ पं० १४ अ० ४८ साइज़ १०×४॥ (दोनों पत्र एक और लिखे)

[राजस्थान पुरातत्व मंदिर, जयपुर]

(३) नामरत्नाकर कोष– रचयिता–केसरकीर्ति सं० १७८६

आदि-

परमज्योति परमातमा, परम अक्षय पद दाय ।
परमभक्ति धरि प्रणमीह, परम धरम गुरु पाय ॥
वंदु मांझ जतिहि दियाल, भाषा मंद बनाय ।
रसिक पुरुष रीझत सुनत, करता कवित कविराय ॥
संस्कृत हा कहित सरस, पंडित पढत प्रवीन ।
कविजन चारण भारकइ, लघु मति इनतैं लीन ॥
ता करस्य कविमख बुरत, पढत होत वडपान ।
सरसमंद आणै समझि, न चलत अक्षर मान ॥
आदिदेव अरिहंत के, रचना ये अभिराम ।
सिद्धि बुद्धि दीजै सरसती, पद युग करू प्रणाम ॥
नमो जगनायक ईस जिने
सदाशिव शंभु स्वयंभु स्वरेश
सुतीरथ कार भिकाल के जान
प्रभु परमेश्वर सर्व सुगपाना ॥

अन्त-

मेदपाट महाराष्ट्र में, वेडाणो वडभुम ।
वास बहों हरिभक्त जहां, सवस बुद्धि को धाम ॥
परगट पंडित देश में, तास तनय शिवदास
विरवा विनय विवेक बुद्धि, पर नवि खेडत पास ॥
वसतवली तिय सतर विच, परद रति विश्नाम ।
पंचोली पृथवी प्रगट, निरुपम नाथूराम ॥
फकीरदास अनि फाबतो, तए अंगज अति नेज ।
गुण गाहक अति मति सुरगुरु, हरषण तजित हेज ॥
एषिहुं तिजो शिष्य निज, चातुर लखमीचंद ।
मिलि चारु मिज लए करि, कीयो ग्रन्थ सुखकंद ॥

कवित्त-

रसवसु मुनि विधु वर्ष मास त पसितपथ मुणोथ ।
तिथि पंचम क्षिति प्रणीमार तिय दिन कोमिणी यह ॥
तपगंछमें सिरताज मगसि (क ?) रमगय दुखभंजन ।
तहां पद पंकज भृंग सकल सजन मनरंजन ॥
केसरि कीरति जोड करी, कर्यौं ग्रन्थ सुखरासि ।
पढै गुणै खै मुणै पावत चित..........

इति नाम रत्नाकर

अधिक- ४ रेवाधिकार पद्य २२२ मनुष्याधिकार पद्य २७३ स्त्री पद्य १६२ चतुर्थ पद्य ११७

प्रत्येक अधिकार के पद्य अन्तके सव व केसवदासकवि का नाम है प्रथम-धिकार की लेखनसमाप्ति में केसर की कृति विजयते लिखा है ।

पद्य ३२८ पं० १५ अ० ४३

[मोतीचंद खजानची संग्रह]

(४) नांमसार रचयिता राठौड़ फतहसिंह महेशदासोत

आदि-

श्रीगणेशायनमः अथ राठौड़ फतैसिंघ महेसदासोत कब नांमसार लिखते ॥

दोहा–

अरुन बदन आनन सुज, प्रसन बदन रद स्वेत ।
गननायक दायक सुमति, सुत संकर बरदेत ॥ १ ॥
नामसार के पढयतैं, प्रगटै धूध सुभाय ।
धरम अरथ कामरु मुकत, च्यार पदारथ पाय ॥ २ ॥
नामसार के नांमजो, ढुंढि स्मृति सब लीन्ह ।
फतैसिंघ राठोड़ यह, तापर भाषा कीन्ह ॥ ३ ॥

प्रथम येक संख्या:

ब्रम्ह येक कुमल अनत, येक दन्त गनराज ।
सुक्र द्रष्ट सिस भुमियक, रवि रथ चक्र बिराज ।

अपूर्ण। पत्र २०। प्रति पत्र पंक्ति १८, प्रति पंक्ति अक्षर ११, गुटका–

अंत–

[सीतारामजी लालस संग्रह गुटका]

(५) पारसी पारसात नाम माला । पद्य ३५३, भ० कुअर कुशल

अथ–व्रज भाखा कृत पारसी पार सात नाम माला लिख्यते ॥

दोहा–

परम तेज जाकौ प्रगट, रखत जगत आराम ।
बंदत सविता चरन बिब्र, कुँअर सु कविता काम ॥ १ ॥
सूरज की साँची भगति, हित सौं जौ हिय होय ।
कबिता तौ बाढ़ै कुँअर, सुनत सु कबि जस सोय ॥ २ ॥
सविता की सेवा कियैं, पसरै कबिता पूर ।
छबि जाकी जग मैं छती निधि वाकै मुषनूर ॥ ३ ॥

अथ गनेश की स्तुति ।

कवित्त छप्पय ।

उदर सुथिर गिरि अतुल, हार पँनग हिय हरषित ।
दंत येकु मुष दिपत बैन, अमृत सम बरषित ॥

माल बाल ससि सुभग, प्रगट छबि मुगट सु पाई।
शिव सपूत गुन सदन गोरि, हित जुत गुर ताई ॥
बरदेत सही बंछित करन, धरा कछ्छ रिधि सिधि धरहु।
कवि कुँअर राउ लषधीर कै, गनपति निति मंगल करहु ॥ ४ ॥

अथ श्री भुज नगर वर्न्नंं ॥

दोहा

सहर सुथिर भुज है सदा, कछ्छ धराउँ अरेस।
पातिस्याह तिनिकौ प्रगट, निरषहु लखा नरेस ॥ ५ ॥
दांनि माँनी देसपति, ग्यानी गुन गंभीर।
बांनी बर पाँनी प्रबल, लषि जादौ लषधीर ॥ ६ ॥
दीपै देसल नंदये, रस जस अमृत रूप।
मघवा ज्यौं मौजैं करत, भुज मह लषपति भूप ॥ ७ ॥
अवनी सकल उधारकौं, ह्वै हिय मैं हम गीर।
रच्यौ विधाता आप रूचि, बिय बिधि लषपति बीर ॥ ८ ॥
किय लषपति कुंअरेस कौं हित करि हुकमहजूर।
पारसात है पारसी, प्रगट हु भाषा पूर ॥ ९ ॥

अब सूरज सौं बीनती ॥

दोहा

बंछित बर दाता बिमल, सूरज होहु सहाय।
पारसात है पारसी, वृज भाषा जु बनाय ॥१०॥

अन्त–

सूरज ससि सायर सुथिर, धुअजोलौं निरधार।
तौ लौं श्री लषपत्ति कौ, पारसार सैं प्यार ॥५३॥

इति श्री पारसात नाममाला भट्टारक श्री कुँअर कुशल सूरि कृत सम्पूर्णा।
सम्वत १८५७ ॥ ना आसूविद १० सोमे संपूर्णा कृता ॥
सकल पंडित शिरौमणी पं० कल्याणकुशलजी तत्शिष्य पंडितोत्तम पं० विनीत कुशलजी तत्शिष्य पं० ग्यांन कुशलजी तत्शिष्य पं० किर्त्ति कुशलजी लिषिताश्व अर्थे श्री रस्तु।

प्रति परिचयः- पत्र ३५, साइज १० × ४।।, प्रतिपृष्ठ पं० ६ प्रति पंक्तिअ० २८
[राजस्थान पुरातत्व मंदिर-जयपुर]

(६) **लषपति मंजरी** । पद्य १४६ । संवत् १७८४माघ वदी११ बुधवार ।

आदि-

श्री गणेशायनमः

सुखकर वरदायक सरस, नायक नित नवरंग ।
लायक गुन गन सौं ललित, जय शिव गिरिजा संग ।। १ ।।
भली रत्ती तिहुँ भौंन में, बढत चढ़त बिख्यात ।
पातक न रहत पारती, भजन भारती मात ।। २ ।।
चिंतित सुफल चितौनि मैं, दीननि कौं जिहिं दीन ।
वा गुरुके पद कमल जुग, मन मधुकर करि पीन ।। ३ ।।

दोहा

संवत सतरैंसै बरष पुनि ने ऊपरि च्यार ।
माघ मास एकादशी किसन पछिकबिवार ।। ७ ।।
नरपति कुल बरन्यौ प्रथम राज कुलीकौ रूप ।
पुनि कवि की पट्टावली उचरत सुनत अनूप ।। ८ ।।

अन्त-

माने जिन्हैं महाबली, महाराज अजमाल ।
अरु सूबे अजमेरु के, मानैंके महिपाल ।। ४१ ।।
करि लषपति तासौं कृपा, कह्यौ सरस यह कांम ।
मंजुल लषपति मंजरी, करहु नाम की दांम ।।४८।।
तब सविता को ध्यान धरि, उदित करयौ आरंभ ।
बाल बुद्धि की वृद्धि कौं, यह उपकार अदंभ ।। ४६ ।।

अंत लिखते छोड़ा हुआ सा प्रतीत होता है । नाममाला का प्रारंभ मात्र होता है

विशेष विवरण-

पद्यांक ६ से १२१ तक में नृप वंश वर्णन है जिसमें नारायण से कुँअर लषपत तक की वंशावली दी है । पद्यांक १२२ से कवि वंश वर्णन प्रारम्भ होता है ।

यह एक ऐतिहासिक ग्रन्थ है। प्रारम्भ के आठ पत्रों में पद्यों के उपर गद्य में टिप्पणी लिखी है।

प्रति परिचय-पत्र १२, साइज १०॥×४॥, प्रति पृ० पं० ६, प्रति पं०अ०३०

[राजस्थान पुरातत्व मंदिर-जयपुर]

(७) (**लखपत मंजरी नाम माला**) र० ४६ कनक कुशल, पद्य २०२ सं०।

भट्टारक-श्री कनककुशलजी कृत लखपति मंजरी नाम माला लिख्यते ॥

दोहा

विबुध वृंद वंदित चरन, निरुपम रूप निधान।
अतुल तेज आनंद मय, वंदहु हरि भागवांन ॥ १ ॥

कवित्त छप्पय

परम जोति परमेस दरस सुख करन हरन दुख।
चरचित सुर नर चरन राह निरि सरस राजसिरुख ॥
अमल गंग उतमंग गवरि अरधंग धरत गुरु।
रुंडमाल रचि व्याल भाल वनि चंद भ्माल मक ॥
कवि कनक जगति हित जग भगत, अकल रूप असरन सरन।
देवाधि देव शिव दिव्य दुति जदुपति लखपति जप करन ॥ २ ॥

दोहा

ज्यों गिरि कुल में कनम गिरि, मनि भूषन अवतंस।
वृच्छनि में सुर वृच्छ त्यों, बंसनि मैं हरिवंश ॥ ३ ॥
कनक कान्ह अवतार कौं, जानत सकल जिहान।
पाट भये तिनकें नृपति, अनुक्रम पृथु अनुमानु ॥ ४ ॥
भये जु भूप हमीर कै, सब भूपति सिंगार।
साहि पच्छिम दिसि को, सबल खल खंडन खंगार ॥ ५ ॥
तरनि तेज तिनि कै भये, भुजपति मारा भूप।
पाई जिहिं पति साहि तैं, पदवी राउ अनूप ॥ ६ ॥
भोज राउ तिनि कै भये, गनि तिन के खंगार।
राउ तमाची राम सम, सुत तिन के सिरदार ॥ ७ ॥

तिनके पटधर अधिक तप, भयौ रायधन राउ ।
शील सत्य साहस सुगुन, रन मय रुद्र सुभाउ ॥ ८ ॥
पावन तिनि के पाट पति, पति साहस जस पूर ।
राउ प्रयाग प्रयाग सैं, प्रकटे पुण्य अंकूर ॥ ६ ॥
तिनिके उपजे तप बली, गाजी गुन निधि गौड़ ।
सूर शिरोमनि सहसकर, मरद महीपति मौड ॥ १० ॥

लखपति जस सुमनस ललित इक बरनी अभिराम ।
सुकवि कनक कीन्ही सरस नाम दाम गुन धाम ॥ १ ॥
सुनत जासु ह्वै सरस फल कल्मष रहै न कोय ।
मन जपि लखपति मंजरी हरि दरसन ज्यौं होय ॥ २ ॥

अंत–

इति श्री भट्टारक कनककुशलजी कृत ॥ लखपति मंजरी नाम माला संपूर्ण:॥ श्री भुजनगर मध्ये जोसी कल्याणजी ॥ संवत् १८३३ वर्षे पौष मासे शुक्ल पक्षे ४ तिथौ ४ सोमवासरे लिखि ॥ पठनार्थम ॥ बारोट रामजी ॥ श्री रस्तु ॥ कल्याण-मस्तु ॥ शुभंमस्तु ॥ श्री ॥ श्री ॥ श्री ॥ श्री ॥

प्रति–गुटकाकार साइज ६ × ५, पत्र १३, पं० १३, अ–२० से २४

[राजस्थान पुरातत्व मंदिर–जयपुर]

वि०पद्यांक १०२ तक भुजनगर उनके राजादि का वर्णन फिर नाममाला प्रारंभ

(८) **सुबोध चन्द्रिका** । पद्य १०२१ । फकीरचन्द । सं. १८०० चै. सु. ३,

आदि–

आद पुरष कौ ध्यांन करि कहौ नाम की दांम ।
एक बरन के अर्थ बहु सुफल करै सब आन ॥ १ ॥
सो भरि नाम आचार्य कृत दुती नामकी माल ।
ताहि के परमान कछु बरनौ जुगति रसाल ॥ २ ॥
अधिक और कवि मुखनतें सुनि कै कियो प्रमान ।
सो प्रमान ह्या लाय कैं कहैं महा बुधवान ॥ ३ ॥
सब्द सिंधु सब मथ्य कैं रच्यौ सुभाषा आनि ।
अर्थ अनत इक बरन कैं द्वादश अनुक्रम बानि ॥ ४ ॥

संवत ठार से रवि बरष चेत तीज सित पक्ष ।
भइ सुबोध चन्द्रका सरस देत ग्यान परतक्ष ॥ ५ ॥

अथ प्रथम ॐ के नांम–

ॐ परमेस्वर मुक्ति मनि ग्यान पूर्न पहिचानि ।
सबरिथ बाचक अव्यय केवल रूप बषानि ॥ ६ ॥

अन्त–

अचल प्रीति प्रभु दीजियै तुअ गुनगन की मोहि ।
इहि मांगै अति चौंप करि मालम मन की तोहि ॥ १०१६ ॥ इति श्रीनाम ।

दोहरा–

कहु न पाये अर्थ जब आद बर्नतै माषि ।
कवि कुल के परबंध इह सही जानि हिय राषि ॥ १०२० ॥

इति श्री चहुआण मयाराम सुत फकीरचन्द विरचितायां सुबोध चन्द्रकायां।
प्रति–गुटकाकार ।

[राजस्थान पुरातत्व मंदिर, जयपुर]

(१) छंदमाला । रचयिता– केसवराई (केसवदास)

आदि– अथ छंदमाला लिख्यते ।

अनंगारि है पैल में संग नारी ।
दियै मुण्डमाला कहै गंगधारी ॥
भावै कालकूटै लसै सीस चन्दै ।
कहा एक हो ताहि त्रैलोक्य वंदे ॥
महादेव जाके न जानै प्रभावै ।
महादेव के देव को चित्त भावै ॥
महानाग सो है सदा देहमाला ।
महा भावयंती करो '**छंदमाला**' ॥

दोहा–

भाषा कवि समुझै सबै सिगरे छंद सुभाइ ।
छंदन की माला करी, सोभन **केसवराइ** ॥

एक वर्ण को पद प्रगट छबि सलौ मतिमंत ।
तदुपरि केसवराइ कहि दंडक छंद अनंत ॥
दीर्घ एक हीं वरन को दीजै पद सुखकंद ।
मंगल सकल निधान जग नाम सुनहु श्रीछंद ॥

इसके पश्चात ७७ पद्यों में ८४ छंदों का विवरण देकर "वर्णवृत्तिसमासा" लिखा है। तदनंतर विविध प्रकार के छंद, गनागन दोष, दोहों के उपभेद आदि है।

अन्त-

पुरुजन सुखपावत रघुपति आवत करतति दौर ।
आरती उतारैं सर्व सुवारैं, अपनी अपनी पौर ॥
पढि मंत्र असेषनि करि अभिषेकनि दैं आशिष सब शेष ।
कुंकुम कर्पूरनि मृगमदपूरनि बरषनि वरणा वेष ॥ ७३ ॥

इति श्री समस्त पंडित मंडली मंडित केसोदास विरचिता छंदमाला समाप्तम् ।

ले०—सम्वत् १८३६, बैशाख सुदी ६, शुक्रवार लिखत जती ऋषि...जगता ऋषि पठनार्थम् ।

शुभमस्तु-बागप्रस्थपुरे लिपीकृता ।

प्रति- पत्र १७, पं.- १२, अ. ३८।४० ।

[विनयसागरजी संग्रह]

(२) छन्द रत्नावली—रचयिता-जुगात राइ । सं० १७३० का० सु०

आदि-

आगरा हिम्मतखांन कथन से ।

श्री बानीकरना पुरुस, कर्यो नु प्रथम उचार ।
आगम निगम पुरान सब, तामैं ताहि जुहार ॥ १ ॥
पिंगल आगैं गरुड कै, रच्यो कला प्रस्तार ।
पहुंचो आप समुद्र करि, छंद समुद्र अपार ॥ २ ॥
जुगतराह सों यों कह्यो, हिम्मति खांनबुलाइ ।
पिंगल प्राकृत कठिन है, भाषा ताहि बनाई ॥ ३ ॥
छंद्रों ग्रन्थ जिते कहे, करि इक ठौरे आनि ।
समुझि सबन को सार ले, रतनावली बखानि ॥ ४ ॥

नाम छन्द रतनावली, याहि कहैं सब लोग ।
लाइक है प्रभु श्र(स्त)वन को, कवि हिय राखन जोग ॥ ५ ॥
सप्ताध्याय रतनावली, कर्यो ग्रन्थ मत सूर ।
प्रथमाध्याय कर्म कू (क्रि) या गुरु लघु गन इम पूर ॥ ६ ॥
असम मात्र छंद दुतिय है, समकल छंद त्रिय जान ।
चोथी सम वर्नक कही, असम वर्न पंच मान ॥ ७ ॥
छठी ध्याय छंद पारसी, सप्तम तुक के भेद ।
करै पंडित या ग्रन्थ मैं, मनवचन क्रमसौं खेद ॥ ८ ॥
अथ गुरु लघु लक्षन—
संजोगादि सबिंद सुनि, कहूँ होई चरनंत ।
दीरघ ए गुरु जानियों, औ लघु नाम लहंत ॥ ६ ॥

× × ×

हिम्मखान सों अरि कंपत, भाजत लैबल जिय ।
अरि रे हमै हूँ संग लै बोलत, तिनकी तीय ॥

× × ×

पत्रांक ८७ से ६३ में पारसी छंद लक्षण के अंत मैं इति श्री जुगतराइ विरचिते छंदरतनावल्यां पारसीवृत्त षष्टमोध्यायः ॥ ६ ॥ अथ तुकपदे सप्तमोध्यायः ॥ ७ ॥

अन्त–

इति श्रि जुगतराइ विरचिते छंदरतनावल्यां तुकभेद सप्तमोध्यायः ॥ ७ ॥ संवत् सहस्त्र सात सत तीस कातिक मास शुक्ल पक्ष दीस भयो ग्रन्थ पूरन सुभ स्थान, नगर आगरो महाप्रधान

दांन मांन गुनवान सुजान, दिन दिन बाढो हिम्मतखान ।
जुगतराइ कवि यह जस गायो, पढत सुनत सबही मन भायो ॥
जो कुछ चूक मोहितैं होई, सो अपराध क्षमो सब कोई ।
विनती सबसों करौं अपार, पंडत गुन जन लेहु सुधार ॥

इति छंद रतनावली पिंगल भाषा श्री जुगतराइ कृत सम्पूर्ण ।

प्रति- पुस्ताकाकार पत्र १००, पं. १६, अ. १८। १६।

[नया मंदिर, दि. सरस्वती मंदिर धर्मपुरा, दिल्ली]

प्रतिलिपिः अभय जैन ग्रन्थालय।

विशेष- प्रस्तुत ग्रन्थ में विशेष उल्लेख योग्य पारसी वृत्तों के वर्णन हैं— अतः उसके आदि अन्त के पत्र दिये जाते हैं —

आदि-

अथ पारसी छंद भेद षष्टमोध्याय प्रारम्यते ।
सबै पारसी छंदनि में, लघु गुरु को थौहार ।
पुनि लघु गुरु मन नेम हैं, तिनके कहों प्रकार ॥

× × ×

फिर मक्तूवी, गन प्रस्तार, प्रस्तार, छंद गन भेद, छंद नाम, सालिम बहर, मुतकारिब, मुतकारिब हजज, रमल, रजजू, काफिर, कामिल, मनसरह, खफीफ मुजारअ, मुजतिस तबील मुक्तजिब, मदीद बसीत, सरीअ, ठारीब, मशाकिल, गैरसाल मक्तया, स।लिम अरोचक, गैर सालिम अज्जहाफ, के नीस नाम, यंत्र, अथ भेद आदि का वर्णन है।

अन्त-

गजल रुबाई मसनबी, बैतत अथवा चर्न ।
इक द्वै गन तुक सहत धर, मुस्तजाद सो बन ॥
एक चर्न सों मिस एक है, वर्न मुसल्लिस तीनै लहैं ।
चर्न मुखंमस पांचै मान, विषम चर्न छंद इतिय जान ॥

इति श्री जुगतराइ विरचिते छंद रत्नावल्या पारसी वृत्त षष्टमोध्यायं ।
अथ तुकभेद सप्तमोध्याय—

चर्न अन्त जे वर्न सुर, पून चरन है गुन ।
ने सुर बर्न जु सकल मिल, तुक कहिए जिय जान ॥
संसकृत प्राकृत बहु, बिन तुक हूँ छंद होई ।
भाषा छंद तुक बिनु नहीं, कहो ग्रन्थ मत जोइ ॥

(३) छंद श्रंगार। पद्य २२८। सेवग महासिंघ। सं. १८५३ नम. सु. ५ नष्टे नगर।

आदि-

छप्पय-

अरन बरन गज वदन सदन, बुद्धि वर सुख दायक ।
अष्ट सिद्धि नव निद्धि वृद्ध, नित प्रति गण नायक ॥
विमल ग्यांन वरदान तिमर, अज्ञान निकन्दन ।
सर्व कार्य सिद्धि लहे, प्रष्णु जासो जंग वन्दन ॥
गवरि सुनंद आनन्द मय, विघन व्यापि भव भय हरन ।
निज नाय सीस कवि सिंघ, भजय गनेश मंगल करन ॥१॥

दूहा-

गणपति देव प्रताप तें, मति अति निर्मल होत ।
ज्यूं तम मन्दिर के विषे, दीपक करत उद्योत ॥२॥
श्री गुरुदेव प्रतापतें, भयो सुग्यांन अमन्द ।
जाके पद सिर नायक हूं, भाषा पिंगल छंद ॥३॥
छंद बौध यातें लहें, रसिकन को रस सार ।
नाम धरयो इन ग्रन्थ को, तातें छंद श्रंगार ॥४॥

छंद पधडी-

अब कहूँ प्रथम अष्ट हिं प्रकार । दुतीय प्रभाव गन कें विचार ॥
भन तृतीय छंद मता सुचाल । सुन वर्ण छंद चोथे रसाल ॥५॥

अन्त-

नाम छंद सिंगार है, पढ़त हिं प्रगट प्रमोद ।
छंद भेद अरु नायका, जाको लहत प्रबोध ॥ २६ ॥

चोपई छंद

भारद्वाज गोत्र पोहकरनां, सेवग ग्यात कहावे ।
महासंघ नगर मेरते, वसे परम सुष पावे ॥
जो कविता जन भये अगाउ, जांके वंदत पाया ।
छंद श्रंगार ग्रंथ यह कीनों, सामथि हरि गुन गाया ॥ २७ ॥

कवित्त:

संमतलोक[3] पांडव[5] नाग[8] चंदन[1] नम मास धवल पष्य पंचमिकुजवार ठांनियौ ।
स्वांत नष्यत्र सुंदर चंद तुल रास आये मध्य रवि समें इंद्र जोग रमांनियौ ॥
छंद श्रंगार नांम यह ग्रन्थ समापत भयो, नवेनगर सहर निज मन मांनियो ।
कहे कवि महासिंघ जोइ पढ़े वांचे सोइ मेरो नित प्रनें जइसी कृष्ण जांनियौं ॥२८॥

इति श्री सेवग महासिंघ विरचिते छंद श्रंगार पिंगल संपूर्णं)

संवत् १८७६ ना पोस शुद ३ दिनें लिषितं जानीमकनजी तथा डोशा ।

प्रति परिचय-पत्र २० साइज १०।×४॥ प्रतिपृष्ठ पं० ११ प्रति पं० अ० ३५

[राजस्थान पुरातत्व मंदिर-जयपुर]

(४) पिंगल अकबरी—चतुर्भुज दसवधि कृत्य

मूल दोहा

इजव्वण धर खम आदि दे । अष्टौ अक्षराणि निषिधा ।
गुणिगण गणपति चिति चित, अवगति अकह अपार ।
देहि बुधि प्रभु जगद्गुरु, करुह छंद विस्तार ॥ १ ॥

चौपई

अगबरशाह जगत्र गुरु माणेहु, इहि वात मण महि अणुमाणहु ।
सरद सुधाकर कीरत माणहु, निसिदिन चिरा ताहि सणमाणहु ॥ २ ॥

अकबर विरजि १ दल विबुध सजि २ गजमद गरजि ३ वजणति वजि ४ नृपगण तरजि ५ कण सकवि रजि ६ अरि सकल भजि ७ निज भुवण तजि ८ वण गई तिलजि ६ तण रहिस धजि १० वण फिरति खजि ११ मुख छविण छजि १२ मनु दुख उपजि १३ जलनिधि निमजि १४ सवहुण निवजि १५ जुगपति रजि १६॥

रण चढत मीर १ तेउ विविध वीर २ अति समर धीर ३ बुधि बल गभीर ४ जहां तहां हि भीर ५... .६ अरि भय अथीर ७ उदलागति तीर ८ हिय बढति पीर ६ मुख थकित गीर १० नैणाण तनीर ११ दुरबल शरीर १२ वण घण करीर १३ भ्रम भटक वीर १४ नहीं जुरत नीर १५ भोजन समीर १६॥

अरि जिय विचारि १ भुय भग्ग परारि २ गढ-मढ विदारि ३ अपहथ उदारि ४ पुर किय उजारि ५ निज भुवण जारि ६ मण गण विथारि ७ धन विविध

निहारि १२ नहीं उदधिश्चारि १३ बुडेहि तिवारि १४ तिहिगति निनारि १५ जगदेति वारि १६॥३॥

वजति निसाण १ धुन घण समान २ अरि सुणत कांन ३ अति ही सकाण ४ दस दिस पराण ५ गृह मग भुलाण ६ तज्जति गुमाण ७ सभ गई हिसाण ८ गिरवण परवाण ९ ताह फरत थांण १० जब जुर ने पांण ११ निरखत वेदांण १२ तउ तजति प्राण १३ अरि कोउ रहाण १४ लंकउ अहाण १५ अकबर की आण १६॥४॥

दोहा

अकबर साहि प्रवीण भुय, कह्यो कहुह सब छंद ।
सुगम होहि महि मंडले, पढत वढति आणंद ॥ ३ ॥
चतुर चतुरभुज सुगत ए, कह्यो बुद्धि अणुमांण ।
सुणहु साधु सभ सुचित हुई, करहु ग्रन्थ सणमांण ॥ ४ ॥
सुभ [1]भरथ [2]सौतव [3]गरुड़, [4]कश्यप [5]सेष [6]विचार ।
षट पिंगलु ए विदुत भुइ, कहु अब तिहुअ निहारि ॥ ५ ॥
पिछिमिति तर कहु मत्त विणु ए त्रिणहु लवु जाणि ।
प्रगट ताहि बुधि जन कहत, अवर सभै गुरु मांण ॥ ६ ॥
विंद सहित संजुत पर, अरु विकलपु चरणंतु ।
कबहु लघु संजुत पर, दीह सबै बरणति ॥ ७ ॥
कबहु अक्खर त्रिणहुइ, मिलति पढति एक सथ ।
उहै एक लवु जाणिए, बुधजण कहत समथ ॥ ८ ॥
भगण तगण सगण पर,..............................
× × × × × ×
द्विविध छंद फणपति रचित, वरुण वरुण मत्र परमाण ।
करुह प्रगट सब जगत्रहि, जथा बुध अणुमाण ॥१५॥

सासी जीगो श्रीछंद, तिणछंद, सेसाराजी छंद, विद्युतमाला छंद, रुअमाल, राइमाला छंद, मालती माला छंद, विजूहारा छंद, विश्वदेवा छंद, सारंग छंद, बंभरूवी छंद ।

१६ के बाद— अथ लघु छंद, मधु छंद, दमण छंद आदि। १६ के बाद फिर–यही छंद लगाणिया छै।

पत्रांक ६५ और ६६ खाली हैं। पत्रांक ६७ पद्यांक २३ के बाद ग्रंथ लिखते हुए छोड़ दिया है। फिर फुटकर कवित्त और दोहे हैं, जिनके कर्त्ता सारंग, कालीदास, पातसाह आदि हैं। व जिनका विषय अकबर पातसाह के कवित्त, नाजर रा सारजादेरो, खानखानारा भूलणा, फिर कवित्त रायदासजी को।

रायदासजीरो गुण अमृतराजरी कियो, पत्रांक ७६ तक है।

पत्र ७७–में श्रृंगारु अनूप चतुरभुज दसवधि कृत्य। ग्रन्थ प्रारंभ किया है।

पत्र ७८–साहिबाजखान रो, पतिसाहजीरा ढढणिपद चतुर्भुज कृत्य। पत्र ७६ पद्य ६६ फिर कवित्त।

एजु बिया देत साउ, वित चाहत, वित दे विद्या तूहि पढांवतु ।
कल्पद्रुम कलिकाल चतुर अति, कविता करण कहत जिय भावतु ॥
जा देखे सुख संपति उपजति, दुरति दूरि नाशत तहा जावतु ।
अहरिदास सुतन सुखदाता, चतुर्भुज गुणी जनराइ कहावतु ॥

प्रति गुटकाकार (ग्रन्थ अपूर्ण)

[अनूपसंस्कृत लाइब्रेरी]

(५) **पिंगलादर्श**—रचयिता–कवि हीराचंद र० सं० १६०१ मोरवी।

आदि–

छप्पय

सच्चित आनंद रूप, क्वचित माया तें गुनमय।
कुचित तासों नाहि, खचित ज्योति सों अक्षय ॥
अर्चित ब्रह्मादितें रचित, जातें जनि स्थितिलय ।
किंचित नाहीं द्वैत, उचित अच्युत सुख अतिशय ॥
सो चितवत हों इक आप प्रभु, अचित रहित ओंकार जय ।
वंचित नास्तिक नाश हिलहो, संचित सों बांधे सभय ॥१॥

उपोद्घात—

दोहरा—

संस्कृत प्राकृत पिंगलन, हे अनेक सो देखि ।
तातें रचना अधिक गहि, या में धरी विशेखि ॥ १ ॥

कुंडलिया—

तातें मित अच्छर अती, अर्थ बुद्धि को धाम ।
छंद नाम यति भेद अरु, सूत्र चिह्न गन नाम ॥
सूत्र चिह्न गन नाम, एक पाद हि मैं आवै ।
एसो करो विवेक जाइते और न भावै ॥
आगें पिंगलकेइ भये न्यूनाधिक यातें ।
लेइ सबन को सार, बनाये सुन्दर तातें ॥ ३ ॥

अंत—

दोहा

तातें याके नामजू, धर्यो पिंगलादर्श ।
कीजो सब बुध जन छमा, जो आवै अपकर्ष ॥ ४ ॥
दिखे गलादर्श में, दर्शन पांच प्रकार ।
प्रथम गनादिक दुतियें हे, वरन छंद उपचार ॥ ५ ॥
मता छंद तृतीय हैं, तुर्य विशेष विचार ।
पंचम प्रस्तारादि हे, उदाहरन सविकार ॥ ६ ॥

ग्रंथ कारण—दोहा—

संवत उन्निश शत अधिक, एकेश ऋतु बसंत ।
फागुन शितयुत अष्टमी दिन दिनकर बिलसंत ॥ १ ॥
भो अनुभो सम पिंगला—दर्शसटीक समाप्त ।
बुधजन शुध कर लीजियो, दोष होइ जो प्राप्त ॥ २ ॥
सप्त पुरिन में यह पुरी, तासों सिंतर कोश ।
पूर्व दिशा में मोरवी, जहां नृप निति ज्यों ओस ॥ ३ ॥
ताको श्रीमाली बनिक कानजि सुत धीमंत ।
हरीचंद मनस्वि सो, जा पति कमला कंत ॥ ५ ॥

फिर्यो अठाइस वर्ष लों, दच्छिन ब्रज गुजरात ।
तानें कीनो ग्रन्थ यह, सब पिंगल सरसात ॥ ५ ॥

शार्दूल बक्रीडित छंद–

हीरा खाने यही मही महिं रही कोई कहों की कहीं ।
तामें नग बडो जु कोउ एत हेमें नीका अही ॥
तोऊ रत्न की जाति बज्रमयता जोहेरी सो जानहीं ।
का जाने अहिरा चरावत बछरा जो घास में सोवहीं ॥ ६ ॥

ग्रंथ प्रशंसा, दोहा–

बहुतेरे पिंगलनको, करकें मनमें स्पर्श ।
बुधजन पाछे देखियो, यही पिंगलादर्श ॥ १ ॥
जदपि अमूल्य बसन रतन, भूषन पहिरो कोइ ।
तदपि आरसी में दिखे, बिन संतोष न होइ ॥ २ ॥
पिंगल बहुत पढो बढो, बुद्धि सों बुध कोइ ।
तदपि पिंगलादर्शबिन, अतुल तृप्ति नां होइ ॥ ३ ॥
भावे तो यह एक हीं, पढो पिंगलादर्श ।
देखो पिंगल ओर सब, होइ न यह उत्कर्ष ॥ ४ ॥
मिस्त्री की अति मिष्टता, शुनिकें जानि न जोइ ॥ ५ ॥
खायें तें जानी परे, फिर पूछिबे कि नाइ ॥ ५ ॥
निर्जर ब्रजबासी अरु, गुजराती यह तीन ।
बोल सो भाषा मिलित, ग्रंथ चंदनें कीन ॥ ६ ॥

इति कवि हीराचंद कृते पिंगलादर्शे ॥ प्रस्तारादि वर्णनं नाम पंचमं दर्शनं ॥ ५॥ समाप्तोयं पिंगलदर्शः ॥ संमत् १६२६ का ॥ मिति फागणवदि ७ लिषतं गुलाब सहल ब्राह्मण ॥ लिषायत्तं महतावजी गाडण ॥ गांव गुदाड़वास का ठाकर बेटा आईदानजी का ॥ लिषतं बिसाहु मध्ये ॥

पत्र सं० ७१, प्रति पत्र पंक्ति १८ प्रति पंक्ति अक्षर १४, यंत्र कोष्टक आदि संयुक्त। गुटका साइज ८×६

[सीतारामजी बालव संग्रह]

३ अलंकार (नायिका भेद-रीति)

(१) ज्ञान शृंगार पद्य ३१२ र० सं० १८५१ वै० शु० २ गु०

आदि-

अथ ग्यान सिंगार लिख्यते ।

दुहा

शिव सुत आदि गनेश जय, सरावत हृदय सु धार ।
ग्यान बधै सिंगार रस, कर्यौं सुग्यान सिंगार ॥
शिवजू सदा अद्भुत रस, ता सुत ग्यांन निधान ।
तिन स्वरूप को ध्यान धर, दोहा रचे सुजान ॥
अद्भुत रूप अपार छबि, गनपत गहरो गांन ।
ताइ दया ते तास मैं, नवरस गुन जु बखान ॥
प्रथम नायका जात ए, च्यार भांत की मांन ।
पद्मन चित्रन संखनी, और हस्तनी मान ॥

× × ×

(पद्यांक १८४ तक नायिका फिर नायक लछन, मान भेद व ऋतु वर्णन है)

अन्त

अथ शिशिर वर्णन—

जगत कियो भयभीत अत, इहै ससिर के सीत ।
दंपत मिले विहरत सखी, लियै जु राफा रीत ॥
संवत ससि सिववदन भन, सिध आतमा जांन ।
सुध वैसाख गुर दूज दिन, भये ग्रन्थ परम्रान ॥

इति श्री । ·· ············

प्रति- गुटकाकार (नं० छ० ६, पत्र ३५ पं० १४) चित्र के लिये स्थान २ पर जगह छोड़ने के कारण पंक्ति का ठिकाना नहीं,) प्रति पंक्ति अक्षर २४ साइज ६×७ ।

[स्थान कु० मोती चन्द जी खजानची संग्रह]

(२) मधुकर कलानिधि–

आदि–

सवैया–

बानी जू हौ जगरानी महीपद पंकज रावरे जे नर ध्यावैं ।
से नर ऊषम दूष पियूष सनी मृदुका ला बरसावैं ॥
मान भरे गुन ग्यान भरे पुहमी मध दानन को ते रिझावैं ।
कीरति चंद्रिका चंद्र समान सभा नैम ते ईक विद्र कहावैं ॥

कवित्त–

अरथ अमोल मनि सुबर अलंकार ग्रन्थनि को राजही के गुननि गह्यौं करैं ।
मानि हान मानि दान दुज निस दाम वियरुध भक्ति लछि लखि सदा उलह्यौ करैं ।
सरस सिंगार कलकहड मकनि बनि राजै छबि छाजै छत्र ग्रौर निलह्यौ करैं ॥
साधु बंधु कृपासिंधु सत्य सिंधु माधवजू रावरे को सुरसुति से दवैं चह्यौं करैं ॥

× × ×

गुन रतनाकर नृप मुकुट, विलसत मधुकर भूप ।
निज मति उज्जवल करन मैं, कियो ग्रन्थ रसरूप ॥

अंत–

ये कीने हैं रस कवित, अपनी बुधि अनुसार ।
सौधि लीजियौ छमा करि माधवेस अवतार ॥

इति सारस्वतसारे मधुकर कलानिधि संपूर्ण ।
सं० १८५७ आ० व० ७–सोमवार
पत्र १३ पं० १७ अ–१८ पुस्तकाकार साइज ७॥ × १०॥

[स्थान–अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

वि० इसी प्रतिके प्रारंभ में प्रेमप्रकाश व्रजनिधि रचित है ।

(३) रसमोह श्रृंगार–कर्त्ता–दामोदर सं० १७५६ बुरहानपुर

आदि–

अथ रसमोह श्रृंगार लिख्यते

दूहरा

पहेलें गनपति नमनकरि । नमु व्रजपति तास ।
छौहरि सरस्वति नमनकरि, मागु बुद्धि प्रकास ॥ १ ॥

छप्पे

गणपति गुण निधिसार भार सिर कष्ट ही भज्जें ।
गणपति समरित रिद्ध सिद्ध, सुख संपति पुज्जे ।
गणपति रस्थत दुषम बिषम, बल बुद्धि उपज्जे ।
गणपति चिंतितं हित्त चित्त, वंछित फल हुज्जें ॥
गवरिनंद जयवंत सुकृत, भव काम दहन सुत शुभकरण ।
एक दंतवंत गजवदन सकल गुण, दास चित्त गणपति सरण ॥२॥

दोहरा

दक्षणदेश सुदेश हें और सब देशन को सार ।
अनधन मणि माणिक हीरा, सुसुगता को नही पार ॥ ३ ॥
तिहां पातसाहि करैं, महाबली मति धीर ।
चारु दिशा जिन वश करी, सु साहिब आलमगीर ॥ ४ ॥
तिहांनगर बुरानपुर वसतहिं, अरु अरु खांण देश को थान
दास वरण सबको बसें, पुन्य पवित्र सुग्यान ॥ ५ ॥

सोरठा

तिहां तापी तीरथ तीर, दास सुमरितहीं सबें ।
पायन रहे सरीर, वेद पुराण यु उचरें ॥

दोहरा

दास दमोदर नाम हें मूढ़ मती अग्यान ।
गुरु प्रसाद उपदेशतें, दीयो रंचिक स्यान ॥ ७ ॥
जिन गुरु अक्षर ही दीयो । सु पंडित परमानंद ।
अंचल गछमों सोभिजें, जो पुनिम को चंद ॥ ८ ॥
दास दमोदर चतुरकों, कीयो ग्रन्थ सो भात ।
पटुआ परम प्रसीद्ध हीं वीर वंस हें जाति ॥ ९ ॥
तिन इह ग्रन्थ विस्तारियों, सुभग सरल सुरंग ।
भूल्यो चूको कवीजनो, जिन आणो चित भंग ॥१०॥
संवत १७ सय. वरष छप्पन्नवा सुभसार ।
श्रावण सुदि तिथि पंचमी, वार भलो गुरु वार ॥

नाम धर्‌यो इह ग्रन्थ को, रसमोह सिंगार ।
दास दमोदर रसिक कुं, कीयो प्रेम को हार ॥१२॥
नौं हीं रस सबकौं कहैं, तामैं सुभ शृँगार ।
दास ताके रस बहूं, एक एक थें सार ॥१३॥

अथनवरस नाम वर्णनं–

प्रथम शृंगार[१] जो जानीये, दूजो करुणा[२] मान ।
तीजो अद्‌भुत[३] कहत हैं चउथो हास[४] वषाण ।
पांचो रुद्र[५] षट् वीर[६] सप्त भय[७] चित्त आनि ।
अष्ट विभिछ वषाणि हैं नोहों शांति[९] सुजाण ॥१५॥

अथशृंगार रस वर्णनं ॥ दो०

रस शृँगार के रस बहूं वरण २ हैं जोग ।
दास ताके रसनकुं, जाणे चातुर लोग ॥१६॥

अंत–

अथ राजसी नांयका को अभिसार वर्णनं

गति गजराज लीयें, तरंग के तुरंग कीये, विज्जुरी चिराग बिचिराग कीयें केंदरी ।
कुचतो निसान चीनें, पल्लव निसान लीयें, जल धार फोज भार अंग संग है भली ।
मन के मनोरथ हें, पाय दल पूरें सूरें, सुरति संग्राम कुतो बाम साच कें चली ।
निसकु दमामो घनघोरन को दीये दास, लीयें साज राजन ब्रजराजन जा मीली ॥ ६ ॥

दूहरा ॥ अथ भाई काको अभिसारिका ॥

दाउ परें पर भावसु, मिले हित्त करि आय ।
भाई काको अभिसारिका, बरण दास बनाय ॥ २८ ॥
दाउ परें पर दास चली अली संग लीयें ।
निकसी ब्रज प्यारी पीत पीतांबर काठ कछे– ।

आगे लिखते छोड़ा हुआ है। आगे मदन संवाद है। विहरीसतसइ सं० १७६४ लिखित है।

प्रति–गुटकाकार साइज ८॥। × ५॥। पत्र ८ पं० १५ अ. ४६

[अभय जैन ग्रन्थालय]

वि० प्रथम खंड-कृष्णराधा संयोग वियोग वर्णन पद्य २३
द्वितीय ,, के मग्न उपाव ,, पद्य ७०
तृतीय ,, अष्ट नाइका ,, पद्य २८ अपूर्ण

(४) रसविनोद—रचयित-प्रवीनदास सं० १८५३

आदि-

अंश अप्राप्य—

× × ×

अन्त-

मिलन मनोरथ-विकल, सो कहिय उनमाद ।
इसी अवस्था सरन हैं, तामैं कछु नकसाद ॥ ७६ ॥
यह संबर शृंगार कौ करनि रुनायौ रूप ।
थोरे में सब समझिये, बुद्धिवंत तुम थूप ॥
ग्रह इने हात जानी, संवत्सर त्रेपन अधिक ।
विक्रम ते पहचानि, जेट असित भृगु द्वादसी ॥

इति श्री महाराजाधिराज महाराज राजराजेन्द्र सवाई मानसिंघ हितार्थं प्रविनदासेन विरचितं रसविनोद संपूर्णम् ।

लिपीकृतं गढ गोपाचल मध्ये श्री..............

प्रति—गुटकाकार छोटी साईज, पत्र २० से २४ पं० ६ अ० १०

[अभय जैन ग्रन्थालय]

(५) सुखसार—रचयिता-कवि गुलाब (सं०१८२२ पौष. शु० १५अवंतिका)

आदि-

श्री गनैसायनमः अथ ग्रन्थ सुषसार लिष्यते ॥

दोहा मंगलाचरन ॥

गुरु गन पति बिध सारदा, श्री हरि मंगल हेत ।
कवि गुलाब बंदत चरन, सिवजू सिवा समेत ॥

"कवित्त मनहरन गनेसजू का"

नंदन श्री सिवजूके सिवाके सुखद अति ।
प्यारे प्रांन हूँ ते मारे मौन हैं गुनन के ॥
अेक दंत राजै भाल सिंदुर बिराजै चारु ।
चंद छबि छाजै काज साजै सुभ मन के ॥
आसु वरु आस नहैं नासन बिगन भूर ।
सासन जगत मानै पूरन हैं पन के ॥
बंदों गननायक सकल सुषदायक ।
(क) हैं सुकबि गुलाब कों सहायक सुजान के ॥

दोहा-

संवत जुग जुन गजससी, पौष पुन्यौं बुधवार ।
सुभदिन सोधि गुलाब'कवि, कियौ ग्रन्थ सुखसार ॥

अन्त-

गुन क्रम अपने बंसकौ, कैसैं कहौं प्रमांन ।
नांम रहत है ग्रन्थ मैं, याते करौं बषांन ॥ १ ॥
दिल्लीपत अकबर बली, राष्यौ जिनको मांन ।
अैसे कुलदीपक भअे, कुलमैं बकसनखांन ॥ २ ॥
बकसनषां के सुत भअे, लडूषांन सुजांन ।
सुत सुजांन जू के भअे, लायक भाईखांन ॥ ३ ॥
लाडषांन के सुत प्रकट, चार चारु गुन भौंन ।
चांदषांन जुनेदषां, रादू बाजिदषांन ॥ ४ ॥
चांदषांन के सुत उभै, जांनी कुंदनषांन ।
जिनके गुन अरु लायकी, जांनत सकल जहांन ॥ ५ ॥
कुंदनषां के तीन सुत, जेठे कालेषांन ।
तिनकी राजा रंकसौं, रही अकेसी बांन ॥ ६ ॥
लघु बंधौ तिनके सुमति, मगनषांन गुनगेह ।
बंस भागीरथ सर्थ सौ, सदा रष्यौ है नेह ॥ ७ ॥

कबि गुलाब सबते लघू, कबि कुलही कौ दास ।
किरपा सीतारांमतै, अरत अवंती बास ॥ ८ ॥
श्री राधा बाधा हरन, मोहन मदन मुरार ।
प्रगट करयौ निज प्रीत सुं, कबि गुलाब सुषसार ॥ ९ ॥
बिनती सुनौं गुलाब की, कबिता दीन दयाल ।
जहां जहां जो भूल है, लीजै आप सम्हाल ॥ ६ ॥

इति सुषसार ग्रंथे चित्रालंकार बर्ननं नाम चतुर्दस उल्लास ॥ १४ ॥
संपूरनं ॥ मास सांवन बदी १२ ॥ वार बुध अस्थांन अवंतिका ॥
पत्र सं० ७८, प्रतिष्ठ. पंक्ति १७। १८ प्रति पंक्ति अक्षर १८
गुटकाकार नं० छ. ४६। साइज ८ × ६॥।
[मोतीचंदजी खजांनची संग्रह]

(४) वैद्यक

(१) दउलति विनोद सार संग्रह—(वैद्यक) दौलतखांन

आदि–

श्रीमंतं सच्चिदानंदं चिद्रूपं परमेश्वरम् ।
निरंजनं निराकारं तं कंचिन्प्रणमाम्यहम् ॥
दोधकाधिक सद्वृत्तैः पाठैः पाठानुगैर्त्र रैः ।
शास्त्रं विरच्यते रुच्यं दृष्ट्वा शास्त्राण्यनेकशः ॥
दउलति विनोद सारसंग्रह नाम प्रगट पामाथी पत्र ।
से परोपकृत्यै सन्मने सुमते कवीन्द्राणाम् ॥
श्रीमद्वागडमंडलाखिल शिरः प्रोधत्प्रभामंडनाः ।
श्रीमंतो दिपखान भूपतिवरा नन्धाः सुरानन्ददाः ॥
तत्पट्टोदयसानुम नकरै भस्वित्प्रभाभास्करैः ।
श्रीमद्दऊलतिखान नाम वसुधाधीशैः सुधीशाश्रिमैः॥
(त्रिभिः कुलकम्)

तद्यथा दोहा–

धन्वन्तरि मुख वैध बहु सुद्ध चिकित्साकार ।
तनसुद्धिइ सुषि योग पथ लहइ संसारह पार ॥

ताथइ त्रिकछक योगविद पढइ चिकित्सा सत्थ ।
मुक्ति होइ पर भावि निपुण इहां चाहइ तउ अत्थ ॥
धर्म अर्थ अह काम कऊ साधन एह शरीर ।
तसु निसेगत कारणइ उद्यम करइ सुधीर ॥

२४ दोहे के बाद-

इति श्रीदऊलति विनोद सार संग्रहे दऊलति-
खांन नृपति विरचि निर्मितं वैद्यगुणाधिकारः ।

दोहा – १०१

ज्ञान परम कहु जोगी अंनइ कइ कुछु परम वैध बखानइ ।
ग्रन्थ विसेषि जिहां किछु पाया भूपति दऊलतिखान दिखाया ॥

इति श्री अलपखां नृपति सुत भूपाल कृपाल श्री दऊलति खान विनिर्म्मिते दऊलतिसार संग्रहे ।

चरम ज्ञानाधिकार सारः । फिर काल ज्ञान, मूत्र परीक्षा, नाड़ी परीक्षण-एवंच —

षोडशज्वर लक्षणसहित औषध क्काथ बखान ।
कह्या बागडदेशाधिपति नृप श्रीदऊलतिखान ॥

इति श्री बागड देशाधिपति श्री अलिपखाननंदन श्री दऊलतिखान विरचितं श्री दऊलति विनोदसार संग्रहे षोडशज्वराधिकार सारः ।

फिर अतिसार ६५ रोगों के ४१वें में कुल विंशति, ४२वें में शीतपित्ता-धिकार, ४३वें में अम्लपित्ताधिकार, ४४ विसर्पि, ४५ भूता-अपूर्ण ।

इति श्रीदऊलतिविनोद सार संग्रहे विसर्पिनिदानाधिकारसारः ।

बड़ा गुटका पत्र ३६७ से ३६७ पं. २४–२५अ. ४०।४८ (१७ वी शताब्दी व १८ वी प्रारम्भ) ।

[अनूप संस्कृत लाइब्रेरी]

(२) वैद्य चितामणि (समुद्र प्रकास सिद्धान्त) जिन समुद्र सूरि

आदि-

प्रथम पत्र नहीं ।

मध्य-

इति श्री समुद्र प्रकास सिद्धान्ते विद्या विलास चतुष्य दिकायां वर्षा रि० समाप्त मिति ॥ कुल पत्र ५.

पत्र ६ में, ग्रंथ अपूर्ण । अंतिम पंक्ति इस प्रकार-

"तालू रोग पिण नब सर्वथा नव विध वली कपाल नी वृषा होव रोय भेदे छैं आठ कंठरोग अष्टादश पाठ ५ ॥

आदि-

दूहा आसावरी =

॥ ६ ॥ श्री गुरुभ्यौनमः श्री भारत्यैनमः ॥

सकल स सुक्खदायक सकल, जीव जंतु प्रतिपाल ।
नाम ग्रहण वांछित फलत, टलत सकल दुख जाल ॥ १ ॥
श्रीगोडी फलवद्धिपुर, आदिक तीरथ जास ।
पार्श्व प्रभू पृथिवी प्रसिद्ध, पूरण वांछित आस ॥ २ ॥
पंच वरण दे नाग कुं, कीयो धरण को इंद ।
जादव सैन्य जरा हरण, प्रणमुं जगदानंद ॥ ३ ॥
तास वदन ते उपनी, सरसति सरस सुवांण ।
ताको ध्यांन धरों रिदै, जिम कारज चढै प्रमांण ॥ ४ ॥
सगुरु जिनेश्वरसूरि पद नायक जिणचंदसूरि ।
ताके चरण कमल नमूं, धर चित आणंद पूरि ॥ ५ ॥
पति उपकार तणी रिदै, धरी आण चित चूंप ।
रचौं वेद्य के काज कों, वैद्यक ग्रन्थ अनूप ॥ ६ ॥
वैद्य ग्रन्थ पहिली बहुत, हैं पिण संस्कृत वाणि ।
तातइं मुगध प्रबोधउं, भाषा ग्रंथ बखांणि ॥ ७ ॥
वाग्भट सुश्रुत चरक, फुनि सारंधर आत्रेय ।
योग शतक आदिक वली, वैद्यक ग्रन्थ अमेय ॥ ८ ॥
तिन सबिहुँन को मथन करि, दधि तैं ज्युं घृतसार ।
त्यों रचिहुँ सब शास्त्र तें, वैद्यक सारोद्धार ॥ ९ ॥
परिपाटी सवि वैद्यकी, आमनाय सशुद्धि ।
वैद्य चिंतामणि चोपई, रचहूं शास्त्र की बुद्धि ॥ १० ॥

रोग निदान चिकिच्छका, पथ क्रियादिक तंत ।
नाम धरयो इन ग्रन्थ को, श्री **समुद्र सिद्धंत** ॥ ११ ॥

प्रथम देश व्यवस्था कहता हौं–

चोपई–

प्रथम देश त्रिहि भांति वखाण, जांगुल अनूप साधारण जाण ।
पित्त वाय अनुक्रम संही, त्रिणि देसा की प्रकृति कही ॥ १ ॥
जांगुल देश पित × × × × ×

अपूर्ण

प्रति–प्रथम पत्र ही प्राप्त

[जैसलमेर बड़ा भंडार]

(५) संगीत

(१) रागमाला । गिरधर मिश्र ।

आदि–

करि प्रणाम हरि चरण कुं दुख नासन सुख चित्त ।
होति सुमति जाकइ पढत, रागमाल सुनि मित्त ॥ १ ॥
या प्रमदा जिन राग की, तास्यूँ ताहि सयोग ।
अवर राग . संगतइ, गावत पढत वियोग ॥ २ ॥
समय विना हरि दरसतइ, उपजत रोष प्रत्यंग ।
तहंसइ राग समय विना, करत होत मति भंग ॥ ३ ॥
प्रात समइ भइरु कगे, मालव सूर उद्योत ।
प्रथम याम हिंडोल कउ, याम दीप द्वे होत ॥ ४ ॥
निसा आदि श्रीराग को, समयो कहइ प्रवीण ।
मेघराग मध्य राति विण, गावइ सो मति हीण ॥ ५ ॥
× × × ×

अन्त–

पूरव कविकृत देखि कइ, **गिरधर मिश्र** विचार ।
रागमाल रूपक रचे, सत कवि लेहु सुधार ॥ ५८ ॥

इति संगीत सारोद्धार मिश्र गिरधर विरचित रागमालायां दीपक राग-रागिणी निर्णय सप्तमांक ॥ ७ ॥ इति रागमाला ॥

वि. १. रागरागिणी निरूपणो प्रथमांक।
,, २. भइरव रागरागिणी निर्णयो द्वितीयांक।
,, ३. मालव कौशिक रागरागिणी निर्णये तृ०।
,, ४. हिंडोल रागरागिणी रूप निर्णये चतुर्थांक।
,, ५. श्रीराग रागरागिणी रूप निर्णये पंचमांक।
,, ६. मेघ रागरागिणी रूप निर्णये षष्टांक।

पत्र १ यति बालचन्दजी, चित्तौड़। लेखन- १८वीं शती।

(६) नाटक

(१) कुरीति तिमिर मार्तण्ड नाटक। ८. रामसरन

दूसरी प्रति पत्र १२१-७२-१२६-४१३=७३२।

आदि- अथ कुरीति तिमर मार्तण्ड नाटक।

दोहा-

नमो नामि के नंद कौ, विघन हरन के हेत।
सकलन सिद्ध दाता रहैं, मन वांछित सुख देत ॥१॥

परमात्मा स्तुति - गजल बखानजी,

+ × +

सूत्रधार (आकाश की ओर देखकर)।

ओह हो, देखो, क्या घोर कलिकाल प्रगट हो रहा है। प्राणी अन्याय मार्ग में कैसे लीन होरहे हैं। खोटे कार्य करते भी चित्त में लज्जा नहीं आती है। ये सम्पूर्ण अविद्या का प्रभाव है। धन्य, विधाता तेरी शक्ति, तेरा चरित्र अगाध है। इसमें चुप रहने का ही काम है।

× × ×

अंत-

फरुखाबाद निवास जिन, अपन धर्म लवलीन।
निवसत मनसुख राग तहां, आयुर्वेद प्रवीन॥

रामसरन तिनका तनुज, जिन चरणाम्बुजदास ।
ताने ये नाटक रच्यो, करत कुरीति विनास ॥
शब्द अरथ की चूक को, बुधजन कीजै गह ।
कटुक वचन लख या विषय, कीजे रेचन वुद्ध ॥
कोई जीव अनिष्ट को, इक मन हरषात ।
तिनसे है कछु भय नहीं, करै अणुगती बात ॥
चैत्र गुण पाही दिना, पूर्ण हुआ ए लेख ।
काय वाच ग्रह रवि मिले, सम्वतसर को देख ॥

इति कुरीति तिमिर मार्तण्ड नाटक सम्पूर्णम् ।

यह नाटक लिखाया पण्डितजी मांगीलालजी (..........................) ।

क. ३ क. सं. १६ से ४५ तक । पत्र ३६ पुस्तकाकार पं. १८ अ. १८ ।

[मोतीचन्दजी खजानची संग्रह]

अथ ज्ञानानंद नाटक लिख्यते—लछीराम

देव निरंजन प्रथम बखानो, गहि व्योहारु गनेसहि मानौ ॥ १ ॥
बहुरि सरसुति विष्णुउ संभु, सुमिरि कर्यौ नाटक आरंभ ।
लछीराम कवि रसविधि कही, अरथ प्रसंग मिघो तिनि लही ॥
नाटक ज्ञानानंदु बखान्यौ, ज्यौं जाकी मति त्यौं तिनि जानौं ।
देसु भदावर अति सुखु वासु तहां जोइसी ईसुर दासु ।
राम कृष्ण तान्के सुत भयौ, धर्म समुमुद्र कविता यसु छयौ ।
तिनके मित्र सिरोमणि जानि, माथुर जाति चतुरई खानि ।
मोहनु मिष सुभग ताको सुतु, वसै गंभीर सकल कला युतु ।
पुनि अवधानी परम विचित्र, दोऊ लछीरामसो मित्र ।
तीनों मित्र सने सुखु रहें, धनि प्रीति सब जगके कहें ।

अथ लछीराम वृत्तान्त कहियतु है—

जमुना तीर भई इक गांऊं राइ कल्यान वसै तिहि ठांऊं ।
लछीराम कवि ताकै नंदु, जो कविता सुनि नासै दंदु ।

राइ पुरंदर करे लघु भाई तासौ मित्रनि बात चलाई ॥
नाटक ज्ञानानंद सुनाऊं, देहु सुखनि अरु तुम सुख पाऔ ॥

× × ×

अंत-

सब मै अपु मै सबै, सुनो. भेद कछु नाहि ।
ज्यों स्यो तनु मनुधर रहैं धरस्यौं तत मन मांहि ।
या अंत के दाके अर्थ को जानु होई सोई जानियो ॥

इति ज्ञानानंद नाटक, लछीराम कृतं समाप्तम् ।
संवत् १७२७ वर्ष वैसाख, पत्र १४ पं० ८ अ० ४१

[अनूप संस्कृत लाइब्रेरी]

(३) प्रबोध चन्द्रोदय नाटक । घासीराम । सं. १८३६ ।

आदि-

अथ प्रबोध चन्द्रोदय नाटक लिख्यते—

लंबि कपोलनी कुला हरन कर कदंब रोलंब ।
नमत चरण हेरंब भभु (श्वश्रु) क जे प्यारे जगदंबा ॥
हरिहर सरस्रुति करैं नमन सदानन्द गुनपूर ।
सौं सार ताप हारक महत विघन निवारक भूर ॥
जिनकी कृपा कटाछ तें, होत ग्यान परकास ।
तो ता ध्यावै गुरुचरण, सकल गुननि की रास ॥
वीनती घासीराम की, सुनौ व्यास भगवान ।
उद्घाटक फाटक हृदय, दीजै नाटक ज्ञान ॥

+ × +

कवित्त महाराव वर्णन-

बोलनि कै समै देवगुरुसै विराजमान दान देवै काज राजतने अंशुमंत है ।
जुद्ध न के समथ महाधीर गम्भीर मन जीतवार जंग कै अनंत कौ हनंत है ॥
धीरवंत सोभत है महावीर घासीराम भागवंत मांह सोभैं महाभागवंत हैं ।
धर्म एसे नीतवंत चिरंजीव राज राज, तिनके समान महाराव जसवंत हैं ॥

दोहा–

एक विलंबि सत्रह शतक १७०० यक सुदिवस वसंत ।
संवतसर गुन अष्टमू १८३५ रच्यौ ग्रन्थ श्रीमंत ॥

वार्ता–

जे मानवी शास्त्र में प्रवीन अध्यात्मज्ञानसौं निपुण परंत प्रबोध ते विमुख तिनके निमित्त कृष्णदत्त मिश्र या ग्रन्थ के बहाने अनुभव का प्रकास प्रकट करते हैं—

(इनके प्रत्येक श्लोक देकर उसका हिन्दी में पद्यानुवाद है–)

× × ×

अन्त–

निकसे स्वांगी सब बहिर पूरे ग्रन्थ बनाय ।
.... आशिष दये राजा कौ सुखेपाय ॥९५॥
घासीराम सुत जुगतमणि भाखा रच्यौ बनाय ।
चूको होय कहुँ कहु देहु सुधर समुझाय ॥९६॥
जान राव राजा सरस गुनि जन के शिरताज ।
देग तेग ते बरन कयौं निष्कटंक बलराज ॥९७॥
महाराव जसवंन्त अब तिनसुत करता राज ।
दिसि २ बरणो सुजस जिन बड़े गरीब निवाज ॥९८॥
महाराव जसवन्त की पहिले हुती निदेस ।
रचौ तिवारी नाटकै रचौ न तामैं लेस ॥९९॥
सम्वत् अठारासै छत्तीस सुक सत्रह स तारक ।
कातिक वदि रवि पंचमी अब्द दिवारी लेख ॥१००॥
पूरण कीन्हों ग्रन्थ यह जानै उत्तिम ज्ञान ।
बांचै नासै मूढ़पन अन्त होय निर्वान ॥
मांगत घासीराम दछिना महाराव प्रभु पास ।
सुख सो चाहत हैं वसो विट्ठल प्रभु के पास ॥

समस्त गाथा ६४८।

इति श्री श्रीमंत महाराव जसवन्त विरचिते समश्लोकी भाषायां प्रबोध चन्द्रोदय नाटके उपनिबध देवा पर शास्त्र-संवाद वर्णनं नाम षष्टम अंक समाप्तः ॥

सं. १८३७ शाके १७८२ शर्वरी नाम सवत्सर प्रति पत्र ६०, पं. १२ अ. ३२।

[स्थान बृहद् ज्ञान भण्डार]

(६) कथा

(१) गणेशजी की कथा। हुलास

आदि-

संकट मरदन करौ गौरी सुत गणेश।
विघ्न हरन अरु सुभ करन काटन सकल कलेश ॥
सुमति देह दुर्मति हरन काटन कठिन कलेश।
सुरनर मुनि सुमिरत रहै प्रथम नाम गणेश ॥ १ ॥

दोहा

सुमिरन करि गणेस कौं हरि चरनन चित्त लाई।
संकट चौथि महिमा सुनी, कथा कहौं समुझाई ॥

अंत-

दोहा

गण नायक की कथा यह संसे कीर्ती मद्धि विलास।
जथा बुद्धि भाषा रची जडमति दास हुलास ॥ ४२ ॥

इति श्री गणेशजी की कथा संकट चौथि व्रत संपूर्ण।

संवत १८८७ ना वर्षे महा मासे शुकल पक्षे द्वितीया तिथौ २ सनौ वासरे लि० मु० रंगजी।

प्रति परिचय-पत्र१२ साइज ८॥×४॥ प्रति पृ० पं० प्रति पं० अ०

[राजस्थान पुरातत्व मंदिर, जयपुर]

(२) चित्रमुकट कहानी ।

चित्रमुकट की बात लिख्यते ।

चौपई-

नख गणपति के बहि जइये, प्रथम वीनती वनकी करिये ।
अलख निरंजन को है पारा, वा साहिब गुरु जानि हमारा ॥
वा कारन विधना संसारा, बहुत जन करि आप सवारा ।

दोहा-

दिन नहीं थारो हूजिये, गनपति गहिये बाह ।
अन्त जानन ही दीजिये, रखिये हिवरा मांह ॥

\+ × +

देखो प्रेम प्रीति की बानी, "चत्रमुकुट" की सुनु कहानी ।

\+ × +

अन्त-

देखो प्रेम प्रीति की बानी, चत्रमुकुट की सुनु कहानी ।

दोहा-

प्रीति रीति वरनी कथा, तुकै पुछै सोहि ।
प्रेम कहानी नांव धरि, प्रगट कीनी तोहि ॥३४०॥

चौपाई-

चत्रमुकट था राजकवारा, नग्र उजीनि में सब कुं प्यारा ।
अनुप नग्र की सोभा भारी, चन्द्र क्रन है राजदुलारी ॥
जिनकै बीचि थाह मब सही, जिनकी बानी लागै मीठी ।
विधना ऐसा जोड़ा बनाया, दोऊ मिल पन्छी जस आया ॥

दोहा-

साच-झूठ की गम नहीं, सुनी कर कियान ।
भूल-चूक कु सुध करो, ग्यानी चत्र सुजान ॥
दुख दिखाई फिर सुख दीया, ऐसा है करतार ।
नहंया निरमल चाहिये, साईं बुझै सार ॥

इति श्री प्रेम कहानी समाप्ता।

सम्वत् १८७१ मिति श्रावण शु. ८ बुधवासरे। लिखतं चौथमलजी आत-मार्थम्। लिपिकृतं महात्मा फतेचन्द जैपुर मध्ये।

प्रति-गुटकाकार पत्र ३०, पं. १७ अ. १६ साइज ८॥ × ६॥

[अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(३) छीताइवार्ता—रचयिता-नारायणदास।

आदि-

प्रारंभ के ५ पत्र नहीं होने से त्रुटित है, छठै का प्रारंभ—

मध्य-

दैहस्ति तुरंग, चलै हि जनि सुरतखान के संग।
नगर दुर्गपुर पाटण नगर रहिन सकै तुरकन कै वघर।
बहुत वात का कहौ बढाई, उतरे मीर देव गिर जाइ।
धावइ तुरक देह महिथार, उबरै राउ दीह वरनारि॥
सुवस कहौ जे गांवों गांव, तिनके खाज मिटाए ठाउ।
हांकिन मिलइ मीड ए आइ, कांधो टेकि तिह देहि कवाई॥ ६३ ॥
प्रजा भागि साथ द्रिढ गई, देवगिर सुधि रामदेवलही।
चित चिंता जव अपनी राइ, सब विसयाने लिए बुलाइ॥ ६४ ॥

अन्त-

जिह दिन मिली कुअरि सुंदरी, ढोल समुदगढ पहुनी तीरी।
चढि चकडाल छिताइ राइ, धावनि खबति करी तिहा आइ।
सासु सुसरा आगइ जाइ, जानु वसंत रित फूली भाइ।
छाजे छत्र नवतने कराई अनूप, अतिह आनंद भयौ सबभूप॥
आगइ होइ राइ भगवानो, आगइ सुरसी कुंअर सुजांनो।
कौतिक लोग आए जहांन, जो कुछु दस विदेस सुजान॥
ठाई २ मंगल गावइ नारि, रहइ चतुर सुनि वात विचारी।
ठाई २ तरुणी नाचई काल, ठाई २ निरत करइ भूआल॥

देखत सुरनर मोहै हीइ, अइसी भांति दान बहु दीई ॥
घरि २ आवो सु'रसी राइ, नराइणदास कहै उछाहि ॥

इति छिताइवार्ता समाप्त ।

ले–संवत १६४७ वर्षे माघववदि ६ दिने लिखतं चेला करमसी साहरामजी पठनार्थं ।

प्रति–गुटकाकार साइज १०॥ × ६॥ पत्र ६ से ३६,

पं० १७, अ० ४०, स्थान–बृहद् ज्ञान भंडार बीकानेर वि० पद्यांक ६४ के बाद अंक नहीं दिये । बीच में पद्यांक नहीं दिये पत्रांक १३,१६, १७, नहीं पत्रांक २६ एक तरफ ही लिखित ।

(४) **नंद बहुतरी** (दोहा ७३), रचयिता–जसराज (जिनहर्ष) सं० १७१४ काती··· वील्हावास'

आदि–

सबे नयर सिरि सेहरो, पुर पाडासी प्रसिद्ध ।
गढ मढ मंदिर संपत भुंइ, सूसर भरी समृद्ध ॥
सूर वीर मारण अटल, अरियण कंद निकंद ।
राजत है राजा तहां, नंदराइ आनंद ॥
तासु प्रधान प्रधान गुण, वीरोचन वरीयाम ।
एक दिवस राजा चल्यौ, ख्याल करण आराम ॥ ३ ॥
कटक सुभट परिवार स्यौं, चढ्यौ राइ सर पाल ।
वस्त्र देखि तहां सूकतै, ऊभौ रह्यो छंछाल ॥ ४ ॥
इक सारी तिहि वीचि परी, भमर करत गुंजार ।
नृप चिंतैया पहिरि है, साइ पदमणि नारि ॥ ५ ॥
× × × × × ×

अंत–

खुसौ भयो नृप सुणत ही, बहुत बधारूं तुज्झ ।
सांमि धरमी तुं खरो, साचो सेवक मुज्झ ॥ ७० ॥
ताहि दीयो परधान पद, बाजी रही सुठाह ।
अरि मरदन मांन्यो बहुत, प्राक्रम अंग उछाह ॥ ७१ ॥

पुन्य पसायै सुख लह्यौ, सीधा वंछित काज ।
कीनी नंद बहुरी, संपूरण जसराज ॥ ७२ ॥
सतरैसै चवदोतरै, काती मास. उदार ।
की जसराज बहुतरी, वील्हावास मझार ॥ ७३ ॥

इति श्री नंद बहुतरी दूहा बंध वारता समापता ।
पत्र २, पं० १६, अक्षर ५०,

[अभय जैन ग्रंथालय]

(५) माधव चरित्र । र. जगन्नाथ । सं. १७४४ । जेसलमेर ।

आदि-

॥६॥ श्रीगोपालजी सत्य छैजी ॥ श्रीगुणेशायनमः ॥
अथ माधव चरित्र री वात लिखते ॥

कवित्त-

मुगट शीश जगमगत, चपल कुंडल° दग चंचल ।
वेणुनाद मुखवाद, भाल वणि आड निरम्मल ॥
कटि काछिन तन खौर, दौर पग नूपुर रुमझुम ।
गुन्जहार वनमार, पीत दामिनी जानौं तन घन ॥
सिंगार विविध शोभित शुभग, राधा हास विलासवर ।
गिरिराज धरन तारण सुजन, जगन्नाथ नित ध्यान धरि ॥ १ ॥

अन्त-

दूहा-

इहि माधव कामा चरित, विविध भेद रस हेर ।
हुइ हरखत जगन्नाथ कवि, कीनो जेसलमेर ॥ ५०९ ॥
जेसलमेर उतंग गढ़, पुर सुरपुर हि समांन ।
तिनिमौं सब जग सुख बसै, ताकौं करौं बखांन ॥ ५१० ॥

कवित्त-

कन्चन वरन उतंग, वंक जानौं लंक विराजित ।
भुरज उरज अति भ्राज, भवन त्रय महिमा गाजत ॥

मधि कोठार भण्डांण, विविध महिलाइत मंदिर ।
अति उतंग आवास, अजब चित्राम सु इंदिर ॥
ओपमा अमल राजित सदढ, जांनौं सुरपुर लाजिहैं ।
जगन्नाथ कहै **जेसांणगढ़**, तहां **अमरेस** विराजि हैं ॥ ५११ ॥

दूहा—

तहां राजै रावल **अमर**, वंस रुप खटत्रीस ।
करन जिसो दाता सुकृत, तेज जिसो दिन ईस ॥ ५१२ ॥
ख्याग त्याग वडभाग जस, ओपम नृमल सुरेस ।
सब गुन कौं चाहक सरस, कहीयत **अमर** नरेस ॥ ५१३ ॥
पाट कूंअर **अमरेस** के, जसवन्तसंघ सुजाव ।
गुंनी बहुत आदर लहै, चातुर मौज सुचाव ॥ ५१४ ॥
रावलजी के राज मौं, सब जन सुखी उलास ।
ग्यांन चातुरी भेद रस, सदा रहत चित हास ॥ ५१५ ॥
तिनकी छाया वसतु है, जोसी कवि जगन्नाथ ।
लिखत पढ़त नित हरख नित, गहति गुनन की गाथ ॥ ५१६ ॥
दैंत **अमर** आदर सदा, रीझ मौज दातार ।
ताहि मया तें चित हरख, कीनौं ग्रन्थ विचारि ॥ ५१७ ॥
सरस छंद भाखा सुगम, कीयौ बहुत गुनगाथ ।
द्विज माधव कांमा चरित, रच्यौ सुकवि **जगन्नाथ** ॥ ५१८ ॥
सम्वत् सतरै सै वरस, वीते चउतारीस ।
जेठ शुकल पूनिमि दिवसी, रच्यौ वारि दिन ईस ॥ ५१९ ॥
ता दिन यह पूरन करयौ, माधव चरित अनूप ।
रच्यौ ज भाखा सरस रस, सुनि सुनि रीझत भूप ॥ ५२० ॥
यह माधव कामा चरित, सीखै सुनै ज कोई ।
ताहि कौं हरिहर अमर, मदन प्रसन नित होइ ॥ ५२१ ॥

इति श्री माधव चरित कथा जोसी जगन्नाथ कृत सम्पूर्ण ॥ सम्वत् १८१६ भाद्रवा सुदी १२ दिने लिखितं ।

स्वेतांबरी पं. भगवांन सागरेण, माहेसरी वशे वीसांणी सा ।
जसकरण पुत्र सुखरांम वाचतार्थैः ॥ श्री जेशलमेर मध्ये ॥
रावलजी श्री अखैसिंघजी कुंअर श्री मूलराजजी राज्यात् ।
शुभं भवतुः कल्याण मस्तु लेखक पाठकयो चिंरजीयात् ॥ श्री ॥

मूल प्रति जेसलमेर डुंगरसी भक्ति भंडार ।

[प्रतिलिपि सादूंल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट]

(७) **शिव ब्याह** । पद्य ३७३ । कर्ता भुजनरेश महाराउ लषपति सं० १८१७ सावण सुदी ५

आदि-

एक रदन आनंदघर, दुखहर शिवसुत देव ।
प्रांजलि लषपति पैं कृपा, निजरि करहु नितमेव ॥ १ ॥
शिवरानी जानी जगत, बरनत हौं तुव ब्याह ।
सेबक लषपति कै सदा, अविचल करि उछांह ॥ २ ॥
महिमानी माता तुह्मैं, बह्मानी बरबीर ।
भवा भवानी भारती, रछा कर लषधीर ॥ ३ ॥
भुव्व धरिनी करनी भई, शिव घरिनी सुषदाय ।
हरिनी दुषकी हौ सदा, पूजित सुरनर पाय ॥ ४ ॥
मेरे मन मांही सदा, बसौ ईसुरी बास ।
लषपति सेवक सुद्रिग लषी अषिल सफल करि आस ॥ ५ ॥

अंत-

इह प्रकार जग ईस जोग तजि भोग सुभीन्हौ ।
नेम छांडि छांडि वन माँभि नाँच नारी पैं कीन्हौ ।
चंचल द्रिगकरि चित्त चतुर सबरीकौं चाही ।
ब्रह्म आदि सुर संग आय उमया कौं ब्याही ।
आनन्द भयौ अंग अंग अति, भुवन तीन संतिति भरन ।
किरतार सदा लष धीर के सफल मनोरथ सुषकरन ॥७१॥

सुनैं पढैं सुग्याननर, सुभ यह शिवको व्याह ।
सकल मनोरथ सिद्धि कर, अचल हौहिं उछाहु ॥७२॥
संवन ठारह सैं उपरि सत्रह वर्ष सुजान ।
सावन सित पाँचैं सु कर पूरन ग्रन्थ प्रमान ॥७३॥

इति श्री मन्महाराउ लषपति विरचित सदा शिव व्याह संपूर्णं ॥

संवत् १८५७ ना वर्षे शाके १७२२ प्रवर्त्तमाने श्री माघ मासे कृष्ण पक्षे ११ एकादशी तीथौ चन्द्र वासरे लिषितं पं०। श्री १०८ श्री विनित कुशलगणि तत् शिष्य श्री श्रीज्ञानकुशलगणि लिषीतं तत् शिष्य पं०। कुअरजी वाचनार्थं लीषितं श्री भुज नगरे लीषितं ॥

पत्र संख्या ३३ । प्रति-साइज ११ × ५। पंक्ति ११ । अक्षर ३० ।

[राजस्थान पुरातत्व मंदिर जयपुर]

(७) ऐतिहासिक काम

(१) **कामोद्दीनपन- पद्य १७७ । रचयिता-ज्ञानसार । रचनाकाल- सम्वत् १८५६ वैशाख सुदी ३ जयपुर ।**

आदि-

तारिन में चन्द जैसे ग्रहगन दिनन्द तैसे, मणिनि में मणिंद त्यों गिरिन गिरिन्द यू ।
सुर में सुरिंद महाराज राज वृन्दहू में, माधवेश नन्द सुख सुरतरु सुकन्द यू ॥
अरि करि करिंद भूम भार कौ फणिंद मनौ जगत कौ, वंद सूर तेज तें मंद यू ।
आशय समन्द इन्दु सौ नुन्द ज्याकौ मदन कर गोविन्द प्रतपै प्रताप नर इन्द यू ॥

अन्त-

ग्रन्थ करो षट रस भरो, बरनन मदन अखण्ड ।
जसु माधुरिता तैं जगति खंड खंड भई खण्ड ॥ १७५ ॥
सुघरनि जन मन रस दियें रस भोगनि सहकार ।
मदन उदीपन ग्रन्थ यह, रच्यौ रुच्यौ श्रीकार ॥ १७६ ॥
जग करता करतार है, यह कवि वचन विसाल ।
पै या मति को खण्ड दै, हैं हम ताके दास ॥ १७७ ॥

विषय- जयपुर के महाराजा प्रतापसिंह का अलंकारिक वर्णन ।

[प्रतिलिपि- अभय जैन ग्रन्थालय]

(२) गोकुलेश विवाह—जगतनंद

आदि-

श्री गोकुलेशो जयति। अथ विवाह छप्पय।

श्री वल्लभ पद कमल युगल निर्मल द्रुति भ्राजे।
श्री गोकुल अवास्त पास सुखरास विराजे॥
माचरवाद विहंडि चन्ड शत खंडि खंडि किय।
दुर्जन मुख विदला नटज्ज्वल उईवशा फलोदहिय॥
अति उदार सुखरूप लाखि भक्तन हित वपु अपुधरण।
जगतनन्द आनन्दकर श्री गोकुलेश अशरण शरण॥
प्रगट भये विट्ठलनाथ के, श्री वल्लभ सुरराज।
शरण पुरुषोत्तम लखे, करत भक्त के काज॥
गोकुलेश निज ईश को, मथुर मध्य विवाह।
जगतनन्द आनन्द सो वरनत चित उत्साह॥
सम्वत् सोरह से सुखद वरखै लखि चोवीस।
वद अषाढ़ गुरु द्वेज को, व्याहे गोकुल ईस॥
चंडना वेणभर सो वाते कहा बनाय।
तुम्हरे कन्या रत्न है सो दीजो चितलाय॥
श्री वल्लभ सब गुन भरे, विठलेश के नन्द।
विठलेश विनती करत, आहो भर सुख कन्द॥

× × ×

अन्त-

चित विचारत चोस निसि, करि करि उतम छंद।
मगन भयो प्रभु प्रेम में, वरनत कवि जगनंद॥
कवि सबसों बिनती करत, भक्त सुनो चितलाइ।
भूलो चूको होई सो, दीजो अबे बनाइ॥
गोकुलेस की व्याह की, लीला अगम अपार।
जगतनंद तितनी कही, जितनी मति अनुसार॥

भक्त हियै में धारि कै, और जानि की रीति ।
लोक वेद संगत लिये, प्रभु चरनन की प्रीति ॥
यथा सकति कविता कही, प्रभु के नामे आय ।
जग (त) नंद करि जानियौं, अपनौ गोकुल नाथ ॥

मितिका छंद ।

इति श्रीमद्गोकुलेश पादपद्मपादुके शरज अंजलिसरंद बुधि सदा सेवके जगनंद कविराज विरचिते श्रीगोकुलेशचरिते सुखविवाहलीलावर्णनं नाम तृतीय प्रकरणं समाप्तमिति-शुभं भवतु-कल्याणमस्तु । शुभं भूयात् ।

ले-संवत् १६२६ आपाढ़ वदि १ भृगुवार-

प्रति पुस्तकाकार पत्र ६१ पं० १० अ० १४ साइज६×६

[स्थान-अनूपसंस्कृत पुस्तकालय]

(३) प्रथीराज विवाह महोत्सव । पद्य ५२ । लिखमी कुशल । सं० १८५१ वैशाख वदी १०

आदि-

छंद पद्धरी

संवत अठारसें अेकाबन्न वैशाख मास वदि दसम दिन्न ।
हिय हरष थापि थप्यौ जु व्याह अवनी कछ लोक निहुअ उछाह ॥ १ ॥
सुचि मज्जन सांमा किय सु अंग चरची षस बौई चंग चंग ।
पो साषदेव वस्त्र जु पुनीत गावैं तिनकी छवि सकल गीत ॥ २ ॥
रंगी सु केसरी पाव रंग शुभ थापी अविचल सीस संग ।
मनि जटित सु यापे थप्यौ मौर ठहराई किलगी मध्य ठौर ॥ ३ ॥

अन्त-

बैठे सिंहासन बिबिध ग्यांन बहु करै ब्याह के जे बिधांन ।
दुज सकल सफल आसीस दीय पछिम पति तिहिं पर नाम. कीय ॥४९॥
भोजन कीन्हे वहु भांति भांति पावत जुब राति बैठि पांति ।
परस परी करी पहरावनीय भई बात सबैं मन भावनीय ॥५०॥

इति श्री महाराउ कुमार श्री प्रथीराज विवाहोत्सवः पं० लिषमी कुशल कृत संपूर्णः ॥ पठनार्थं चेला सोभाग चंद ॥ दुर्ल्लभेन लि०

प्रति परिचय-पत्र ६ साइज १०॥।×४॥ प्रति पृष्ठ पं० १० प्रति पं० अ० ३४

प्रति नं० २, पत्र संख्या ४, साइज ८×४॥ प्रति पृ० पं०१३ अ० ४६

अन्त-

इति श्री महाराउ कुमार श्री पृथ्वीराज विवाहोत्सव पं०। लिषमी कुशल कृत संपूर्ण लिखितं (पं०) कीर्ति कुशल गणि। वाचनार्थं चिरंजीवी गुलालचंद तथा रंगजी श्रीमान आ मध्ये। श्री सुपार्श्वजिन प्रसादात।

[राजस्थान पुरातत्व मंदिर, जयपुर]

(१) नाटक नरेश लखपत के मरसीयां। पद्य संख्या ६०। कुंअर कुशल सूरी। सं० १८१७

आदि

अथ श्री महाराउ लषपति स्वर्ग प्राप्ति समय वर्णनं

दोहा

दौलति कविता देत है दिन प्रति दिन कर देव।
कविजन याते करत हैं सुकर सफल सुभचेव ॥ १ ॥
सकल मनोरथ सफल कर आसा पूरा आप।
सुषदाई दरसन सदा निरषत हौहि न पाप ॥ २ ॥
आई श्री आसापुरा राजत कच्छधर राजि।
तुम कच्छपति कौ देत हौ बहु दौलति गज बाजि ॥ ३ ॥

कवित्त छप्पय

वरस इक वन बिमल अनुज प्रभु के जब आये, पूरन आयु प्रमांनि किये तब मन के भाये।
तुला करि तिहिं समय दांनहु जगन कौं दीन्हें, प्रजा नृपति हित पुन्य किये श्रवननि सुनि लीन्हे ॥
तप जप अनेक सुभता सहित ध्यान सदा शिव कौ धरयौ।
पातिक पजारि सब पिंडके कुंदन तैं उज्वल कर्यो ॥३३॥

पुनः छप्पय

संवत ठारहि सतनि उपर सत्रह बरसनि हुव
जेठ मासि सुदि जांनि पूरनातिथि पंचमि धुव

बार अदीत बनाउ और नष तर असलेषा
जबैं सुहरषन जोग राति षट घटि गतरेषा
तिहि समय ध्यान थिर चित्त कियो देषन साहिब को दुरग
तजि पाप आप नृप लषपति सुमन सिधाये सुभ सरग ॥ ३६ ॥

अन्त–

यह समयौ लषधीर कौ सुनै पढ़ै सु ग्यांन
सकल मनोरथ सिद्धि ह्वै परम सुधा रस पांन ॥ ६० ॥

इति श्री भट्टारक श्री १०८ श्री श्री कुँअर–कुसल सूरी कृत श्री महाराउ लषपति स्वर्ग प्राप्ति समय संपूर्णम् ॥

लिखितं पं० श्री ज्ञान कूसलजी गणि तत्शिष्य पं० कीर्ति कुशल गणि लिखिता ग्रांम श्री मानकूआ मध्ये ।

सम्वत् १८६८ ना वर्षे शाके १७३४ ना प्रवर्त्तमाने मासोत्तम मासे प्रथम माधव मासे शुक्ल पक्षे तृतीया तिथौ भौमवासरे इदं महाराउ–लषपति जी ना मरसीया संपूर्णों भवता । श्री कच्छ देसे ।

विशेष विवरण—

महाराउ लषपति के साथ जो १५ सतियां हुई थी उनका वर्णन इस प्रकार है ।

कवित्त छप्पय ।

राउ लषपति सरग सिधाये पीछे सुभ दिल पन्द्रह बाई,
प्रथम जदूपति करमह दिव्य जल सद्दाबाई
सरस राज बाई हुवरूरी निंदू बाई निपुन पुहप बाई गुन पूरी,
राधा रूलाछि बाई सुरुचि बाई हीर वषांनियैं
सातौं सतीनि सिंगार करि पिय पैं चली प्रमांनियैं ॥ ५० ॥
बाई देव विनीत आस बाई अति ओपी
पद्मा बाई पेषि रूचि सु प्रीतम सौं रोपी
अफुआँ बाई आप जोति बहु जेठी बाई
रंभा बाई रूचिर मेघ बाई मन भाई

रूपाँ सरूप रति सीरची धनी प्रीति चित मैं धरि

सत सील सु जस करि बैसु थिर कठिन काम मन तैं करिय ॥ ५१ ॥

प्रति परिचय-पत्र ६ साइज ८। ×४ प्रति पृ० पं० १३ प्रति पं० अ० ३८

[राजस्थान पुरातत्व मंदिर-जयपुर]

(४) महारावल मूलराज समुद्र बद्ध काव्य वचनिका

रचयिता-शिवचन्द्र। सं० १८५१ काती वदि ३, सोजत

आदि-

अथ यादव वंश गगनांगण वासर मणि श्रमन्या धवावतार राणराजेश्वर श्रीमान महाराजाधिराज महारावल श्री १०८ श्री मूलराज जिज्जगन्मण्डल विसारि सकल कला कलित ललित विमल शरच्चंद्र चंद्रिकानुकारि यशो वर्णन मय समुद्र बंध समुद्भव चतुर्दश रत्ननानि तद्बोधकानिच विलख्यंते।

[१ संस्कृत श्लोक है तदनंतर]

परिहां-

धरियै आसा एन खरी महाराज की, और न करियै चाह कहो किमकाजरी साहिब पूरणहार जहां-तहां पूरि है, द्यै गो चून अचिंत्यौ चिंता चूरि है।

फिर कवित्त, दोहा, फारसी वेत, संस्कृत, प्राकृत श्लोक आदि १४ ..... है

अथ सिंधु बंध दोध का नायर्थ

शुभाकार कौशिक त्रिदिव, अंतरिछ दिनकार।

महाराज इम धर तपौ मूलराज छत्र धार

अरुण अर्थ लेशः- जैसे शुभाकार कहि है भलो है आकार जिनकौ एसै कौशिक कहियें इंद्रसो त्रिदिव क. स्वर्ग मैं प्रतपै पुनः दिनकार अंतरिछ क. जितनै तांइ सूर्य आकाश में तपै महा. क. इन रीतै छत्र के धरनहार महाराज श्री मूलराज धर तपौ क. पृथ्वी विषै प्रतपौ ॥ १ ॥

अन्त-

वरस वसति कर करन नाग छिति कार्तिक वदि दल तृतीया तर निजवार।

गच्छ खरतर तर गुन निम्मल सुभ पाठक पद धार।

सकल बादीं शिरोमणि रूपचंद्र गुरुराज तासु शिष्य वरगति
बहु शास्त्र सार बिंदु पदम सीसु गुरु अनुग्रह शिरधरी ।
मुनि शंभुराम नृप गुन कलित जलधिबंध रचना करी ॥ २ ॥

दोधक–

विबुध वृंद आनंद पद, सीमित नगर मभ्कार ।
सिद्ध भयौ ए सुमनं जन, सुखद सिंधु बंधसार ॥ ३ ॥

इति प्रशिस्ति ॥ इति श्री राजराजेश्वर श्री मन्महाराजाधिराज महारावल-जि छी श्री १०८ श्री मूलराज जितां गुण वर्णन मय जलधिबंध दोधकार्थाधिकारो लिखितः प्राज्ञ शंभुराम मुनिना सधद्विधु शर सिद्धि रसा प्रमिते मधु मास स वलक्ष पक्ष पंचमी तिथौ यामिनी जानि तनय वासरे श्री ज्जेसलमेरू दुर्गे ॥

प्रति–पत्र वैद्यवर बालचंद्रयति संग्रह चित्तौड़, प्रति लिपि हमारे संग्रह में ।

वि०– इसके बाद ही इच्छा लिपि स्वरूप लिखा है । देखें नागरी प्रचारिणी पत्रिका वर्ष···अंक

(६) रतनरासो–रचयिता–कुंभकरन–

आदि–

तेजपुंज तले विलंद दिल पर अजब करार ।
खतम रेफ हिम्मत वलीय अल्लहु पर इकतार ॥ १ ॥
अजबलाल इक बेवहा, हिन्दु जौहर अजूब ।
इसक इवक किम्मत पदा हिम्मत पै महबूब ॥ २ ॥
चातुर चकता चक्रवतीय चित्र गिय खूमान ।
कमंध वंस कूरमवली जादव अह चहुवान ॥ ३ ॥
ब्रह्म भाख गिर्वान वत चारन चर चतुरंग ।
भवि भैव्यह वानिप निकट गिय गांधर्व उमंग ॥ ४ ॥
पैं चसुठ्ठिय पारसीय, पसतौ अरब प्रबंध ।
राजनीति उक्त सुरिख, कापन चित्रन बंध ॥ ५ ॥

इति श्री कुंभकरन विरचिते काव्य अष्टक रतना करै प्रश्नोत्तर कथन तृतीयोध्याय ।

(अलब्ध प्रतियों में पहले के २ अध्याय नहीं है एवं तीसरे के ४७ वे पद्य से प्रारंभ होता है। ४७ वे पद्य को प्रतिलिपि में प्रथमांक दिया है)।

इसके पश्चात् कवि वंश का वर्णन विस्तार से पर अस्पष्टसा है—

अंत-

लाज खिते ति कुंकम चढाय सिवभक्त रतन रासो पढ़ाय ।
उज्जेन छेत्र सिप्रुरा महान् श्री ज्योतिर्लिंग महकाल ध्यान ॥

× × ×

कहि कुंभकरन वर्नन विमल रामनाम असरन सरन ।

× × ×

रासो अगाध सिवकर रतन कुम्भकरन कवि इन्द्र ।
कित श्रृंगार सम इच्छपाक छत्र दटा सिध आनंद ।
धुवति मनसाहिद अवन सुबहान सुखमल प्रपूर रब ।
अवदिन पर फलक तत्र पुस्तक प्रसस्थि धुव ॥
दिज नृप कवि भृत तिलकन अति परिगह गछाह मन ।
चित चमत्कार सस्फुट वचन अस्त्र सस्त्र चतुर्थ धृति ॥
सिव रतन सिध रासो सरस अस विधान सुन परि नृपति।

इति श्री कवि कुम्भकरन सतपुरीमध्ये मुकुटमणि अवतिका नाम क्षेत्रे श्रीसि-पुरह महासरिजतरे श्रीसिवाश्रीगंगाजी सहिते श्रीज्योतिर्लिंग महकालेश्वर सविध जुध उभय साह अवरंग मुरारि जवनेंद्र सम महाभारते महाराजाधिराज जसवंत सिंघ नमे अनुजरतन सेना धवते अचण्ड इंद्र जुगले तत्र मुक्तिद्वार सुकहित कपाटे अनेक सुभट सपूत रविमण्डल भेदनेक वीरोछवे तत्र रतन संघ सिवस्वरूप प्राप्ते कैलासवासे तत्र महमा वर्णनो नाम प्रस्तावः ॥ इति श्रीरतनरासो संपूर्णम्।

प्रति (१) पृ १५१

प्रति (२) बद्रीप्रसादजी साकरिया की दी हुई प्रतिलिपि जोधपुर से गई

प्रति (३) बीकानेर के मानधातासिंहजी के मारफत गाहा

प्रति (४) राजस्थान रिचर्स इस्टिट्यूट, कलकत्ता।

(१-२-३ प्रति-श्रीमहाराजकुमार श्रीरघुबीरसिंहजी सीतामऊ की रघुबीर लाईब्रेरी स्थित २ पुरानी शैली की १ प्रेस कापी)।

(७) **समुद्र बद्ध कवित्त** । रचयिता–ज्ञानसार ।

आदि–

सारद श्रीधर समर कैं, इष्ट देव गुरु राय ।
वर्णन श्री परताव कौ, करिहुं जुक्ति बनाय ॥ १ ॥

अन्त–

आशीर्वाद–

श्री संकाणी दौर, कमल में छिप गई ।
रवि शशि दोतु भाजके, नभ मंडल मही ॥
सिंघ सके वनवासे, जीय देही वद्यौ ।
श्री परतापसिंह जी, यौं सो युग चिर चिर जयौ ॥ ५ ॥

इति चतुर्दश रत्न गर्भित समुद्र बद्ध चित्रम् । कृतिरियं ज्ञानसारस्य श्रीमज्जय-पुरे वरे पुरे ॥ श्री ॥

विशेष–इस पर राजस्थानी में बनाई हुई स्वोपज्ञ वचनिका भी है । जयपुर नरेश प्रतापसिंह का मुख्य वर्णन है ।

[स्थान–प्रतिलिपि–अभय जैन ग्रंथालय]

नगरादि वर्णन गजलें–

(१) **जैसलमेर गजल** । कल्याण सं० १८२२ वें सु०

आदि–

अथ गजल गढ श्री जेसलमेर री लिख्यते

दूहा—

सरसत माता समरि ने, गाइने गणपत्ति ।
आवे जे समर्यां अवस, अवरल वाण उकत्ति ॥ १ ॥
जडे सालम हींदुवांणी सदा, आलम सिर जेसांण ।
नवहि खंडे मालम अनड, जालमगढ जेसांण ॥

अथ गजल

जालम गढ जेसांणक, हे जिहां सदा हिंदुवाणाक ।
पर... बंध सोम पहाड़, उपर दुरंग हे ओनाड़ ॥ १ ॥

लेखा बिना गढ लंका क, सिर नाह सारु की संसाक ।
असा भुरज सत उतंग, सोवनमेर गिर को शृंग ॥ २ ॥
पेहली भीत चीत प्रकार, त्रेवट कोट त्रिकुटा कार ।
जालम कामगढ जुने क, चावी टीप नहीं चुने क ॥ ३ ॥

× × ×

वैरीसाल तिहां वंकाक, शाहि को करे अर शंका क ॥ ५ ॥

अंत-

वरणे चोतरफ वाखांण, पांच कोश की परिमांण ।
संवत अठारसै बावीस, सुद वैसाख सुभ दीसे क ॥१२८॥
भाषा गजल की भाखी क, अपणी उकत परि आखीक ।
वाचत पढत जण बाखांण, कीजै प्रभु नित कल्यांण ॥१२९॥

इति श्री जेसलमेर री गजल संपूर्ण ।

लिखतं स देवीचंद सं०१८५० मिगसर वदी ७, सा निहालचंदजी पुत्र अनोपचंदजी लघुभ्रात मयाचंद पठनार्थं । श्रावकं वाचे तेहने धर्म ध्यान छै । वाचे विचारे अमने पिण याद करज्यो ।

[प्रतिलिपि- सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट-बदरीप्रसाद साकरिया]

गुटका पत्र ११, जैसलमेर साह धनपतसिंहजी के वास ।

(२) नारी गजल-रचयिता-महिमा समुद्र

आदि-

देखि कामिनी इक खूब, उनके अधिकइ हे असलूब ।
कहीयइ कहसी तसुतारीफ, देखइ मगन हो यह रीफ ॥ १ ॥
जाणे अपछरा मसहूर, चमकइ सूर नवसो नूर ।
महके स्वास वास कपूर, पइदावार सम्मी हूर ॥ २ ॥

मध्य-

पतिसाही सहर मुलतान, दिसे जरकां का थांन ।
कायम राजा साहजहांन, उग्या जाणे सम्मो भाण ॥ ३४ ॥

अन्त-

कामिण जात की सोनार, अइसी का न देखी नार ।
ताकी सयल सोभा सार, कहतां को न पावइ पार ॥
महिमासमुद्र मुनि इल्लोल, कीधा कछु कवि कल्लोल ।
सुणकद सुख पावइ छयल, हीं हीं हसइ मूरिख बयल ॥ ४० ॥
सुरता लहइ अइशो भेदं, विप्र जांमइ वेद ।
मोती लाल विणसा, जाणइं कोण किम तिसा ॥
इसकी यह है तारीफ, जडिसइ मेह हरीफ हरीफ ।
महिमासमुद्र कह विचार, सुणतां सदा सुख प्यार ॥ ४२ ॥

इति गजल संपूर्ण

गुटका-लोका गच्छ उपासरा जैसलमेर

प्रतिलिपि-सार्दूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट

(३) **बीकानेर गजल ।** पद्य १६१, लालचंद, सं० जेठसुदि ७ रविवार ।

आदि-

प्रारम्भ के तीन पत्र नहीं मिलने से ६०, पद्य नहीं मिले ।

मध्य

…ड दाला क छैला छत्र छोगाला क ॥६१॥
सखरे हाट बैठे साह………………………………
मोती किलंगी मालाक, वागे जरकसी वालाक ।
लाखूं हुंडियां ल्यावे क, जनसां माल लेजावे क ॥६२॥

× × ×

अन्त-

बीजा सहर है बहुते क, ऐसी बाग है केते क ।
ईश्वर संभु का अवतार, पुष्कर कपिल है निरधार ॥१८६॥

दूहा-

संमत अठार अडतीस में, वीकानेर मझार ।
जेठ सुकल सप्तम दिने, साचो सूरजवार ॥१६०॥
लालचंद की लील सूं, कही खेत धर हेत ।
पढै गुणे जे प्रेम धर, जे पामै लछ जैत ॥१६१॥

आचार्य सबला ग्रहे पुत्र लिखतं आचार्य सूरतराम ।।श्री।।श्री।।

(प्रति- जैसलमेर लोंकागच्छ भंडार)

प्रतिलिपि सं० २००७ आश्विन शु०१४, बद्रीप्रसाद साकरिया ।

सुन्दरी गजल । रचयिता-जटमल नाहर ।

आदि-

सुंदर रूप गाढीक, देखी बाग मूं ठाढीकि ।
सखियां वीस दस है साथ, जाके रंग राते हाथ ॥ १ ॥
निरमल नीर सूं नाहीक, डंडीया लाल है लाहीक ।
ओढण सबे सालू लाल, चल है मराल कैसी चाल ॥ २ ॥

अन्त-

ऐसे वचन त्रिय कहती कि अपनें शील में रहती कि जटमल नजर में आइक,

सुंदर तुझ है शाबास, पूजउ सकल तेरी आश ।
अपने कंत सूं रस रंग, कर तूं वरस सहस अभंग ॥

इति सुन्दरी गजल ।

लेखनकाल-

संवत् १७७५ वर्षे वैशाख सुदी १४ दिने लिखितं पं० सुख हेम मुनिना श्री लूणसर मध्ये शुभं भूयात् श्री ।

प्रति-पत्र-१० । अन्त पत्र में (पूर्व पत्रों में जटमल रचित गोरा बादल बात व लाहौर गजलादि है) पंक्ति-१६ । अक्षर-४० । साइज-१० × ४।।

[अभय जैन ग्रंथालय]

(६) इन्द्रजाल शकुन, शालिहोत, सतरंज खेल, काम शास्त्र

(१) अद्भूत विलास । रचयिता-मीरां सेदन गूहर । रचना काल-१६६५ । पद्य ११८ (बीच में बड़े बड़े पद्य)

अथ अद्भुत विलास ग्रन्थ लिख्यते-

आदि-

दूहा-

जैसे जैसे पुष्प गंध, हरेहि जु तिल को तेल ॥
तैसे तैसे वास गुन, कहियो वास फुलेल ॥ १ ॥

चौपई-

कोई बहुत अचरिज दिखलावै, कोई नाटक चेटक ल्यावै ।
कोई इन्द्रजाल ले आया, कोई कायाकल्प दिखायै ॥ २ ॥

× × × ×

अचरिज अचरिज खोल मिल, ए कोतिकदा ग्यांन ।
अेक अेक वरनन करै, रीभत चतुर सुजांन ॥ ६ ॥

× × × ×

संवत सोरैसै गनै, अरु पचानवै राख ।
एह अंक गन लीजियो, वेद भेद सब भाख ॥ १ ॥

× × × ×

अन्त-

त्रिन ही विदा बूढापा भागै, दौरि बालपन आवै ।
अैसी जुगत सिद्ध को जानै, करै सिद्ध सो करियै ।
कायाकल्प और बल बाधै, जामैं सब सुख करियौ ।
जब लग जीवै सहज सुख सोवै, जो इह मन वै करियै ॥११॥

इति श्री मीरां सेदन गूहर कृत अद्भुत विलास ।

लेखनकाल-संवत १६११ मिति माह सुद ४ ग्रंथाग्रंथ ४३०॥

प्रति-पत्र १५ पंक्ति-१३ । अक्षर-३५ साइज ६॥ × ५

स्थान-महोपाध्याय रामलालजी संग्रह । बीकानेर प्रतिलिपि अभय जैन-ग्रंथालय ।

विशेष- इसमें वशीकरण, अदृष्टि करन, पूर्व जन्म दर्शन एवं स्तंभन बन्धन आदि अद्भुत प्रयोगों का संग्रह है ।

(२) मदन विनोद—रचयिता—कविजान रचना काल, संवत् १६६० कार्तिक शुक्ल २, पद्य ५६५

अथ मदनविनोद जांन को कह्यौ, कोकशास्त्र लिख्यते—

आदि—

दोहा—

नांम निरंजन लीजियै, मंजन रसना होत ।
सब कछु सूझै ग्यान गुन, घट में उपजै जोत ॥ १ ॥
कहा रस रीत सुख, सिरजै सिरजनहार ।
हिलन मिलन खेलन हसन, रहसनि उमगन प्यार ॥ २ ॥

बखांन हजरतजू कौ—

इजै सुमिरौं नाम नबी को सकल सिष्ट को मूल ।
मिंत इलाह पनाह जग, हजरत साहि रसूल ॥ ३ ॥
साहिजहां जुग जुग जियौ, साहि के मन साहि ।
सप्त दीप सेवा करै, रहीन कुछ परवाह ॥ ४ ॥
मोद कमोदनि चंदतै, कंवल पतंग प्रमोद ।
रसिकन कै मन खिलन कौ, कीनो मदन विनोद ॥ ५ ॥

अन्त—

संवत सोरह स निवै, कातिक सुदी तिथि दूज ।
ग्रंथ करयो यह जांन कवि, रसिक गुरु करि पूज ॥

इति श्री कोकशास्त्र मतिकृत रसिक ग्रंथ कविजांन कृत

लेखनकाल—सं० १७४३ रा आसाढ़ सुदी १४ दिने लिखतं चूडा महिधर वास मेड़तो पोथी महिधर री छै ।

पत्र—२७ पंक्ति २६ अक्षर २०, साइज ६ × १०

वि० प्रति किनारों पर से कटी हुई है ।

[स्थान—अनूप संस्कृत लाइब्रेरी]

सतरंज पर

(३) शतरंजिनी—रचयिता मकरंद—

आदि— ×× ×× ××

मध्य—

बुधिबल कौतुक देखि के, कियो बहुत सनमान ।
राजकाज लज लाजकौ दिय अर्द्धासन पान ॥ ५७५ ॥
उतपति कही सतरंज की, बुद्धिबल जाको नाम ।
कू (कू!) तलज लाख विचारि सो, करि मकरंद प्रमान ॥ ७७६ ॥
मनसूबा याके रच्यौ पोथी जुदी बनाइ ।
देखैं सुनैं खिलार जौ, लिखे लेई चितुलाइ ॥ ५७७ ॥

सोरठा—

चाल कही बनाइ, बुधिबल मुहरिनि की सबै ।
बुधिबल बड़ी लड़ाइ जो न आइ संदेह मन ॥ ५७८ ॥
बुधिबल मुहरा चलन को, जानत जगत सुभाइ ।
मैं न जुदे करि कै धरै, बहुरि ग्रन्थ बढि जाइ ॥ ५७९ ॥
मनसूबा पोथी निरखि, कह्यौ दत्त बहु बार ।
अब कबीर सतरंज को, कीजौ कछु विचार ॥ ५८० ॥
कठिन खेल शतरंज को, जिहि कबीर है नाम ।
नाम रूप जाके बनें, मुहरा अति अभिराम ॥ ५८१ ॥
या कबीर शतरंज को, करहु बंधेजु विचारि ।
मैं बहुते निसौं बहु कह्यौ, कहू न दयो सुधारि ॥ ५८२ ॥
तातैं उतपति भेद सौं, प्रगट कहौं समुझाइ ।
भूलैं त्रिस हैं चालि के, पोथी लेइ पढाई ॥ ५८३ ॥
बुधिबल किया लज लाज चहुंदिसि भयो प्रसिद्ध सो ।
अफलातून समाज पहुंचे खेल खिलारते ॥ ५८४ ॥
अफलातू चित चिंत किय खेल कियौ बहु मैन ।
धनि लज लाज सुदेस धनि, बुधिबल धनि मनि बैन ॥ ५८५ ॥

× × × ×

कथा वारतावाद विधि, औ उपहास नसाइ ।
खेल समै मकरंद कहि, मादक द्रव्य न खाइ ॥ ७२० ॥

आदि-

यौं ही मनु आसा धरै लरै डरै क्यौं सोई ।
बुध जन साहस सिद्धि कहहि करता करै सो होई ॥ ४०७ ॥

× × ×

अन्त-

ध्यान धारना अनहदवानी, कारन मन ठहरैयै ।
या प्रकार जो बुधिबल खेलै, तो कछु अलख लखैये ॥ ७३८ ॥
जो अभ्यास करै बुधिबल मैं तो क...............

प्रति-पत्र २५ से ५२ पं० ६. अ० २४ साइज १८ × ६॥

[स्थान अनूप संस्कृत पुस्तकालय]

(४) शालीहोत्र (अश्वविनोद) रचयिता-चेतनचंद सं० १८५१
(सैंगर वंशी कुशलसिंह के लिए ह०) पद्य २६५ लगभग

अथ घोड़े का इलाज ।

दोहा-

नमो निरंजन देवगुरु, मारतंड ब्रह्मंड ।
रोग हरन आनक करत, सुखदायक जग पिंड ॥ १ ॥
श्रीमहाराजधिराज गुरु, सेंगर वंश नरेश ।
गुण गाहक गुणिजनन के, जगत विदित कुसलेश ॥ २ ॥
जाके नाम प्रताप को, चांहत जगत उदोत ।
नर नारी सुख मुख कहै, कुशल कुशल कुसगोत ॥ ३ ॥
चित चातुर चख चातुरी, मुख चातुर सुख देन ।
कवि कोविद वरनत रहत, सुख मुख पावत चैन ॥ ४ ॥
वाजी सो राजी रहे ताजी सुभट समर्थ ।
रत्न सूरे पूरे पुरुष, लहे कामना अर्थ ॥ ५ ॥

वासायन से सरन गहि, ये सुख पायो वृन्द ।
सालहोत्र मह देखि के, बरनत चेतनचंद ॥ ६ ॥
श्री कुशलेश नरेश हित, नित चित चाह ......
अश्व बिनोदो ग्रंथ यह, सार विचार कह्यो ॥ ७ ॥
मूल मानसार बातु मधु पत्र सुभग कर साज ।
सुवन फूल फलियों सदा, कुशलसिंह महाराज ॥ ८ ॥

अथ साल होत्र जथामति बरणन–

दोहा–

विजय करन अरु जय करन, गावत चारों वेद ।
नकल कहैं सहदेव सो, रबि बाहन को भेद ॥ ६ ॥

बुरहा फाटे गौपानाथ कानकुबीज मे भये सनाथ ।
तिनके सुत चायो अधिकाई इंद्रजित लच्छम जदूराई ।
चौथे ताराचंद कहायो, जहि यह अश्व विनोद बनायो ।
हरिपद चित नाम की आसा, सालहोत्र वंदे पर कासा ।
कुसलसिंह महाराज अनूप, चिरंजीवो भूपन के भूप ॥

सोरठा–

यह ग्रन्थ सुखसार, जिनके हेतु होमे मेलेउ सुधारि ।
विचारिचं चंदतन कह्यो तथा ।
सम्वत सोलह से अधिक चार चोगने ज्ञान ।
ग्रन्थ कह्यो कुसलेस हि, नर दोक श्रीभगवान ।
मास फालगुण सुकल पक्खि, दुतिया शुभ तिथि नाथ ।
चंदन चंदन सुभाखि अत गुरु को कियौ प्रनाम ॥
(स)त दस और आठ सो, ईक्यावन पै स्यार ।
फागुन शुकल त्रयोदसि, लिखी वार सोमवार ॥
अश्व विनोद ग्रन्थ यह, सालहोत्र सुरताल ।
प्रति देखी वो लिखी मे, खोटि नहिं नंदलाल ॥

२६ पं० १० अ० ३०

अथ अैब घोड़ा के सोरठा पत्र ३ और कुल पत्र २६

ले-इति साल होत्र संपूर्ण घोड़ा को। लिपिकर्त वैष्णव जानकीदास। क्रस्नगढ़ मध्ये। सं० १९६२ मती श्रावण सुद ११ बुधवासरे। अशुद्ध लिखित

[कु'० मोतीचंद खजानची संग्रह]

विज्ञान

(५) शुकनावली– संतीदास।

आदि-

गद्य-

महावीर को ध्याइके प्रणमुं सरसति मात।
गनपति नित प्रति जे करें, देव बुद्धि विरचात ॥ १ ॥
गुरुचरणन को वंदना, कीजै दीजै दान।
इस विध होनी जावतां, पाइ जइ सन्मान ॥ २ ॥
रीतें हाथ न जाइये, गुरु देवौं के पास।
अरु विशेष पृच्छा विषे मुद्रा श्रीफल तास ॥ ३ ॥
स्वस्ति चित्त सौं बैठिकै बोलो मधुरी वानि।
पीछे प्रश्नोत्तर सुणौ, पासा केवल ग्यानि ॥ ४ ॥
अवंपद अत्तर चार यह लिखि पासौ चौफेर।
वार तीत जपि मंत्रकौ पीछे पासा गेर ॥ ५ ॥

अहो पृछक सुण हुं सुण तुह्मारे ताइ एक तो बड़ा बल परमेश्वर का है, परन्तु तुह्मारे शत्रु बहुत हैं। अरु तुम जानते हो जो मुझ एकले सै एते शत्रु विस भांति त्तय हुवैंगे। सो सब ही शत्रु अकस्मात त्तय हुवैंगे। अरु ज्यो कछु मन बीच नीत बांधी है, सो निहचै सेती हयिगो। चित चिंता मिटेगी।

अन्त-

\+ \+ \+

श्रीपाठक जगि प्रकट अति सुथाणसिंघ के गुण।
सतीदास पंडित करी, सुकनीति ससनेह ॥

ले० संवत् १६१३ कातिक सुदी १३ सोमवार।
लिखितं रविदिन जैसलमैर मध्ये-
इति श्री शुकनावली सतीदास पंडितकृत संपूर्णम्।
लिपिकृता सांज समये राव रणजीतसिंघ रा०
प्रति-पत्र ११, पं०१३, अ०४०,

[स्थान- मोतीचंदजी खजानची संग्रह]

(१०) संस्कृत ग्रन्थों की भाषा टीका

लघुस्तवन भाषा टीका- रचयिता-रूपचंद्र सं० १७६८ माघ वदी २ सोमवार

आदि-

दूहा-

जाकी सगति प्रभावतैं, भयौ विश्व सु विकास।
सोई पदारथ चित धरौं, ध्यान लीन ह्वै तास॥ १॥

गद्यटीका-"जो त्रिपुरा" भगवती 'ऐन्द्रस्येव, शरासनस्य' कहतैं-इन्द्र है स्वामी जाकौ एसो शरासन कहते धनुष। इतनैं वर्षाऋतु को धनुष, ताकी जो प्रभा कहतैं ज्योति तरकौं "मध्ये ललाटं दधति' कहतैं ललारमध्य विषै धारती है, इतने इन्द्रधनुषकीसी पांचवर्णी ज्योति मेरे दोनों भौंहां विधि धरि रही है। ए तात्पर्य या पद में एकार बीज कह्यौ॥"

अन्त-

दूहा-

सतरै सै अट्ठाणुवै माघ कृष्ण पक्ष बीज।
सोमवार ए वचनका पूरण लिखी स बीज॥
गच्छ खरतर कुल खेमके, दयासिंघ के सीस।
रूपचंद कीन्हें सुगम, स्तोत्र काव्य इकईस॥

लि-संवत् १६५५ मीगसर शुक्ल पख्य पूर्णिमा १५ बुद्धिवारेण श्री बीकानेर मध्ये। लिखी पं० वासदेव कमला गछे लिखितं लघुस्तोत्रम्-श्रीरस्तु
प्रतिलिपि-अभय जैन ग्रन्थालय
विशेष-पृथ्वीधराचार्य रचित सुप्रसिद्ध त्रिपुरास्तोत्रकी भाषाटीका है।